पाकिस्तान

[तीन अंकों में एक नाटक]

•

गोविन्ददास

किताब महल
इलाहाबाद

विषय सूची

मुख्यपात्र

अमरनाथ

महफ़ूज़ख़ाँ

शांतिप्रिय

पीरबख्श

दुर्गा

जहाँनारा

गंगाराम (तोता)

रूबी (कुतिया)

उपक्रम

स्थान—दिल्ली में हुमायूँ के मक़बरे के बग़ीचे का एक हिस्सा

समय—सन्ध्या

[एक ओर कुछ दूर मक़बरे की गुंबद और उसके नीचे की इमारत का कुछ भाग दिखायी पड़ता है। बाग़ के इस हिस्से में एक बेंच पर जहाँनारा और शांतिप्रिय बैठे हुए हैं। जहाँनारा की उम्र २३-२४ साल के क़रीब है। वह गेहुएँ रंग की ऊँची-पूरी सुन्दर युवती है। रेशमी साड़ी और शलूका पहने है। पैरों में दिल्ली के कामदार जूते हैं। दाहिने हाथ में सोने की कुछ चूड़ियाँ और बायें हाथ में घड़ी है। इनके सिवा बदन पर और कोई गहने नहीं हैं। शांतिप्रिय की अवस्था १७-१८ वर्ष के लगभग है। वह गौर वर्ण, ऊँचा-पूरा, पर ज़रा दुबला, सुन्दर युवक है। सिर पर आजकल के ढंग से कटे हुए बाल लहरा रहे हैं। ऊपर के ओंठ पर रेख निकल रही है। वह आधुनिक ढंग का सूट पहने है, कालर और टाई भी लगाये है। इस बेंच के चारों तरफ़ इन दोनों के सिवा और कोई दिखायी नहीं देता।]

शांतिप्रिय—आवर लाइफ़ इज़ ए रैग्युलर फ़ीस्ट।

जहाँनारा—हाँ, बहुत. . . .बहुत दिन के बाद वह. . . .वह रैग्युलर फ़ीस्ट हो सकी। जिस तरह मेरे दिल्ली आने के बहुत दिन बाद तुम दिल्ली आये हो, उसी तरह मेरे दुनिया में आने के बहुत दिन बाद तुम दुनिया में भी आये थे। **(कुछ रुककर)** सात साल की थी मैं, जब तुम पैदा हुए। साल क्या होती है, उसमें कितने महीने और दिन, यह मैं उस वक़्त न जानती थी, पर सात साल की हूँ, यह मुझे मालूम था।

शांतिप्रिय—अम्मा के बार-बार कहने से ही न, दीदी, कि अब जहाँनारा पाँच साल की हुई, अब जहाँनारा छै साल की हुई, अब जहाँनारा सात साल की हुई ?

जहाँनारा—और क्या ? लेकिन आठवें साल से यह बात न रही।

शांतिप्रिय—आठवें साल से तुम समझने लगीं कि साल का क्या मतलब है ?

जहाँनारा—हाँ, क्योंकि उस वक़्त तुम एक साल के हो गये थे; जिस तरह अम्मा मेरी उम्र की सालें गिनती थीं उसी तरह मैंने तुम्हारी उम्र की सालें गिनना शुरू किया।

शांतिप्रिय—दीदी, तुम्हें मेरी पैदाइश की कितनी अच्छी तरह याद है !

जहाँनारा—उस वक़्त की और उसके बाद की मुझे सभी बातें याद हों, यह नहीं, लेकिन बच्चों का दिल शायद ऐसा होता है कि कुछ बातें वे कभी नहीं भूल सकते। तुम्हारी पैदाइश भी ऐसी ही बातों में से एक थी।

शांतिप्रिय—तुम्हारे लिए तो ज़रूर ही।

जहाँनारा—एक बड़ी भीड़ आदमियों की तुम्हारे मकान के दीवानख़ाने में इकट्ठा थी और औरतों की जनानख़ाने में। तुम्हारी माँ को तुम्हारे होने में बहुत तकलीफ़ हुई थी, इसीलिए यह भीड़ जमा हो गयी थी। हम लोग तुम्हारे पड़ोसी ठहरे, और फिर तुम्हारे हमारे इतने अच्छे खानदानी मेलजोल !

शांतिप्रिय—ज़रूर।

जहाँनारा—तब हम कैसे वहाँ न पहुँचते ? अब्बा थे दीवानख़ाने में और अम्मा के साथ मैं जनानख़ाने में; जहाँ तुम पैदा हुए, वहाँ, अम्मा थीं, मैं तो वहाँ जाने न पायी थी; दूसरे बच्चों के साथ मैं सहन में थी।

शांतिप्रिय—दूसरे बच्चों के साथ खेलती होंगी ?

जहाँनारा—और क्या; उस उम्र में भी फ़िक्र करती ? ख़ुशी की कैसी लहर उठी, औरतों की उस भीड़ में, जब थाली बजाकर तुम्हारी पैदाइश की ख़बर दी गयी। भइया, थाली की वह आवाज़ कई दफ़ा अब भी मेरे कानों में गूँज उठती है।

शांतिप्रिय—कितनी बार, दीदी, तुमने मेरी पैदाइश का यह हाल मुझे सुनाया है ?

जहाँनारा—पर दिल्ली में इसके पहले कभी सुनाया था ?

शांतिप्रिय—**(मुस्कराकर)** दिल्ली में कहाँ से सुनातीं ? दिल्ली तो मैं आज ही पहुँचा हूँ ।

जहाँनारा—इसीलिए तो आज फिर यह सब याद आ गया । जिसकी पैदाइश देखी, जिसे पलने में झुलाया, जिसे खिलौनों से खिलाया, जिसे अलिफ़, बे सिखाया.......

शांतिप्रिय—और जिसके साथ खुद खेलीं, पढ़ी-लिखीं......

जहाँनारा—ठीक; उसी को आज हिन्दोस्तान की इस राजधानी दिल्ली में कालेज में भरती कराकर घूमने निकली हूँ । क्या आज का दिन ऐसा नहीं है, भइया, कि सारी की सारी पुरानी बातें बतौर सिनेमा के फ़िल्म के आँखों के सामने से घूम जायँ ?

शांतिप्रिय—ज़रूर है; और उस दीदी के लिए तो ज़रूर ही, जिसके दिल में दीदी और माँ दोनों की ही मुहब्बत है । **(कुछ रुककर)** दीदी, ऐसे ही मौक़ों पर तो तुम्हें मेरी यह तमाम तवारीख़ याद आ जाती है ।

जहाँनारा—**(विचार करते हुए)** हाँ, ऐसे ही मौक़ों पर । जब तुम्हें पहले-पहल खीर चटायी गयी, जब तुम्हारी तख़्ती-ख़्वानी हुई, जब तुम स्कूल में भरती हुए, और आज, जब तुम कालेज में आये हो, इनमें से कोई भी ऐसा मौक़ा नहीं है, जब मुझे तुम्हारी ये सारी तवारीख़ याद न आयी हो ।

शांतिप्रिय—और मेरी जिस-जिस सालगिरह पर तुम मेरे साथ रहीं, उस-उस दिन भी । तुम्हारे दिल्ली पढ़ने को आने के बाद मेरी सालगिरह की मुबारिकबादियों की जो चिट्ठियाँ सौगातों के साथ तुमने भेजी हैं, उनमें भी इन्हीं बातों का ज़िक्र है ।

जहाँनारा—**(विचारते हुए)** मैंने कहा न, भइया, बचपन की कुछ बातें कभी नहीं भूली जातीं । **(कुछ रुककर)** और....और फिर

अगर बचपन के बाद की ज़िन्दगी भी उसीसे भरी हो, जिसे बचपन में चाहा हो, तब भला वह बातें कैसे भूली जा सकती हैं ?

शांतिप्रिय—(विचारते हुए) हाँ, हाँ, शायद इसीलिए मैं भी अपने बचपन की एक बात नहीं भूला हूँ।

जहाँनारा—कौन-सी ?

शांतिप्रिय—तुम्हारे गाने की यह सतरें—'अल्लाह ! बख्शना यह.....'

जहाँनारा—(लंबी साँस लेकर बीच ही में).उफ़ ! ....इस..... इस गाने की याद न दिलाओ, भइया।

शांतिप्रिय—क्यों, दीदी ? इतनी गहरी साँस के साथ यह फ़िक़रा क्यों ?

जहाँनारा—भइया, इस गाने की याद के साथ ही एक दर्दनाक वाक़या याद आ जाता है।

शांतिप्रिय—कौन-सा, दीदी ?

जहाँनारा—अब तक कभी न कहा था, पर आज बताती हूँ। यह गाना पहली मर्तबा गाया था मैंने उस वक़्त जब तुम एक दफ़ा बहुत बीमार हो गये थे।

शांतिप्रिय—अच्छा।

जहाँनारा—एक रात को कैसी खौफ़नाक हो गयी थी तुम्हारी हालत ! ....उफ़ ! ....वह रात ! ....उस रात को कितनी वार, कितनी आरज़ू, कितनी मिन्नत के साथ इसे गाकर किस तरह मैंने परवरदिगार से इल्तजा की थी कि उसके जनाब में....अगर किसी नन्हीं-सी जान की ही जरूरत है, तो तुम्हारी जान के बदले मेरी जान हाज़िर है।

शांतिप्रिय—(हुमायूं के मक़बरे की ओर देखकर) तो तुम मुझ पर सदक़े होना चाहती थीं, जिस तरह हुमायूं पर बाबर हुआ था। **(कुछ रुककर)** कितना....कितना चाहती थीं, तुम मुझे, दीदी, और आज भी कितनी चाहती हो !

[**कुछ देर सन्नाटा।**]

जहाँनारा—(शांतिप्रिय की ओर देखते हुए) भइया, एक बात और भी है, जो आज तक तुमसे नहीं कही।

शांतिप्रिय—(जहाँनारा की ओर देख) वह भी कह दो, दीदी।

जहाँनारा—बचपन में तुम्हारे लिए मेरी और सारी आरज़ुएँ तो पूरी हो जातीं पर एक न होने पाती।

शांतिप्रिय—कौन-सी ?

जहाँनारा—तुम्हें खिला-पिला न पाती। जब तुम्हारी माँ या कोई दाई वग़ैरह तुम्हें चमचे से दूध पिलाती, तब कितना रश्क होता मुझे उनकी क़िस्मत पर, मैं चाहती उस चमचे को लेकर तुम्हें दूध पिलाना। जब तुम खाने-पीने लगे तब, जब-जब भी घर में कोई चीज़ बनती, तब कितनी ख़्वाहिश होती तुम्हें भी उस चीज़ को खिलाने की, पर....पर, भइया, फल और सूखे मेवे के अलावा और कोई चीज़ तुम्हारे लिए ला ही न सकती। मैं तुम्हारे हाथ का, तुम्हारे घर में, सब कुछ खा सकती, पर तुम नहीं। कुछ और बड़े होने पर मैंने अपनी इस आरज़ू को ही कुचल डाला।

शांतिप्रिय—पर यहाँ, दीदी, अब अपनी इस आरज़ू को भी पूरी कर लेना।

[**फिर कुछ देर निस्तब्धता।**]

शान्तिप्रिय—(जहाँनारा की ओर एकटक देखते हुए) क्या सोच रही हो, दीदी ?

जहाँनारा—तुम वैष्णव ख़ानदान के हो, बड़े पाक वैष्णव ख़ानदान के, सोच रही हूँ, यह करना कहाँ तक मुनासिब होगा ? **(कुछ रुककर)** भइया, एक बात जानते हो ?

शांतिप्रिय—कौन-सी ?

जहाँनारा—अपनी इस आरज़ू के पूरे न होने पर मुझे ग़ुस्सा तो आता, पर नफ़रत न होती। तुम मेरे हाथ का न खाते थे, मेरे घर में न खाते थे,

इससे मेरे दिल में यह नहीं उठा कि बदले में मैं भी तुम्हारे हाथ का न खाऊँ, तुम्हारे घर में न खाऊँ; बल्कि कुछ और बड़े होने पर तुम्हारी इन मज़हबी बातों को मैं इज़्ज़त की नज़र से देखने लगी।

शांतिप्रिय—पर कहाँ है मज़हब इन बातों में, दीदी ? मैं इन सब चीज़ों को ढकोसला....बड़े से बड़ा ढकोसला मानता हूँ। मैं तुम्हारे हाथ का ज़रूर खाऊँगा, बल्कि तुम्हारा बनाया हुआ। (**कुछ रुककर**) मुझे तो एक बात और भी देखनी है।

जहाँनारा—कौन-सी ?

शांतिप्रिय—यह कि एम० ए० और एल-एल० बी० की एक तालिब्बयेइल्म कैसा खाना बनाती है।

जहाँनारा—(**मुस्कराकर**) इस इम्तहान में भी मैं फ़ेल होने वाली नहीं। पढ़ने-लिखने के साथ औरतों के दूसरे फ़राइज़ की तरफ़ भी मेरा ख्याल रहा है।

[फिर कुछ देर सन्नाटा।]

शांतिप्रिय—(**विचारते हुए**) दीदी, जानती हो मुझे खिलाने-पिलाने की यह आरज़ू तुम्हें क्यों रहती थी ?

जहाँनारा—बताओ।

शांतिप्रिय—मैंने अभी कहा था न, तुम्हारे दिल में मेरी जो मुहब्बत है वह सिर्फ़ बहन की ही नहीं, पर माँ की भी है। (**कुछ रुककर**) दीदी, मेरी माँ तो बहुत जल्द चल दीं। मुझे तो उनकी पूरी-पूरी याद ही नहीं, लेकिन तुम्हारी वजह से मैंने माँ की ग़ैरहाज़िरी को कभी महसूस ही नहीं किया। असल में तुम्हीं ने मुझे पाला-पोसा, बड़ा किया, जैसा मैं हूँ वैसा बनाया।

[जहाँनारा कोई जवाब नहीं देती। उसकी आँखों में आँसू छलछला आते हैं। फिर कुछ देर सन्नाटा।]

शांतिप्रिय—और, दीदी, तुम्हीं मुझे यहाँ बुला भी सकीं। बाबू जी कभी यहाँ भेजते मुझे, अगर तुमने इतना ज़ोर न दिया होता।

जहाँनारा—मैं भी किस मुश्किल से परदे से बाहर निकल सकी हूँ। तुम्हें यहाँ बुलाने का भी मैं इतना ज़ोर कभी न देती, भइया, लेकिन मैं यह चाहती थी कि तुम्हारे कॉलेज की पढ़ाई भी मेरी ही देख-रेख में हो; दूसरे तुम मुल्क को देखो, यहाँ के रहने वालों को समझो। इस तरह की जगह में आकर ही इन्सान अपने को और अपने इर्द-गिर्द को पहचानता है; अपनी ज़िन्दगी का मक़सद तय करता है।

शांतिप्रिय—तब, दीदी, तुमने तो अपने मुल्क को और अपने को इन पाँच सालों में अच्छी तरह पहचान लिया होगा, ज़िन्दगी का अपना मक़सद भी तय कर लिया होगा ?

जहाँनारा—ज़रूर, भइया, यहाँ आकर मैंने देखी अपने मुल्क की ग़ुलामी, हम ग़ुलामों की ग़रीबी और हमारी हर तरह से तनज़्ज़ुली; साथ ही हमारी सरकार के हथकंडे। मैंने अपने को भी पहचाना और अपनी ज़िन्दगी के मक़सद को भी तय किया।

शांतिप्रिय—क्या तय किया तुमने अपने लिए ?

जहाँनारा—मुल्क की ख़िदमत।

शांतिप्रिय—**(विचारते हुए)** लेकिन....लेकिन, दीदी......

जहाँनारा—**(शांतिप्रिय की ओर देखते हुए)** लेकिन क्या ?

शांतिप्रिय—माफ़ करना, शादी होते ही......

जहाँनारा—शादी ?....शादी ?....हाँ, हाँ, वह....वह भी मैंने तय कर लिया है। शादी कर मैं ग़ुलामों से भी बदतर ग़ुलाम नहीं बनना चाहती, और न इस ग़ुलाम मुल्क में नये ग़ुलाम ही पैदा करना चाहती। तुम्हारे साथ बहन की तरह ही रहकर अपनी लाइफ़ को रैग्यूलर फ़ीस्ट रखना चाहती हूँ।

[शांतिप्रिय आश्चर्य से जहाँनारा की ओर देखता है।]

यवनिका

पहला अंक

पहला दृश्य

स्थान—एक क्लब

समय—सन्ध्या

[दाहिनी ओर टेनिसकोर्ट का एक भाग दिखायी दे रहा है और बायीं तरफ़ क्लब की इमारत का थोड़ा-सा हिस्सा, बीच में दूब का मैदान है, जिसकी दूब अच्छी तरह कटी हुई है। मैदान के दोनों तरफ़ फूलों की क्यारियाँ हैं, जिनमें मौसमी रंग-बिरंगे फूल खिले हुए हैं। मैदान के बीच में सफ़ेद मेज़पोश से ढकी हुई एक बड़ी-सी टेबिल है। टेबिल पर सोडा, लेमन, रसबरी, विमटो, जिंजर आदि की बोतलें और कई काँच के गिलास रखे हैं। मेज़ के चारों तरफ़ कुछ दूरी पर छोटी-छोटी टेबलें रखी हैं, जिन पर ताश, शतरंज, केरमबोर्ड, इत्यादि रक्खे हैं। एक पर कई अख़बार और मासिक-पत्र आदि भी हैं। बड़ी टेबिल के चारों तरफ़ की कुर्सियों पर जहाँनारा, शांतिप्रिय, पीरबख़्श, दुर्गा, अमरनाथ तथा कुछ और स्त्री-पुरुष बैठे हैं। जहाँनारा क़रीब-क़रीब वैसी ही है जैसी उपक्रम में थी। शांतिप्रिय की मूछें कुछ बढ़ गयी हैं। अब उसकी अवस्था २४-२५ वर्ष के लगभग जान पड़ती है। पीरबख़्श की उम्र क़रीब ३१-३२ वर्ष की है और अमरनाथ की पीरबख़्श से कुछ ही अधिक। दुर्गा २२-२३ साल की दिखती है। पीरबख़्श साँवला, ऊँचा पूरा दुहरे शरीर का व्यक्ति है। छोटी-छोटी मूछें और दाढ़ी हैं। आँखों पर मोटे फ़्रेम का चश्मा है। अमरनाथ गेहुएँ रंग का, न बहुत ऊँचा और न ठिगना, दुबला-सा मनुष्य है। छोटी-छोटी मूछें हैं। दुर्गा गौर वर्ण की, कुछ ठिंगनी और इकहरे

शरीर की सुन्दर युवती है। शेष व्यक्ति भी सभी युवक और युवतियाँ हैं। अमरनाथ को छोड़कर पुरुषों में से कुछ पश्चिमी ढंग की पोशाकें और कुछ शेरवानी तथा चूड़ीदार पाजामा पहने हैं। सिर सब के नंगे हैं। अमरनाथ खादी का कुरता और पाजामा पहने है, तथा गांधी-टोपी लगाये है। स्त्रियाँ साड़ियाँ और शलूके अथवा जम्पर धारण किये हैं। स्त्रियों के शरीर पर गहने नाम-मात्र के हैं। शांतिप्रिय और पीरबख़्श के बायें हाथों में टेनिस-रैकिट हैं। कोई-कोई व्यक्ति सोडा, लेमन, आदि पी रहे हैं। बातें चल रही हैं।]

पीरबख़्श—(**उत्तेजित स्वर में**)पाकिस्तान....बेशक पाकिस्तान। मैं फिर कहता हूँ, हिन्दोस्तान एक मुल्क नहीं, यहाँ रहने वालों की एक क़ौम नहीं। मुस्लिम लीग की पाकिस्तान की यह तहरीक ही हिन्दू-मुस्लिम सवाल को तय करा सकती है।

दुर्गा—(**क्रोध से**) पाकिस्तान।....पाकिस्तान !....भारत-माता के शरीर के टुकड़े ! यह कभी सम्भव है ? यह कभी हो सकता है ? इससे हिन्दू-मुस्लिम प्रश्न सुलझ जायगा ? अजी साहब, इससे होगा इस देश में रक्तपात !......घोर रक्तपात......घोर-घोर रक्तपात !

अमरनाथ—मैं देखता हूँ कि इस बहस में आप दोनों ही बहुत उत्तेजित हो उठे हैं। बिना ठंडे दिमाग़ के बहस नहीं हो सकती। (**दुर्गा से**) मिस दुर्गा, क्या आप मुझे भी मिस्टर पीरबख़्श से कुछ बातें करने की इजाज़त देंगी ?

दुर्गा—इजाज़त ! इसमें मेरी आज्ञा माँगने की क्या आवश्यकता है ? हम लोग तो क्लब के सदस्य ही हैं, आप तो हैं मन्त्री।

अमरनाथ—जी नहीं, इस दृष्टि से मैंने इजाज़त नहीं माँगी। बहस प्रधानतः आप लोगों में चल रही थी, मैं बीच में बोलने वाला न समझा जाऊँ, इसलिए मैंने इजाज़त चाही। (**पीरबख़्श से**) पीरबख़्श साहब,

सबसे पहले क्या आप मुझे यह बताने की कृपा करेंगे कि एक मुल्क के क्या मायने हैं ?

पीरबख़्श—एक मुल्क के मायने ? . . . .एक मुल्क के मायने. . . . **(विचारते हुए)** एक मुल्क के मायने, जनाब. . . . **(रुक जाता है।)**

[सब लोग हँस पड़ते हैं।]

पीरबख़्श—**(कुछ चिढ़कर)** हाँ, हाँ, मैं बताता हूँ एक मुल्क के मायने। एक मुल्क के मायने हैं ज़मीन का वह टुकड़ा, जिसकी कुछ क़ुदरती सरहद्दें हों।

एक युवक—याने या तो वह समुद्र से घिरा हो, या पहाड़ों वग़ैरह से, या नदी बीच में हो।

पीरबख़्श—जी. . . .जी हाँ।

अमरनाथ—और दुनिया के सारे मौजूदा देशों की इसी प्रकार की सरहद्दे हैं ?

पीरबख़्श—**(विचारते हुए)** मुझे जागरफ़ी पढ़े तो बहुत वक़्त गुज़र गया, लेकिन अगर आप लोग ग़ौर से जुग़राफ़िया समझने की तकलीफ़ गवारा करेंगे, तो मुझे यक़ीन है कि आपको हर मुल्क की किसी न किसी तरह की क़ुदरती सरहद्दें ज़रूर मिलेंगी।

अमरनाथ—मैं भूगोल का अच्छा विद्यार्थी रहा हूँ और इस विषय से स्वाभाविक दिलचस्पी होने के सबब मैं अब तक भी नक़्शे देखा और बनाया करता हूँ। माफ़ कीजिएगा, अगर मैं यह कहूँ कि अधिकतर लड़ाइयाँ ही इन सीमाओं के निर्धारित न रहने की वजह से हुई हैं।

पीरबख़्श—**(गला साफ़ करते हुए)** अमरनाथ साहब का तालीमी ज़माना इतना शानदार रहा है और उन्हें जागरफ़ी पर इतना उबूर है कि उनकी राय के ख़िलाफ़ अगर मैं कुछ कहूँ, तो भी. . . . . .

एक युवती—**(बीच ही में)** जनाब, यह राय का नहीं, हक़ीक़त का सवाल है।

पीरबख़्श—अच्छा जाने दीजिए क़ुदरती सरहद्दों की बात। एक मुल्क वह है जिसमें एक क़ौम रहती हो।

अमरनाथ—और एक क़ौम के क्या लक्षण हैं ?

पीरबख़्श—एक क़ौम वह है जिसका एक मज़हब हो, जिसकी एक ज़बान हो और जिसकी एक तहज़ीब हो। क़ौम की तारीफ़ तो माहिर तय कर चुके हैं।

अमरनाथ—एक मत से; क्यों ?

पीरबख़्श—एक मत से न सही, तो कसरतराय से।

अमरनाथ—एक तो कसरतराय क्या है, यह कहना भी कठिन है, दूसरे विशेषज्ञों के मामले में कसरतराय की क़ीमत भी बहुत अधिक नहीं है।

पीरबख़्श—फिर काहे की क़ीमत है ? हम मुसलमानों में तो हर बात में कसरतराय की ही सबसे बड़ी क़ीमत होती है। इस्लाम से ज़्यादा जमहूरी और कोई मज़हब दुनिया के परदे पर नहीं। जमहूरियत में कसरतराय के सामने किस चीज़ की क़ीमत है ? माहिरों की कसरतराय ने क़ौम की जो तारीफ़ तय की है, हम मुसलमान उसी को मानते हैं और उस तारीफ़ के मुताबिक़ इस मुल्क में दो क़ौमें रहती हैं—हिन्दू और मुसलमान।

दुर्गा—सर्वथा भ्रमपूर्ण युक्ति ! कल तक तो इनमें से निन्यानवे प्रतिशत मुसलमान हिन्दू थे और आज इनका अलग राष्ट्र हो गया।

अमरनाथ—एक तो जैसा मैंने कहा कि क़ौम के लक्षणों की व्याख्या में भी विशेषज्ञों की एक राय नहीं, दूसरे जो तारीफ़ आपने अभी बतायी, और जिसे आजकल कुछ मुसलमान भाई मानने लगे हैं, उसके मुताबिक़ भी यह सिद्ध नहीं होता कि मुसलमान और हिन्दू दो राष्ट्र हैं।

पीरबख़्श—यह सिध नहीं होता ?

अमरनाथ—जी नहीं, देखिए, जहाँ तक मज़हब का ताल्लुक़ है वहाँ तक तो एक ही धर्म को मानने वाली दो या अधिक क़ौमें हो सकती हैं।

ईसाई धर्म के अनुयायी कितने राष्ट्र हैं। और एक ही क़ौम में एक से ज्यादा धर्म मानने वाले समुदाय भी रह सकते हैं। हिन्दू, जिसे कम से कम आप लोग भी एक क़ौम मानते हैं, बौद्ध, जैन, सिक्ख, भिन्न-भिन्न धर्मों के अनुयायिओं का राष्ट्र है। चीन का भी यही हाल है।

पीरबख्श—लेकिन....लेकिन.... **(चुप हो जाता है।)**

अमरनाथ—कहिए।

पीरबख्श—आप पूरी बात कह लीजिए।

अमरनाथ—अच्छी बात है। आपके क़ौम के लक्षणों की तीन बातों में से एक का उत्तर तो मैं दे चुका। दो का और सुन लीजिए। हिन्दोस्तान में एक सिरे से दूसरे सिरे तक जो ज़बान समझी जाती है, और जिसे यहाँ के अधिकांश लोग बोलते हैं, वह है हिन्दोस्तानी। ज़बान एक है या दो, इसे प्रधानतया सिद्ध करती है—उस भाषा की गठन, और हिन्दी, उर्दू दो कही जाने वाली ज़बानों की गठन प्रायः एक-सी ही है, इतना ही नहीं दोनों भाषाओं में ऐसे बेशुमार शब्द हैं जो संस्कृत से निकले हैं या अरबी, फ़ारसी भाषा से, इसका पता तक साधारण लिखने और बोलने वाले नहीं लगा सकने। इसके सिवा प्रान्तीय ज़बानें—बँगला, मराठी, गुजराती, तैलगू, तामिल, पश्तो वग़ैरह को उन सूबों में रहने वाले हिन्दू और मुसलमान दोनों ही बोलते और लिखते हैं। फिर एक बात और भी है।

पीरबख्श—कौन-सी ?

अमरनाथ—आप लोगों की पाकिस्तान की योजना में जिन हिस्सों को आप मुस्लिम-ज़ोन कहते हैं उनमें भी तो एक ही ज़बान नही है। एक पश्चिमोत्तर ज़ोन में ही पश्तो, काश्मीरी, पंजाबी, सिन्धी, बलूची, पाँच भाषाएँ हैं और इनके सिवा उप-भाषाएँ डायलेक्ट्स् अलग। इतनी ज़बानों वाला पश्चिमोत्तर अगर एक राष्ट्र बन सकता है, तो अलग-अलग ज़बानें हिन्दोस्तान की राष्ट्रीयता के रास्ते में बाधाएँ कैसे मानी जा सकती हैं ? और अब तहज़ीब की बात लीजिए।

पीरबख़्श—हाँ, उसे और ख़तम कर लीजिए।

अमरनाथ—धर्म और भाषा के सिवा तहज़ीब में जो चीज़ें ख़ास जगह रखती हैं उनमें मुख्य हैं—कलाएँ, रीति-रिवाज, पोशाक वग़ैरह। स्थापत्यकला, याने इमारतों इत्यादि की बनावट, मुसब्बिरी, संगीत, नाच वग़ैरह में हमें कहीं भी हिन्दू-मुस्लिम तरीक़ों में कोई फ़र्क़ नहीं दिखता। छोटी-छोटी रीतियाँ तो हर हिन्दू और हर मुस्लिम समुदाय की भी एक-सी नहीं, हाँ, अगर हम बड़े-बड़े रिवाजों को लें तो हमें दिख पड़ेगा कि ये हिन्दू-मुसलमान दोनों के प्राय: एक-से हैं। पोशाक में तो कोई फ़र्क़ है ही नहीं। यथार्थ में हिन्दोस्तान की मौजूदा तहज़ीब दोनों समुदायों की संयुक्त संस्कृति है।

एक युवक—दरअसल राजनैतिक और आर्थिक स्वार्थों का सामंजस्य एक क़ौम का सबसे बड़ा लक्षण है।

पीरबख़्श—अच्छा, आप भी कह लीजिए।

वही युवक—हिन्दू और मुसलमानों के राजनैतिक और आर्थिक स्वार्थों में कोई भेद नहीं।

पीरबख़्श—क्योंकि हम दोनों ब्रिटिश गवर्नमेंट के मातहत हैं। जिस दिन हम आज़ाद हो जायँगे, उसी दिन यह फ़र्क़ शुरू हो जायगा। सियासी और इकतिसादी दोनों ही मामलों में हिन्दू मुसलमानों के उसूल एक-साँ नहीं; मसलन सयासी आज़ादी से हिन्दुओं के मज़हब का कोई ताल्लुक़ नहीं, पर मुसलमानों का यह मज़हबी सवाल है। इस्लाम में मज़हब और सियासी बातें एक ही चीज़ हैं। हमारी मसजिद में नमाज़ भी पढ़ी जाती है, और सयासी मामलात के लिए मुकामे-मजलिस भी वही है। इकतिसादी उसूल तो हमेशा बदलती रहने वाली चीज़ है।

वही युवक—आर्थिक उसूल चाहे बदलती रहने वाली चीज़ हो, पर हर प्राणी के लिए रोटी जीवन में पहली ज़रूरत है, इससे कोई इन्कार नहीं कर सकता।

एक युवती—कोई नहीं।

पहला युवक—और इस ग़रीब देश में तो रोटी का सवाल सबसे बड़ा सवाल है।

दूसरा युवक—निःसन्देह।

पहला—तब हमें सबसे पहले यह देखना है कि देश का पृथक्करण देश की ग़रीबी बढ़ाता है या घटाता। पृथक्करण देश की आर्थिक उन्नति के लिए अनेक प्रकार से बाधक होगा। कुछ दृष्टान्त लीजिए। खनिज पदार्थ सारे देश में इस तरह फैले हैं कि अगर देश के टुकड़े हो गये तो कुछ चीज़ें हिन्दोस्तान में रह जायँगी और कुछ पाकिस्तान में। मसलन लोहा और कोयला हिन्दोस्तान में अधिक रहेगा और तेल पाकिस्तान में। समूचा देश इन पदार्थों का ठीक उपयोग न कर सकेगा। फिर अब यह सिद्ध हो गया है कि योजना बनाकर काम करने से ही काम सुचारु रूप से हो सकता है। आर्थिक योजनाएँ बड़े क्षेत्रफल में जिस तरह कामयाब हो सकती हैं, छोटे क्षेत्रफलों में नहीं। और फिर देश के टुकड़े हो जाने से देश की साख विदेशी बाज़ारों में इतनी कम हो जायगी कि हमें अपने उद्योग धन्धों की उन्नति के लिए एक नहीं. . . .

पीरबख़्श—(**बीच ही में**) आप तो, जनाब, एक स्पीच दे रहे हैं स्पीच। इन सब बातों के जवाब मेरे पास हैं, पर मैं. . . .

दुर्गा—(**बीच ही में**) जवाब तो संसार में हर बात के होते हैं; पर हम यदि आर्थिक प्रश्नों को एक ओर रख भी दें तो भी, ...क्षमा कीजिए, मुझसे बोले बिना फिर नहीं रहा जाता, और देखिए, आप लोग बहुत बोल भी चुके हैं अतः मेरी पूरी बात सुने बिना बीच में बोलिएगा भी नहीं, मुझे तो पीरबख़्श साहब और अमरनाथ जी दोनों की ही युक्तियाँ भ्रमपूर्ण दिखती हैं। मेरी सम्मति में भौगोलिक दृष्टि से भारतवर्ष एक देश है। उसकी स्वाभाविक सीमाएँ हैं। उत्तर में उसका सिर पर्वतराज हिमालय रूपी मुकुट से सुशोभित है। दक्षिण में उसके चरणों को रत्नाकर सागर

धो रहा है। गंगा आदि नदियाँ अपने पावन नीर से उसे पवित्र कर रही हैं। अनेक अन्य पर्वत और वन उसके भिन्न-भिन्न अंगों के शृंगार हैं। इस देश का सारा प्राचीन इतिहास बताता है कि यह देश सदा से एक देश रहा है। सभी बड़े-बड़े सम्राट् और बादशाहों का यही ध्येय रहा है कि वे समूचे भारत पर राज्य करें। यहाँ एक ही राष्ट्र है और धार्मिक सहिष्णुता इस राष्ट्र के प्राण। इस राष्ट्र की संस्कृति संसार की सबसे प्राचीन संस्कृति है। विश्व की अन्य संस्कृतियों पर इस संस्कृति की छाप है। अनेक जातियाँ यहाँ आयीं अवश्य, पर जो यहाँ आये सभी ने इस संस्कृति को अपना लिया। शकों, हूणों इत्यादि में और हिन्दुओं में क्या अन्तर रह गया? मुसलमानों और हिन्दुओं का भी सम्मेलन हो रहा था, शेरशाह, अकबर आदि यही तो कर रहे थे, पर औरंगज़ेब ने इस सम्मेलन को थोड़ा-सा धक्का पहुँचा दिया। इतने में अंग्रेज़ आ गये। अपनी स्वार्थसिद्धि के लिए उन्होंने मिटते हुए झगड़ों को उत्तेजित कर दिया है। पर किसी राष्ट्र की संस्कृति के इतिहास में, जब वह इतनी पुरानी हो, सौ, दो सौ वर्ष क्या होते हैं? अन्त में मुसलमान और हिन्दू भी उसी प्रकार एक हो जायँगे जिस प्रकार शक, हूण और हिन्दू हो गये थे।

पीरबख़्श—याने जो हाल उन क़ौमों का हुआ, वही मुसलमानों का होगा; न उनका कोई नामोनिशान बाक़ी रहा, न मुसलमानों का रह जायगा? कांग्रेस मिनिस्ट्रियों ने भी तो यही कोशिशें की थीं; कौन-सा ऐसा जुल्म बाक़ी रह गया था जो उन्होंने मुसलमानों पर न किया हो।

जहाँनारा—हिन्दुओं के इसी तरह के ख़्यालों ने इस दो क़ौमी नज़रिये को पैदा किया है। इन्होंने.......

दुर्गा—(बीच ही में) जी नहीं, इसका जन्म हुआ है विदेशी स्वार्थियों के षडयन्त्रों से। सन् १९०६ में लार्ड मिन्टो ने मुसलमानों का एक शिष्ट मण्डल बुलाकर फूट का बीज बाँटा, जो आगे चलकर पृथक निर्वाचन क्षेत्रों

में बोया गया। चुनाव के पश्चात् पौधे निकले, कांग्रेस के हिन्दू मुस्लिम समझौते के प्रयत्नों से ये फूले और कांग्रेस मिनिस्ट्रियों के समय फल भी गये।

शांतिप्रिय—मेरी तो राय है कि जब कुछ मुसलमान लीडरों ने यह देखा कि कांग्रेस इकतिसादी लाइहा-ए-अमल की बिना पर माशरत के एक नये तश्कील की ही कोशिश कर रही है, तब मज़हब और तहज़ीब के नाम पर उन्होंने अपनी क़ौम को भड़काना शुरू किया।

जहाँनारा—भड़काना कैसा? क्या मज़हब और तहज़ीब कोई चीज़ ही नहीं।

पीरबख़्श—अगर मज़हब और तहज़ीब कुछ नहीं तो दुनिया में कहीं कुछ नहीं।

अमरनाथ—मज़हब और तहज़ीब कुछ नहीं यह कोई नहीं कह सकता, पर सच्चे धर्म का काम सम्मेलन कराना है, एक दूसरे को अलग करना नहीं। और तहज़ीब तो मुझे यहाँ दो दिखती ही नहीं। फिर ग़ुलामों का भी कोई मज़हब होता है? कोई तहज़ीब होती है? विदेशी हमें कुचले हुए हैं, हमें पीस रहे हैं और हमें आपस में ही लड़ने से फ़ुरसत नहीं! मुझे हैरत होती है जब मैं देखता हूँ कि हम दूसरे देशों के इतिहासों से भी कोई शिक्षा नहीं ले रहे हैं। जापान और रूस की पहली लड़ाई के वक़्त जापान में भगवान बुद्ध की कितनी पीतल की मूर्तियाँ गलवायी गई थीं, जिससे वह पीतल लड़ाई के काम आ सके। चीन और जापान के एक युद्ध में कितने चीनियों ने अपनी चोटियाँ कटवा दी थीं, जिससे लड़ाई के लिए रस्से बन सकें। दूर क्यों जाते हैं। इसी युद्ध में जो आर्क बिशप आफ़ केन्टरबरी रूस को धर्म और ईश्वर-द्रोही कहते थे, वे ही आज गिरजे में बैठकर उसकी विजय-कामना कर रहे हैं; और यह सिर्फ़ इसीलिए कि दोनों एक ही तरह के ख़तरे में हैं। आपसी झगड़ों को हम आज़ादी के बाद भी निपटा सकते हैं।

पीरबख़्श—लेकिन आज़ादी तो अब मुनस्सर है मुसलिम लीग के पाकिस्तान की इस तहरीक के मुताबिक़ मुल्क के तक़्सीम होने पर।

दुर्गा—(कुछ उत्तेजना से) ऐसा ?

पीरबख़्श—जी हाँ, बिना इसके मुल्क की आज़ादी का मतलब होगा, हिन्दुओं की हुकूमत और मुसलमानों की और भी बदतर ग़ुलामी। आज़ादी-पसन्द मुस्लिम क़ौम इसे कभी भी मंजूर नहीं कर सकती। उसे तो अब तसल्ली ही तब होगी जब जहाँ हिन्दू ज़्यादा हैं, वहाँ हिन्दुओं, और जहाँ मुसलमान ज़्यादा हैं वहाँ मुसलमानों की हुकूमत क़ायम होकर, मुल्क तक़्सीम कर दिया जाय।

जहाँनारा—हिन्दुओं के आजकल के रवैये को देखते हुए बिना इस बँटवारे के शायद आपसी दोस्ताना भी नहीं रह सकता।

अमरनाथ—और आप समझती हैं कि बँटवारे के बाद झगड़े का कोई सवाल ही नहीं उठ सकता ? उन मुसलमानों का जो हिन्दुओं के सूबों में रहेंगे, और उन हिन्दुओं का जो मुस्लिम सूबों में, क्या होगा ?

पीरबख़्श—यह छोटी-छोटी बातें बाद में निपटती रहेंगी।

अमरनाथ—छोटी-छोटी बातें ! इस देश के प्रायः एक तिहाई मुसलमान तो उन सूबों में रहते हैं जहाँ हिन्दुओं का बहुमत है।

एक युवक—और फिर ईसाई, पारसी, सिक्ख इत्यादि दूसरी जातियों का इस बँटवारे में कौन-सा स्थान होगा ?

पीरबख़्श—बँटवारे के बाद यह सब बातें सोची जा सकती हैं।

दुर्गा—(और उत्तेजित होकर मुट्ठी बाँध टेबल को ठोंकते हुए, जिससे बोतलें और गिलासों में आवाज़ होती है) बँटवारा हो नहीं सकता ! कदापि....कदापि नहीं !

शांतिप्रिय—हाँ, हाँ, यह कैसे हो सकता है ?

एक युवक—और फिर देखिए, मैं तो एक दूसरी ही बात कहता हूँ।

शांतिप्रिय—कैसी ?

वही युवक—यदि हम यह भी मान लें कि हिन्दू और मुसलमान दो क़ौमें हैं तो भी देश के टुकड़ों की ज़रूरत नहीं।

जहाँनारा—तो साथ रहकर लड़ा करें ?

वही युवक—जी नहीं, साथ रहकर भी मेल रखा जा सकता है। कैनडा में फ़रासीसी और अंग्रेज़, स्विटज़रलैण्ड में जर्मन, इटैलियन और फ़रासीसी, दक्षिण आफ़्रिका में, यदि हम भारतीयों और रंगीनों को छोड़ भी दें तो, अंग्रेज़ और बोर, रूस में ईसाई, मुसलमान और यहूदी, चीन में बुद्ध, कन्फ्यूशियस और लाओज़ू के अनुयायी तथा मुसलमान एक सरकार के अन्तर्गत रहते हैं।

दूसरा युवक—आपने अगर इस तरह की मिसालें दीं हैं तो मैं दूसरी तरह की दे सकता हूँ। बालकन मुल्कों के टुकड़े आपसी झगड़ों की वजह से ही हुए। स्पेन और पोर्चुगल, आयरलैण्ड और अल्सटर, स्वीडन और नारवे, बैल्जियम और हॉलैण्ड के अलग-अलग होने का सबब यह झगड़े ही हैं।

पहला युवक—पर इन टुकड़ों से ये देश कमज़ोर ही हुए, बलवान नहीं।

एक युवती—यह समय है बड़े-बड़े ताक़तवर राष्ट्रों का, छोटों और कमज़ोरों की दुनिया में कोई हस्ती न रहेगी।

पहला युवक—और फिर एक बात का और ख़याल रहे। आज तो समूचा भारत एक देश है यहाँ रहने वालों का एक राष्ट्र है, पर अगर एक बार देश के टुकड़े हो गये, एक बार यदि हिन्दोस्तान और पाकिस्तान बन गये, तो फिर एकता न हो सकेगी। किसी दिन इंगलैण्ड और अमेरिका भिन्न-भिन्न देश होने पर भी, एक दूसरे से भौगोलिक दृष्टि से सुदूर होते हुए भी, एक राज्य के अन्तर्गत थे, पर आज दोनों का धर्म एक, भाषा एक, सभ्यता एक होने पर भी एक दूसरे से पृथक हो गये हैं।

तीसरा युवक—और फिर अलग ही होना है तो हिन्दोस्तान और पाकिस्तान ही क्यों, सिक्खिस्तान, द्रविड़िस्तान, जैनिस्तान, मोमिनिस्तान, और शिया तथा सुन्नियों के भी शियाइस्तान और सुन्नीइस्तान क्यों नहीं ?

एक मुसलमान—**(मज़ाक़-सा उड़ाते हुए)** शियाइस्तान और सुन्नीइस्तान !

तीसरा युवक—हाँ, शियाइस्तान और सुन्नीइस्तान भी। क्यों शियाइस्तान और सुन्नीइस्तान नहीं ? शिया और सुन्नियों के तबर्रा और माहादी साहबा के झगड़े रहते हुए वे साथ-साथ कैसे रह सकेंगे ?

चौथा युवक—और क्या सुन्नी सुन्नियों में भी लड़ाइयाँ नहीं हुई हैं ? पठान और मुग़ल दोनों सुन्नी थे। पठानों-पठानों के बीच भी लड़ाइयाँ हुई हैं। इतना ही नही, मुसलमानों ने मुसलमानों से लड़ते हुए, युद्ध में दूसरी क़ौमों की सहायताएँ तक ली हैं। अरब के मुसलमानों ने तुर्कों के मुसलमानों से अपना पिंड छुड़ाने के लिए अंग्रेज़ों से मदद माँगी थी।

दूसरी युवती—मुसलमान ही क्यों, एक धर्म मानने वाली क्या दूसरी क़ौमें एक दूसरे से नहीं लड़ीं ? योरप के तो प्रायः सभी देशों के रहने वाले ईसाई हैं, फिर वे क्यों लड़ते हैं ?

अमरनाथ—सन्त कबीर और शेख़ फ़रीद के समान सन्तों ने, शायर नज़ीर और ख़ानख़ाना के मानिन्द कवियों ने, शहन्शाह शेरशाह तथा अकबर के सदृश बादशाहों ने और अगणित सेवकों एवं ख़ादिमों ने जो बड़ा भारी कार्य इन दो महान जातियों के मिलाने, इन दो विशाल संस्कृतियों के सम्मेलन कराने का किया है, उसे आज कुछ लोग बरबाद करने पर तुले हुए हैं। हिन्दोस्तान न हिन्दुओं का है, न मुसलमानों का; वह है दोनों का। दोनों यहीं पैदा हुए, दोनों यहीं की आबोहवा में पले और यहीं के अन्न से बढ़े। दोनों एक माता के दो बच्चे हैं। दो क़ौमों

का यह सिद्धान्त ही ग़लत है, इतना ही नहीं, उसका कार्यरूप में परिणत होना ही ग़ैरमुमकिन है। हिन्दू और मुसलमान छोटे-छोटे से गाँव में भी एक दूसरे के पड़ोसी हैं। क्या एक-एक गाँव के टुकड़े किये जायँगे ? जब दुनिया के बड़े-बड़े विचारक सारे संसार का एक संघ-राज्य क़ायम करने की बात सोच रहे हैं, जब सारी मानव-जाति को एक सूत्र में बाँध मानव-राष्ट्र स्थापित करने की कल्पना की जा रही है, तब एक मिली हुई जाति, एक सम्मिलित संस्कृति के विभाजन की यह कोशिश ! ये विचार अगर फैले तो हर शहर और हर गाँव ही दुखी न होगा, पर हर घर और हर झोपड़ा इस आग से जल उठेगा। देश के लिए इससे बड़ी बदक़िस्मती शायद सम्भव ही नहीं है।

एक युवक—आप ठीक कह रहे हैं, अमरनाथ जी, मुझे तो हैरत ही इस बात की है कि आजकल के पढ़े-लिखे लोगों ने यह चर्चा शुरू की है।

अमरनाथ—अरे भाई, पढ़े-लिखे लोग ही तो यह कर सकते हैं। साधारण मनुष्यों को बेवक़ूफ़ बनाकर अपना उल्लू सीधा करना पढे-लिखे लोगों को ही आता है। मैं तो यह कहूँगा कि ये धर्म के ठेकेदार ही सबसे बड़े पापी हैं, देश-द्रोही हैं, क़ौम-द्रोही हैं; और.......

पीरबख़्श—(**बीच ही में ग़ुस्से से टेबल पर हाथ पटकते हुए, जिससे कि कुछ गिलास और बोतलें गिर जाती हैं, खड़े होकर**) शटअप, अमरनाथ, आप क्लब के सेक्रेटरी होने से हमारी, हमारे लीडरान की और हमारे मज़हब की इस तरह तौहीनी नहीं कर सकते। (**बाहर जाते हुए**) मेरा नाम काट दीजिए अपनी क्लब की मेम्बरी से। (पीरबख़्श बाहर जाता है।)

अमरनाथ—(**आश्चर्य से**) सुनिए....सुनिए तो, जनाब.....

एक युवक—(**बीच ही में, खड़े होते हुए**) क्या सुनिए ? जहाँ इस्लाम और मुस्लिम तहज़ीब की इस तरह धज्जियाँ उड़ायी जायँ,

वहाँ किसी भी मुसलमान का रहना हराम है। मेरा नाम भी काट दीजिए। (**प्रस्थान।**)

अमरनाथ—(**पीछे-पीछे जाते हुए**) अरे मज़हब की धज्जियाँ ! तहज़ीब की धज्जियाँ ! . . . . अरे . . . . . .

[जहाँनारा और शेष मुसलमान भी उठकर जाते हैं। कुछ ही देर में नेपथ्य से मोटरों के जाने की आवाज़ आती है। बाक़ी व्यक्ति एक दूसरे का आश्चर्य से मुँह देखते हैं। अमरनाथ लौटकर आता है।]

अमरनाथ—देखिए, ज़रा-सी बात में ही इतनी बड़ी ग़लतफ़हमी हो गयी।

दुर्गा—आप ही लोगों ने तो इन मुसलमानों को सिर पर बिठाकर इनके मस्तिष्क को आकाश पर चढ़ा दिया है। मेरा तो दृढ़ विश्वास है कि इस जाति को ठीक करने के लिए हमें 'शठे शाठचम्' की ही नीति पर चलना होगा। या तो ये शकों और हूणों के सदृश हममें मिल जाएँ या फ़रासीसियों, अंग्रेज़ों आदि के समान यहाँ पड़े रहें, या फिर चले जाएँ इस देश को छोड़कर। हमारी जिन भूलों ने इनकी यहाँ इतनी बड़ी संख्या कर दी है, वे ही भूलें हम आगे नहीं. . . . . .

अमरनाथ—(**बीच ही में**) मिस दुर्गा, क्षमा कीजिए, अगर मैं यह कहूँ कि हिन्दू-मुस्लिम-समस्या के वर्तमान रूप का आप लोगों की इस तरह की बातें भी कारण हैं। आप लोगों ने भी फ़िज़ूल की बातें कर-करके मुसलमानों को इतना चिढ़ा दिया है।

दुर्गा—(**क्रोध से**) हम लोगों ने चिढ़ा दिया है ! हिन्दू-मुस्लिम-समस्या के हम कारण हैं ? लखनऊ का समझौता हम ही ने तो किया था। खिलाफ़त आन्दोलन में हम ही लोगों ने तो मदद दी थी। करें आप लोग और ऊपर से दोष दें हम लोगों को। पर अब आपकी यह नीति अधिक समय तक न चल सकेगी। हिन्दू जाग गये हैं, उनमें बल आ गया है, वे संगठित हो रहे हैं, उन्हें मालूम पड़ने लगा है कि आप सरीखे मनुष्यों के

हाथ में देश की बागडोर रही तो धर्म का चौथा पैर भी बचने वाला नहीं है। अपने धर्म, देश और संस्कृति को बचाने के लिए हिन्दू अपने प्राणों की आहुति देने में भी न हिचकेंगे। **(उठते हुए)** काट दीजिए मेरा नाम भी अपने क्लब से। **(जाने लगती है।)**

अमरनाथ—मिस दुर्गा....मिस दुर्गा....

एक युवक—**(उठते हुए)** ठीक तो है, खुशामद कीजिए, मुसलमानों की आप लोग।

[दुर्गा नहीं रुकती। दुर्गा का प्रस्थान। यह युवक, शांतिप्रिय तथा बाक़ी के सब लोग भी दुर्गा के पीछे-पीछे जाते हैं। अमरनाथ अकेला रह जाता है। कुछ देर निस्तब्धता। कुछ देर चुपचाप खड़े रहने के बाद अमरनाथ धीरे-धीरे टहलने लगता है।]

अमरनाथ—**(टहलते-टहलते)** जिन........जिन जहाँनारा और शान्तिप्रिय में इतना प्रेम था, उन्हीं की यह....यह हालत! **(कुछ रुककर)** इस देश के नौजवानों की भी यह....यह दशा! **(कुछ रुककर)** और....और जो बड़े लम्बे-चौड़े आर्थिक सिद्धान्तों को वघार रहे थे, उनका....उनका तक यह रवैया! **(अपनी कुर्सी पर बैठकर दोनों कुहनियों को टेबिल पर रख अपना सिर अपने दोनों हाथों पर रख लेता है। कुछ देर बाद एकाएक हाथ हटाकर, टेनिसकोर्ट की ओर देख)** टेनिसकोर्ट!....टेनिसकोर्ट!....इस....इस टेनिसकोर्ट ने एक देश का भाग्य बदला था!....फ़्रांस की एक बड़ी भारी क्रान्ति इसी प्रकार के किसी टेनिसकोर्ट पर शुरू हुई थी!....आज ही मुस्लिम लीग का पाकिस्तान का प्रस्ताव!....**(एकाएक उठकर जिस टेबिल पर अख़बार रखे हैं, उसके नजदीक जा, एक अख़बार उठाकर उसे देखते हुए)** सूडेटन जर्मनों के प्रस्तावों में और इस प्रस्ताव में कितनी समानता है।....और आख़िर हो क्यों न?....पृथक्करण का यह विचार ही वहाँ से आया है।....**(टेनिसकोर्ट को देखते हुए)** फ़्रांस का टेनिस-

कोर्ट !....सूडेटन जर्मनों के प्रस्ताव !....इस देश के नवयुवक ! **(ऊपर की तरफ़ देख)** हे भगवन् ! इस....इस देश के भाग्य में और क्या....क्या-क्या बदा है....

लघु यवनिका

दूसरा दृश्य

स्थान—दिल्ली में जहाँनारा के बँगले का बरामदा

समय—प्रातःकाल

[बरामदा आधुनिक ढंग का बना है। बरामदे के बाहर बग़ीचे का थोड़ा-सा भाग दिखायी देता है। क्यारियों में गुलाब ख़ूब फूले हुए हैं। बरामदे के भीतर की तरफ़ दरवाजों में से कुछ आधुनिक सजे हुए कमरों के हिस्से दिख पड़ते हैं। बरामदे में बेत का बना हुआ फ़र्नीचर है और एक महराब के बीच में पीतल का पिंजरा। पिंजरे में ख़ाक़ी रंग का, जिसकी पूँछ लाल है, अफ़रीकी तोता है। जहाँनारा खड़ी हुई तोते से बातें कर रही है।]

जहाँनारा—हाँ,...हाँ, नहीं रह सकता अब तेरा नाम गंगाराम !

तोता—गंगाराम !

जहाँनारा—हरगिज़...हरगिज़ गंगाराम नहीं। शुबराती, सुना, शुबराती तेरा नया नाम है। आफ़्रिका का है तू। वहाँ के सारे हब्शी मुसलमान हो गये हैं। तेरा नाम शुबराती होने पर, मुमकिन है, यहाँ के सारे हिन्दू भी धीरे-धीरे...

तोता—टर्र ! टर्र ! टर्र !

जहाँनारा—हाँ, कर, कर कोशिश शुबराती कहने की। इसी तरह कोशिश कर-करके तो तू सीखा था कहना गंगाराम।

तोता—गंगाराम!

जहाँनारा—फिर गंगाराम! ज़िद करता है! **(कुछ रुककर)** देख, गंगाराम....अ र र र! मेरी ज़बान भी फिसलती है। देख, शुबराती, तू है मुसलमान! मुसलमान का नाम कहीं हो सकता है, गंगाराम?

तोता—गंगाराम!

जहाँनारा—**(मुस्कराकर)** हो सकता है गंगाराम। **(कुछ रुककर)** नहीं, नहीं, शुबराती, कभी....कभी नहीं हो सकता। गंगाराम हिन्दू का नाम होता है, मुसलमान का नहीं। हिन्दू और मुसलमान में फ़र्क़, बहुत फ़र्क़ है, बहुत बड़ा फ़र्क़, ज़मीन और आसमान का फ़र्क़। हमारा मज़हब, ज़बान, तहज़ीब, सब कुछ अलग, हिन्दुओं की अलग। हम एक क़ौम के वह दूसरी के। और कितना....कितना ज़ुल्म करने पर कमर कसी है हिन्दुओं ने हमारी क़ौम पर! अरे! यह हिन्दू इस मुल्क में हमारा नामोनिशान मिटा देना चाहते हैं, नामोनिशान! **(कुछ रुककर)** मेरी समझ में भी पहले कहाँ आता था, हिन्दू-मुसलमानों का यह फ़र्क़! शान्तिप्रिय मुझे भाई....भाई ही क्या, भाई से भी कहीं ज़्यादा, कहीं-कहीं ज़्यादा मालूम होता था; नज़दीक रहने पर ही नहीं, दूर रहने पर भी।....उसकी ग़ैरहाज़िरी में उसकी पैदाइश, उसका बचपन, उसका खेल-कूद, उसका पढ़ना-लिखना, न जाने क्या-क्या, हाँ, हाँ, न जाने क्या-क्या याद आता था और उसके साथ के बाद दुनिया में किसी चीज़ की भी ज़रूरत महसूस न होती थी।

तोता—अवर लाइफ़ इज़ ए रेग्यूलर फ़ीस्ट!

जहाँनारा—**(मुस्कराकर)** हाँ, शान्तिप्रिय और मेरे साथ की ज़िन्दगी के मुताल्लिक़ ही मैं इस फ़िक़रे को कहा करती हूँ और तूने भी उसे सीख

लिया है। लेकिन....लेकिन अन्धी, हाँ, अन्धी थी मैं अब तक! **(कुछ रुककर, विचारते हुए)** पर....पर अभी....अभी भी जहाँ तक शान्तिप्रिय का सवाल है, कहाँ नज़र आता है, कहाँ महसूस होता है मुझे उसमें और अपने में कोई फ़र्क़।....यहाँ तो वह मेरे हाथ का खाना भी खाता है।....अरे! दिल्ली में वकालत ही मैंने शुरू की उसी की पढ़ाई खत्म न होने की वजह से।....मुल्क की ख़िदमत का मेरा तमाम प्रोग्राम ही रुका रहा उसकी पढ़ाई ख़त्म होने के लिए। **(कुछ रुककर)** पर कैसे....कैसे चल सकता है अब ख़िदमात का यह मिला हुआ प्रोग्राम! शान्तिप्रिय ने भी तो कल की बहस में दुर्गा का ही साथ दिया। **(फिर कुछ रुककर)** और मैंने **(फिर कुछ रुककर)** और मैंने?

तोता—गंगाराम!

जहाँनारा—गंगाराम नहीं, शुबराती।

तोता—टर्र! टर्र! टर्र!

जहाँनारा—हाँ, इसी तरह कोशिशकर शुबराती कहने की। मैं भी तो कोशिश कर-करके ही समझ रही हूँ, हिन्दू-मुसलमानों के इस फ़र्क़ को; और अभी....अभी भी पूरा समझ में नहीं आया है, तभी, हाँ, तभी तो शान्तिप्रिय के लिए वैसे ही ख़्याल हैं, और तभी बीच-बीच में ज़बान फिसलकर मुँह से निकल जाता है—गंगाराम!

तोता—गंगाराम!

[बगीचे के एक ओर से पीरबख़्श का प्रवेश। पीरबख़्श को देखकर जहाँनारा पीरबख़्श की तरफ़ बढ़ती है।]

जहाँनारा—बड़ी नवाज़िश हुई आज!

पीरबख़्श—क्यों, इसके पहले क्या कभी आया नहीं? कभी-कभी तो आ ही जाता हूँ। **(क्यारियों के गुलाबों को देखकर)** ख़ूब खिले हैं गुलाब, मिस जहाँनारा!

जहाँनारा—जी हाँ, मुझे इस फूल से बड़ी मुहब्बत है। **(गुलाबों को देखते हुए)** बड़ी दूर-दूर से क़लमें लाकर लगायी हैं इनकी मैंने यहाँ पर।

पीरबख़्श—(गुलाबों को ही देखते हुए) जिस तरह आपने एक ज़मीन पर एक गुलाब क़ौम के तरह-तरह के दरख़्तों को लगाया है, और उनमें इस तरह ख़ुशनुमा फूल फूले हैं, उसी तरह एक ज़मीन पर एक मुस्लिम क़ौम के अलग-अलग फ़िरक़ों को लाकर इकट्ठे कर देना है। उनमें भी ऐसी ही बहार आएगी और सारी क़ौम इसी तरह फूल फल उठेगी। **(कुछ रुककर)** कैसा....कैसा वह नज़ारा होगा, मिस जहाँनारा।

जहाँनारा—(गुलाबों को ही देखते हुए विचारपूर्वक) इसमें कोई शक नहीं।

पीरबख़्श—(जहाँनारा की ओर देखकर) और....और जिस क़दर यह गुलाब लगाने वाली आपको इन्हें इस शक्ल में देखकर ख़ुशी हो रही होगी, उसी तरह जो पाकिस्तान क़ायम करेंगे, उन्हें हमारी क़ौम को उस फूली-फली हालत को देखकर कितनी ख़ुशी होगी !

[दोनों फिर गुलाबों को देखने लगते हैं। कुछ देर निस्तब्धता।]

जहाँनारा—अच्छा, चलकर तशरीफ़ तो रखिए।

[दोनों बरामदे में आकर कुर्सियों पर बैठते हैं।]

तोता—चित्रकोट के घाट पै भई सन्तन की भीर !

पीरबख़्श—(तोते की तरफ़ देखकर, जहाँनारा की ओर देखते हुए) अच्छा, यह तोता आपने किसी हिन्दू से लिया है ?

जहाँनारा—(सकुचते हुए) जी....जी नहीं।

पीरबख़्श—तो....तो यह चितरकोट, सन्त वग़ैरह आपने इसे सिखाया है ?

जहाँनारा—(और सकुचते हुए) क्या..क्या कहूँ ?

पीरबख़्श—ओ ! समझा, उस शान्तीप्रिये ने सिखाया होगा ?

जहाँनारा—**(और संकोच से)** जी नहीं, सिखाया तो मैंने ही है।

तोता—गंगाराम।

पीरबख़्श—**(फिर तोते की तरफ़ देख, जहाँनारा की ओर देखते हुए)** और यह गंगाराम इसका नाम होगा ?

जहाँनारा—जी हाँ।

पीरबख़्श—ओह ! यह गंगा और यह राम ! गंगा पाक दरिया। इन हिन्दुओं में मरे हुए की हड्डियाँ भी गंगा में बहा देने से वह बिहिश्त को पहुँच जाता है। और राम तो ख़ुदा ही ठहरा ! कैसी जाहिल क़ौम है। अन सिविलाइज़्ड ब्रूट्स !....और....और हमारे घरों के तोतों के नाम भी गंगाराम रखे जाते हैं। उन्हें चितरकोट के शेर सिखाये जाते हैं। कहाँ....कहाँ जा रही है यह मुस्लिम क़ौम !

जहाँनारा—**(सकुचाते हुए, पर कुछ साहस से)** लेकिन.... लेकिन, मिस्टर पीरबख़्श, यह तो बहुत छोटी-छोटी बातें हैं। इनसे मुस्लिम क़ौम की तरक़्क़ी और तनज़्ज़ुली नहीं जाँची जा सकती।

पीरबख़्श—छोटी ! इन्हें आप छोटी बातें समझती हैं ? इन्हीं.... इन्हीं छोटी-छोटी कही जाने वाली बातों से क़ौम के रवैये का पता लगता है। मिस जहाँनारा, हिन्दुओं का कितना असर मुसलमानों पर पड़ा है और पड़ रहा है, इसे तोलने के लिए इसी तरह की चीज़ें तराज़ू का काम देती हैं। आख़िर क़ौम क्या है ? इन्सानों की जमात ही तो क़ौम है न ?

जहाँनारा—जी हाँ, सो तो है ही।

पीरबख़्श—और इन्सान बनते हैं जैसे उनके ख़ानदान होते हैं।

जहाँनारा—हाँ, यह भी ठीक है।

पीरबख़्श—जिन ख़ानदानों के जानवरों और परिन्दों पर भी हिन्दू तहज़ीब का इतना असर है, उनके बच्चों पर कितना होगा ?

[जहाँनारा कुछ नहीं कहती। उसका सिर झुक जाता है। पीरबख़्श उसकी ओर देखता रहता है। कुछ देर सन्नाटा।]

पीरबख़्श—यह न सोचिए कि आप ही के यहाँ का यह हाल है। ज़्यादातर मुस्लिम-ख़ानदानों की यही हालत है। कल मिस दुर्गा ने ठीक कहा था। शकों और हूणों का जो हाल हिन्दुओं ने किया, वही यह मुसलमानों का करना चाहते हैं। वह तो हमारी ख़ुशक़िस्मती थी कि औरंगज़ेब पैदा हो गया। दारा बादशाह न हो सका। अंग्रेज़ यहाँ आ गये। जुदागाहिना इन्तेख़ाब क़ायम हो गये। तालिबेइल्म होते हुए भी चौधरी रहमत अली ने राउन्ड टेबिल कान्फ़रेन्स के मुस्लिम मेम्बरान के सामने मुल्क की तक़सीम के इस मामले को एक ठीक शक्ल में रखा और उस वक़्त चाहे रहमतअली की तजवीज़ पर उन मेम्बरान ने कोई ख़ास दिलचस्पी न दिखायी हो लेकिन ठीक वक़्त मुस्लिमलीग ने दो क़ौमों के उसूल और पाकिस्तान की स्कीम को पेश कर दिया, नहीं तो सचमुच ही हम कहीं के न रहते।

तोता—आवर लाइफ़ इज़ ए रेग्युलर फ़ीस्ट !

पीरबख़्श—(**तोते की ओर देखकर, फिर जहाँनारा की तरफ़ देखते हुए कुछ मुस्कराकर**) अच्छा, यह अंग्रेज़ी भी बोलता है ?

जहाँनारा—जी हाँ, कुछ यों ही।

पीरबख़्श—पर अरबी, फ़ारसी न बोलता होगा; क्यों ?

[जहाँनारा कोई उत्तर नहीं देती। उसका सिर फिर झुक जाता है। कुछ देर निस्तब्धता।]

पीरबख़्श—माफ़ कीजिएगा, अगर एक बात कहूँ ?

जहाँनारा—आपको माफ़ी माँगने की ज़रूरत नहीं, मिस्टर पीरबख़्श। जिस शख़्स ने मुझे फ़र्ज़ अदा करने का ठीक रास्ता दिखा दिया, वह मुझे सब कुछ कहने का हक़ रखता है।

पीरबख़्श—शुक्रिया ! शुक्रिया ! मैं कह यह रहा था कि दरअसल उस शान्तीप्रिये का आप पर बहुत असर पड़ा है।

जहाँनारा—ऐसा ? **(विचारते हुए)** ऐसा तो नहीं है कि उसीका मुझ पर असर पड़ा हो ; मेरा भी उस पर कम असर नहीं है।

पीरबख़्श—आपका उस पर असर ! मुसलमानों का उनकी क़ूवत के सबब चाहे जो असर पड़े, पर ऐसे कभी कोई असर हिन्दुओं पर पड़ सकता है ? अरे ! उन्होंने तो हमारा माशरती बॉयकॉट करके रखा है।

जहाँनारा—माशरती बॉयकॉट !

पीरबख़्श—जी हाँ, पूरा-पूरा माशरती बॉयकॉट। देखिए खाना-पीना पहली माशरती चीज़ है न ?

जहाँनारा—**(विचारते हुए)** जी हाँ।

पीरबख़्श—मुसलमानों के हाथ का न खाना उन्होंने एक मज़हबी सवाल बना लिया है। कई हिन्दू ऐसे हैं जो मुसलमानों को छूकर नहाते हैं। अरे ! कुछ तो ऐसे भी हैं कि जिनसे मिलने अगर कोई मुसलमान जायें तो जिस कमरे में मुलाक़ात हो, वहाँ की बिछायत, फ़र्नीचर और कमरा धुलवाते हैं। क्यों सच है, या नहीं ?

जहाँनारा—है तो सच।

पीरबख़्श—आप ही मुझसे कहती थीं कि दिल्ली आने के पहले शान्तीप्रिये ने भी आपके हाथ का खाना न खाया था।

जहाँनारा—हाँ, यह भी सच है।

पीरबख़्श—तब भला, उस पर आपका क्या असर हो सकता है ?

[फिर कुछ देर निस्तब्धता।]

तोता—चित्रकूट के घाट पै भई सन्तन की भीर।

तुलसिदास चन्दन घिसैं तिलक देत रघुबीर।

पीरबख़्श—**(हँसते हुए)** और आप पर उसका कितना असर है, इसका सबूत यह तोता है। बस, इतनी ही कसर रह गयी है कि आप बुत-

परस्ती और शुरू कर दें। एक राम की मूरत बनवायें, चन्दन घिसें और उसका पूजन शुरू करें।

[**जहाँनारा जल्दी से उठती है। तोते के पिंजरे को उतारकर अन्दर ले जाती है और ख़ाली हाथ शीघ्रता से वापस लौट आती है।**]

जहाँनारा—उस निगोड़े तोते का नाम तो मैंने आज ही बदलकर शुबराती रख दिया है। उसे नयी-नयी दूसरी चीज़ें सिखाऊँगी और न सीखा तो....

पीरबख़्श—ख़ैर, न सीखा तो....हम मुसलमान तोता तो खाते नहीं, किसी ऐसे शख़्स को दे दीजिएगा जिसके दस्तरख़्वान के काम आ जाए। ....पर सवाल तोते का नहीं है, मिस जहाँनारा, सवाल है हमारी ज़िन्दगी के तमाम पहलुओं पर पड़ते हुए हिन्दुओं के असर का; और इसे अब तक हम समझ भी नहीं रहे हैं। आप जानती ही हैं कि मुस्लिम लीग तमाम मुसलमानों की जमात होनी चाहिए, उस तक के कई मुसलमान ख़िलाफ़ हैं।

जहाँनारा—हाँ, हाँ, अच्छी तरह जानती हूँ; दो क़ौमों के उसूल और पाकिस्तान की कई मुसलमान ही मुख़ालफ़त कर रहे हैं; और इनमें ज़्यादातर हैं कांग्रेसी।

पीरबख़्श—फिर ज़्यादा तादाद उनकी है, जो समझते ही नहीं हैं कि दरअसल हालात क्या हैं। हमें तमाम मुस्लिम क़ौम को मुस्लिम लीग के हमख़्याल बनाने की कोशिश करनी है। हमें उसे समझाना है कि कांग्रेस से ज़्यादा बड़ी उसकी दुश्मन कोई दूसरी जमात नहीं।

जहाँनारा—(**विचारते हुए**) बहुत-सा झगड़ा तो हमारे बीच कांग्रेस ने ही मचवा दिया है।

पीरबख़्श—यही तो हमें अपने भाइयों को समझाना है; और फिर समझाना है यह कि अगर हम ज़िन्दा रहना चाहते हैं, इस्लाम और मुस्लिम तहज़ीब को बचाना चाहते हैं, तो हमें हिन्दुओं के इस असर से बाहर निक-

लना होगा, पाकिस्तान क़ायम करा अपनी क़ौम को उस हिस्से में फुलवाना और फलाना होगा।

जहाँनारा—और इसके लिए अपनी तमाम ज़िन्दगी और जान को भी क़ुर्बान करने को तैयार होना होगा।

पीरबख़्श—बेशक, क्योंकि मुसलमानों के मज़हब, ज़बान, तहज़ीब हर चीज़ की तरक़्क़ी सिर्फ़ मुस्लिम हुकूमत की मातहती में ही हो सकती है; और किसी भी हुकूमत के साये में नहीं। जब दारउल इस्लाम नहीं तब दारउल हरब ही रहता है।

जहाँनारा—और किसी भी एक मुल्क में मुसलमानों की इतनी तादाद नहीं, जितनी इस मुल्क में है।

पीरबख़्श—लेकिन....लेकिन इस मुल्क के मुसलमानों पर इस्लाम, मुसलमानी तहज़ीब से ज़्यादा हिन्दू मज़हब, हिन्दू तहज़ीब का असर है। यहाँ के मुसलमान दरअसल पच्चीस परसेन्ट मुसलमान और पचहत्तर परसेन्ट हिन्दू हैं।

[दोनों एक दूसरे की ओर देखते हैं।]

लघु यवनिका

तीसरा दृश्य

स्थान—दिल्ली के "क्वीन्स गार्डन" का एक हिस्सा

समय—सन्ध्या

[एक तरफ़ एक हौज़ में एक फ़व्वारा चल रहा है। उसके निकट फूलों की कुछ क्यारियाँ हैं। दूसरी ओर दूब के मैदान का कुछ भाग दिखायी देता है। मैदान में बैठने के लिए कुछ बेंचें पड़ी हैं। पीछे की तरफ़ दूर पर "क्वीन्स गार्डन" की इमारत का कुछ हिस्सा और विक्टोरिया की मूर्ति

दिखायी देती है। एक बेंच पर शांतिप्रिय बैठा हुआ सामने की ओर देख रहा है।]

शांतिप्रिय—रुबी ! रुबी !...रुबी...रुबी...रुबी...तु... तु...तु...तु...तु...

[एक सुन्दर कुतिया दौड़ती हुई शांतिप्रिय के पास आ जाती है और अपने सामने के दोनों पैर शांतिप्रिय के दोनों घुटनों पर रख, जीभ निकाल हाँफती और दुम हिलाती है।]

शांतिप्रिय—रुबी, इस तरह दूर नहीं जाना पड़ता, सुना.... सुना, माई डियर रुबी ! **(कुछ रुककर)** जिस तरह जहाँनारा मुझे अकेला छोड़कर अपने साथियों के साथ चल दी, उसी तरह तू भी क्या किसी दिन मुझे अकेला छोड़, अपने साथियों के साथ चल देगी ? **(ध्यान से कुतिया की ओर देखते हुए)** अरे ! उसे तो कल इतना ख़्याल भी न आया, कि मुझे अपनी मोटर में लायी है, इसलिए मुझे घर पहुँचा देना भी उसका फ़र्ज़ है।

कुतिया—भों। भों। भों।

शांतिप्रिय—हाँ, इसी तरह भोंकता हुआ पीरबख़्श चला, उसके पीछे जहाँनारा और सारे मुसलमान।....कैसी अजीब यह क़ौम है ? और कितना एका है इनमें ?....कह देने भर की देर है 'इस्लाम इन डेन्जर', चाहे सच हो या झूठ, और सब के सब मुसलमान....

[नेपथ्य से—भों ! भों ! भों ! भों ! भों !]

शांतिप्रिय—इसी....ठीक इसी तरह जैसे तेरे कान में भों भों की आवाज़ पड़ते ही तू सब कुछ भूलकर सिर्फ़ वही भों भों सुनती.....

[नेपथ्य से—भों ! भों ! भों ! भों ! भों !]

कुतिया—**(सामने की तरफ़ ही देखते हुए)** भों ! भों ! भों ! भों ! **(सामने की ओर दौड़ती है।)**

शांतिप्रिय—और अपने गिरोह में मिलने के लिए दौड़ती.... **(सामने की तरफ़ देखते हुए खड़े होकर)** रुबी ! रुबी !....रुबी.... रुबी....रुबी....रुबी....तु....तु....तु....तु....तु...

[कुतिया लौट आती और शांतिप्रिय के पैरों पर पंजों और सिर को रगड़ते हुए दुम हिलाती है।]

शांतिप्रिय—तू लौट तो आयी, लेकिन 'इस्लाम इन डेन्जर' सुनते ही जहाँनारा के मानिन्द इन्सान भी किसी पुरानी चीज़ की तरफ़ लौटने की बात नहीं करते।....कहाँ....कहाँ गयी मुझ पर की उसकी वह सारी मुहब्बत।...मेरी पैदाइश, मेरे बचपन, मेरे खेलने-कूदने, मेरे पढ़ने-लिखने के वे पुराने क़िस्से; **(कुछ रुककर)** हाँ, हाँ, वे क़िस्से—क़िस्से ही रह गये।

कुतिया—भों ! भों ! भों !

शांतिप्रिय—पीरबख्श की भों भों में भूल गयी वह उन तमाम क़िस्सों को; क्यों ? **(कुछ रुककर)** यहाँ मैं बुलवाया गया था अपने मुल्क और यहाँ रहने वालों को पहचानने के लिए, ज़िन्दगी का अपना मक़सद तय करने के लिए। हम लोगों ने मुल्क की ख़िदमत का एक मुत्तफ़िका प्रोग्राम बनाया था। **(कुतिया को गोद में उठाकर, उसका मुँह देखते हुए)** कितनी....कितनी मर्तबा मैं, रुबी, तुझ से उस प्रोग्राम के मुताल्लिक़ बातें किया करता था, और कितना....कितना जोश था हमारे दिलों में उस प्रोग्राम के लिए, याद है न ?

कुतिया—भों ! भों ! भों !

शांतिप्रिय—हाँ, याद है; तू भला कभी मेरी कोई चीज़ भूल सकती है ?....अरे ! हमने शादी तक न कर उस प्रोग्राम को अमल में लाने का फ़ैसला किया था। मेरी पढ़ाई ख़त्म होते ही हमारा काम शुरू होने वाला था और....और मुझे एम० ए० पास किये देर न हुई कि....

(कुछ रुककर) कुछ दिनों से जहाँनारा के रुख में फ़र्क़ ज़रूर पड़ रहा था, पर कल....कल तो....

कुतिया—भों ! भों ! भों !

शांतिप्रिय—हाँ, पीरबख़्श की भों भों का ऐसा असर हुआ कि मैं तो दंग रह गया। **(कुछ रुककर)** पर मैंने ही उसे क्यों न रोका ?

कुतिया—भों ! भों ! भों !

शान्तिप्रिय—मुझ पर....मुझ पर भी दुर्गा की भों भों का असर था। **(कुछ रुककर)** लेकिन इसके सिवा और हो ही क्या सकता....

[दुर्गा का प्रवेश। दुर्गा को देख शांतिप्रिय कुतिया को गोद से उतार दुर्गा की ओर बढ़ता है। दोनों हाथ मिलाते हैं।]

दुर्गा—अच्छा, आज आप अकेले ही ? मिस जहाँनारा कहाँ हैं ?

शान्तिप्रिय—**(मुस्कराते हुए)** क्यों, क्या मेरा अकेला रहना कोई ताज्जुब की बात है ?

दुर्गा—**(मुस्कराते हुए)** अवश्य, जहाँ मिस जहाँनारा, वहाँ मिस्टर. शान्तिप्रिय, और जहाँ मिस्टर शान्तिप्रिय वहाँ मिस जहाँनारा। उनकी पढ़ाई समाप्त होने पर भी जब तक आप पढ़ते रहे कदाचित् ही कोई दिन गया हो, जब कि वे कालेज न आयी हों और स्वयं वकालत न करने पर भी कोई दिन ही जाता होगा, जब आप कचहरी न जाते हों।

शान्तिप्रिय—**(लंबी साँस लेकर)** लेकिन अब ऐसा न होगा, मिस दुर्गा।

दुर्गा—**(कुछ आश्चर्य से)** क्यों, कोई झगड़ा हो गया ?

शान्तिप्रिय—**(दीर्घ निश्वास छोड़ते हुए)** नहीं, नहीं, झगड़े की कोई बात नहीं, लेकिन....लेकिन....

दुर्गा—कोई न कोई बात तो अवश्य जान पड़ती है। **(शान्तिप्रिय का हाथ पकड़, बेंच पर उसे बिठाते और स्वयं बैठते हुए)** अच्छा, बैठिए, बैठकर बातें हों।

कुतिया—भों ! भों ! भों !

दुर्गा—**(कुतिया की ओर देखते हुए)** क्यों काटेगी क्या ?

शान्तिप्रिय—**(कुतिया के सिर पर हाथ फेरते हुए)** नहीं, नहीं, यह तो बहुत सीधी है ।

दुर्गा—अच्छा, अब बताइए, मिस जहाँनारा से झगड़ा क्यों हुआ ?

शान्तिप्रिय—झगड़ा कहाँ हुआ, मिस दुर्गा ?

दुर्गा—तब ?

शान्तिप्रिय—कुछ नहीं, जब राय में तफ़ावत होती है तब वैसा मेल-जोल नहीं रहता ।

दुर्गा—ऐसा ! . . . . हाँ, यह तो कुछ दिनों से दिख रहा था, कल स्पष्ट हो गया, जब वे पीरबख्श के साथ उठकर गयीं ।

शान्तिप्रिय—उनके उसूलों में अगर फ़र्क़ पड़ा है तो मेरे उसूलों में भी तो, मिस दुर्गा । मैंने भी तो कल बहस में आपका साथ दिया और फिर आपके साथ ही क्लब छोड़कर चला भी आया । अब अगर मिस जहाँनारा और पीरबख्श का साथ रहेगा तो मिस दुर्गा और शान्तिप्रिय का ।

दुर्गा—**(प्रसन्नता से)** आप सदृश साथी को पाकर मैं अपने को धन्य मानती हूँ ।

शान्तिप्रिय—'धन्य' कहकर तो आप मुझ पर बड़ा वज़न लाद रही हैं ।

दुर्गा—कभी नहीं, मैं जो कुछ कहती हूँ, समझ-बूझकर ही कहती हूँ; और मुझे दुख यही है कि 'धन्य' से बड़ा और कोई शब्द मुझे मिल नहीं रहा है, नहीं तो मैं उसका उपयोग करती । कल जब आपने वाद-विवाद में मेरा साथ दिया और अन्त में मेरे साथ उठकर चले आये, तब मुझे जो प्रसन्नता हुई, वह मैं शब्दों में व्यक्त नहीं कर सकती, परन्तु मुझे एक भय था ।

शान्तिप्रिय—कौन-सा ?

दुर्गा—यह कि आपका वह सारा कार्य क्षणिक आवेश ही न हो। आज उसमें स्थायित्व देखकर मेरे आनन्द की सीमा नहीं है।

शान्तिप्रिय—लेकिन, मिस दुर्गा, आपको इस साथ से कोई फ़ायदा भी होगा ?

दुर्गा—मुझे ही नहीं, समस्त हिन्दू जाति को इससे लाभ पहुँचेगा; और कितना लाभ पहुँचेगा, इसकी आज कल्पना भी नहीं की जा सकती। आपके सदृश विद्वान, चरित्रवान व्यक्ति के संग को पाकर आज तो मैं ही अपने को धन्य मानती हूँ, पर. . . .पर वह समय समीप है, जब सारी हिन्दू जाति आपके कारण अपने को धन्य मानेगी। और इसका कारण है।

[शान्तिप्रिय कोई उत्तर न देकर प्रश्न-सूचक दृष्टि से दुर्गा की ओर देखता है।]

दुर्गा—इसका कारण यह है कि आज हिन्दू जाति पर जैसा संकट आया है, वैसा उसके इतिहास में इसके पहले कभी न आया था।

शान्तिप्रिय—**(उत्सुकता से)** ऐसा ?

दुर्गा—हाँ, इस बात के लिए मैं आपको प्रमाण देती हूँ। आप यह तो जानते ही हैं कि मैंने यदि किसी विषय का अध्ययन करने का प्रयत्न किया है तो हिन्दू-धर्म का, हिन्दू-इतिहास का, हिन्दू-सभ्यता और संस्कृति का, हर ऐसी वस्तु का जिससे हिन्दुओं का प्रत्यक्ष या परोक्ष, किसी न किसी प्रकार का सम्बन्ध है।

शान्तिप्रिय—आप मेरे साथ ही पढ़ी हैं इस बात को मैं भूला नहीं हूँ।

दुर्गा—यही कारण है कि मैं बी० ए० में फ़ेल होते-होते बची और एम० ए० में मुझे तीसरी श्रेणी मिली।

शांतिप्रिय—आप निसाबी किताबें पढ़ती ही नहीं थीं।

दुर्गा—कैसे पढ़ती, शान्तिप्रिय जी, जिस जाति में जन्म लिया है, हृदय तो उसकी दशा के कारण आठों पहर जला करता था।

शान्तिप्रिय—धन्य है आपका दिल, जो क़ौम के लिए इस तरह जलता था और आज भी जला करता है।

दुर्गा—(**मुस्कराकर**) धन्य कहकर आप कदाचित् मुझे बदला चुका रहे हैं।

शान्तिप्रिय—(**गम्भीरता से**) नहीं, मिस दुर्गा, सचमुच आप और वे सभी धन्य हैं, जिनके दिलों में क़ौम के लिए इतनी मुहब्बत है।

दुर्गा—अब आप भी उन्हीं में से एक हो जायँगे। (**कुछ रुककर**) तो....तो मैं आपको इसके प्रमाण देती हूँ कि जैसा संकट हिन्दू जाति पर आज आया है, वैसा इसके पहले कभी न आया था। इस जाति पर अब तक जितने संकट आये हैं उनका कारण था अन्य जातियाँ ही न? देश के बाहर के आक्रमण ही तो?

शान्तिप्रिय—(**विचारते हुए**) हाँ, और क्या?

दुर्गा—पर आज हिन्दू ही हिन्दुओं की आपत्तियों का कारण हैं। हिन्दुओं पर हिन्दुओं का ही आक्रमण हुआ है।

कुतिया—भों! भों! भों!

दुर्गा—(**कुतिया की ओर देखकर**) यह जिस प्रकार भोंक रही है न, उसी प्रकार हिन्दू-धर्म, हिन्दू-संस्कृति पर आज हिन्दू ही भोंक रहे हैं।

शान्तिप्रिय—(**विचारते हुए**) हाँ, यह तो सच है।

दुर्गा—(**कुछ उत्साह से**) हिन्दुओं को अपने धर्म और संस्कृति पर विश्वास नहीं है, इतना ही नहीं, वे अपनी हर वस्तु की जड़ खोदकर उसे बहा देना चाहते हैं।

शान्तिप्रिय—अच्छा।

दुर्गा—एक ही दृष्टान्त देती हूँ। आप जानते हैं पशु से मनुष्य को पृथक करने वाली सबसे पहली वस्तु है उसकी भाषा। इसीलिए हर संस्कृति में भाषा का पहला स्थान है।

शान्तिप्रिय—हाँ, इसीलिए फ़तह करने वाले फ़तह होने वालों पर अपनी भाषा लादते हैं।

दुर्गा—ठीक। हमने पहले अपनी भाषा पर ही कुल्हाड़ा चलाना आरम्भ किया है।

शान्तिप्रिय—कैसे ?

दुर्गा—हिन्दी संस्कृत से निकली है। संस्कृत शब्दों का उसमें रहना एक स्वाभाविक बात है। हिन्दी का एक परिमार्जित रूप हो गया है। अब हम उसके संस्कृत शब्द चुन-चुनकर निकाल रहे हैं और उनका स्थान दे रहे हैं अरबी और फ़ारसी के शब्दों को। हिन्दोस्तानी भाषा बनायी जा रही है, जैसे भाषा कोई बनाने की वस्तु हो।

शान्तिप्रिय—(**विचारते हुए**) हाँ, यह तो हो रहा है।

दुर्गा—भाषा का तो मैंने एक दृष्टान्त दिया है। हर बात में यही हो रहा है। हमारे पूर्वजों ने बाहर से आने वालों को या तो अपने में विलीन कर लिया, या उनसे असहयोग किया। शक, हूण हममें विलीन हो गये।

शान्तिप्रिय—बिल्कुल।

दुर्गा—मुसलमानों से हमने असहयोग किया और साधारण असहयोग नहीं, कड़े से कड़ा असहयोग ! आप यदि इस देश के प्राचीन इतिहास को ध्यानपूर्वक देखें तो आपको ज्ञात हो जायगा कि हमारे यहाँ खाने-पीने की जो छुआछूत दीख पड़ती है, वह मुसलमानों के भारत में आने के पूर्व न थी।

शान्तिप्रिय—अच्छा।

दुर्गा—मुसलमानों के साथ हमारा किसी प्रकार का भी सम्पर्क न रहे, इसीलिए सामाजिक-व्यवहार की जो पहली वस्तु—खाना-पीना है, उसे हमने धार्मिक रूप दे दिया।

शान्तिप्रिय—(**विचारते हुए**) लेकिन यह छुआछूत तो हिन्दू-हिन्दुओं के बीच में भी है।

दुर्गा—यह तो पीछे से हुआ। देश बहुत बड़ा है, आवागमन के जैसे सुविधे आज हैं, वैसे पहले न थे, इसलिए किसी हिन्दू दिख पड़ने वाले मुसलमान से भूलकर भी खान-पान न हो जाय, इससे पूर्ण परिचित व्यक्ति के अतिरिक्त किसी के भी हाथ का हिन्दुओं ने खाना ही छोड़ दिया था। धीरे-धीरे छुआछूत के प्रधान उद्देश्य को हम भूल गये और आपस में भी छुआछूत आ गयी। यथार्थ में इसका जन्म हुआ था मुसलमानों से असहयोग के कारण।

शान्तिप्रिय—ऐसा ?

दुर्गा—जी हाँ, ध्यानपूर्वक देखिए इतिहास और आपको ज्ञात हो जायगा कि जो कुछ मैं कह रही हूँ वह अक्षरशः सत्य है।

[कुछ देर निस्तब्धता।]

दुर्गा—एक देश में एक ही राष्ट्र रह सकता है, यह पीरबख्श सर्वथा ठीक कहता था। एक राष्ट्र के प्रधान लक्षण भी उसने ठीक बताये थे।

शान्तिप्रिय—याने एक मज़हब, एक ज़बान और एक तहज़ीब ?

दुर्गा—जी हाँ। इसलिए पारसी, कुछ पश्चिमी छोटी-छोटी अल्पमत जातियों के सिवा या तो इस देश में हिन्दू रह सकते हैं या मुसलमान। वैदिक, बौद्ध, जैन, सिक्ख, इन सब धर्मों का जन्म हिन्दुस्तान में ही हुआ, अतः ये हिन्दू-धर्म के ही अन्तर्गत हैं। हिन्दी, बँगला, मराठी, गुजराती, तैलगू, तामिल आदि भाषाएँ या तो संस्कृत से निकली हैं या प्राचीन द्राविड़ भाषा से, अतः ये सब हिन्दुस्तान की भाषाएँ हैं। संस्कृति तो हमारी एक है ही। बदरिकाश्रम से रामेश्वर तक और....और जगदीशपुरी से द्वारकापुरी तक कहीं भी चले जाइए, हिन्दुओं के त्योहार एक, उनकी रीतियाँ एक-सी, उनके सारे कला-कौशल एक प्रकार के।

शान्तिप्रिय—हाँ, औरतें सब जगह साड़ियाँ पहनती हैं और मर्द धोती।

दुर्गा—**(मुस्कराकर)** ठीक। संयुक्त राष्ट्र और संयुक्त संस्कृति का यह विचार ही भ्रम, महान् भ्रम है। आप जानते हैं, बादशाह अकबर

ने जब 'दीनेइलाही' नामक धर्म निकाला, और राजा मानसिंह से उसे स्वीकार करने के लिए कहा, तब मानसिंह ने उसे क्या उत्तर दिया था ?

शान्तिप्रिय—तारीख़ मेरा मज़मून नहीं रहा है; बताइए।

दुर्गा—मानसिंह ने कहा कि वे या तो हिन्दू-धर्म जानते हैं, या इस्लाम। बादशाह यदि चाहें तो वे हिन्दू-धर्म छोड़कर इस्लाम ग्रहण करने को प्रस्तुत हैं, परन्तु 'दीनेइलाही' क्या है यह उनकी समझ में नहीं आता।

शान्तिप्रिय—**(विचारपूर्वक)** ठीक।

दुर्गा—तो या तो आप हिन्दू रहकर अपने धर्म, अपनी भाषा, अपनी संस्कृति की उन्नति कर मुसलमानों को उसमें लीन करने का प्रयत्न कीजिए, और या फिर आप स्वयं उनमें लीन हो जाइए।

शान्तिप्रिय—**(विचारते हुए)** पर वह सब हममें लीन हो जायँगे ?

दुर्गा—सब न भी हुए तो बहुत से हो जायँगे और थोड़े से रह गये तो वे पारसियों तथा अन्य पश्चिमी जातियों के अल्पमत के सदृश पड़े रहेंगे।

शान्तिप्रिय—**(गम्भीरता से विचारते हुए)** हाँ, उस वक़्त वे इस तरह परेशान तो न कर सकेंगे।

दुर्गा—सर्वथा ठीक कहते हैं आप। **(कुछ रुककर)** हिन्दू-धर्म में गंगा को क्यों इतना महत्त्व है, जानते हैं आप ?

शान्तिप्रिय—मैंने धर्म भी बहुत कम पढ़ा है; आप ही कहिए।

दुर्गा—गंगा में जो हड्डियाँ पड़ती हैं, वे भी कुछ दिनों में उसके भीतर के पत्थरों का रूप ग्रहण कर लेती हैं। उसमें जो नदियाँ मिलती हैं, उनका पानी भी गंगा के सदृश हो जाता है। इसीलिए तो अपनी बराबर की यमुना को भी अपने में विलीनकर, गंगा, गंगा ही रहकर समुद्र में मिलती है।

शान्तिप्रिय—**(प्रसन्नता से)** क्या ख़ूब !

दुर्गा—**(और भी उत्साह से, फ़व्वारे को देखते हुए)** और फिर गंगा की धारा इस फ़व्वारे के सदृश निर्बल नहीं, जिसकी बूंद पृथक-पृथक होकर

कुण्ड में अपना अस्तित्व खो रही हैं। उस धारा में शक्ति है, अपने में गिरने और पड़ने वाली समस्त वस्तुओं को बहा ले जाने का बल।

शान्तिप्रिय—**(कुतिया को न देखकर, चारों ओर देख)** रुबी ! रुबी ! ...रुबी रुबी....रुबी....तु....तु....तु....तु....तु...

[कुतिया लौटकर आती और दोनों सामने के पैरों को शान्तिप्रिय के घुटनों पर रख, जीभ निकाल हाँफती और दुम हिलाती है।]

दुर्गा—**(कुतिया को देखते हुए)** इसका नाम रुबी है ?

शान्तिप्रिय—जी हाँ।

दुर्गा—क्षमा कीजिएगा, यदि एक बात कहूँ।

शान्तिप्रिय—आप को अब किसी बात के कहने में भी मुझसे क्षमा माँगने की ज़रूरत नहीं।

दुर्गा—धन्यवाद। इसका नाम बदलकर सिंहनी रखिए।

शान्तिप्रिय—सिंहनी ?

दुर्गा—जी हाँ, हिन्दू जाति में आज सबसे अधिक किस बात की आवश्यकता है, जानते हैं ?

शान्तिप्रिय—किस चीज़ की ?

दुर्गा—प्रखरता की, तेज की। आज जो हिन्दू हैं, उन पर इस्लाम और मुस्लिम संस्कृति का इतना प्रभाव है कि वे पच्चीस परसैन्ट हिन्दू रह गये हैं और पचहत्तर परसैन्ट हो गये हैं मुसलमान।

शान्तिप्रिय—आप बिल्कुल ठीक कहती हैं, मैं खुद ही ऐसा हूँ।

दुर्गा—और बिना इस प्रखरता और तेज के हिन्दू अब पूरे हिन्दू नहीं बन सकते। उनके पूरे हिन्दू, तेजस्वी हिन्दू हुए बिना वे, अहिंसा का सिद्धान्त प्रतिपादनकर हिन्दुओं की जड़ को और भी खोखली बनाने वाली, मुसलमानों को प्रसन्न करने के लिए संयुक्त भाषा तथा संयुक्त संस्कृति का दम भरने वाली हिन्दुओं की सबसे बड़ी शत्रु और अधर्मी कांग्रेस का सामना नहीं कर सकते। मैंने कहा न, यह समय हिन्दू-जाति के लिए

सबसे अधिक संकट का है। हिन्दू हिन्दुओं की आपत्ति का कारण है, हिन्दुओं पर हिन्दुओं का ही आक्रमण हुआ है अन्यथा जिस कांग्रेस में हिन्दुओं का बहुमत है, उसका कभी यह ढंग हो सकता था ?

[शान्तिप्रिय कुतिया को पुचकारते हुए दुर्गा की तरफ़ देखता है, दुर्गा शान्तिप्रिय की ओर। कुछ देर सन्नाटा।]

दुर्गा—और फिर एक बात को कभी न भूलिएगा।

शान्तिप्रिय—कौन-सी ?

दुर्गा—हिन्दुओं को हिन्दुस्तान के बाहर देखने के लिए और कुछ भी नहीं है, पर जहाँ तक मुसलमानों का सम्बन्ध है, हिन्दुस्थान से लगे हुए कितने मुस्लिम राष्ट्र और देश हैं।

शान्तिप्रिय—हाँ, हाँ, मुसलमानों का बहदने इस्लामी रुख थोड़े ही गया है।

दुर्गा—मिश्र की स्वाधीनता, फ़िलिस्तीन के अरबों के आन्दोलन, अलबानिया के इटली की अधीनता में जाने के समय, सभी अवसरों पर हिन्दुस्थान के मुसलमानों ने इस देश में किसी न किसी प्रकार की हलचल की है।

शान्तिप्रिय—मैं आपकी कुल नसीहत का एक ही निचोड़ निकालता हूँ। अगर हमें मुसलमान नहीं हो जाना है, इस मुल्क पर फिर से मुस्लिम हुकूमत क़ायम नहीं कराना है, तो हमें हिन्दू महासभा का साथ देकर उसे मज़बूत से मज़बूत जमात बना देना चाहिए।

दुर्गा—कितना सुन्दर सार निकाला है आपने मेरे कथन का। मैंने कहा ही था कि आप सदृश विद्वान और चरित्रवान साथी को पाकर मैं तो धन्य हो ही गयी, पर वह समय दूर नहीं है जब सारी हिन्दू जाति धन्य हो जायगी।

[दोनों एक दूसरे की ओर देखते हैं।]

कुतिया—भों ! भों ! भों !

लघु यवनिका

चौथा दृश्य

स्थान—संयुक्तप्रान्त के उत्तरी छोर पर पंजाब की सीमा से लगे हुए एक गाँव का खेत

समय—तीसरा पहर

[दूर पर गाँव के कुछ झोपड़ों का बाहरी भाग दिखायी देता है। उनके बीच-बीच में कुछ पक्के से मकानों के हिस्से भी दिखते हैं। सबसे ऊँचा मन्दिर का एक शिखर और उसके सामने ही मसजिद की दो मीनारें दिखायी पड़ती हैं। खेत की जमीन से जान पड़ता है कि खेत बोया नहीं जा सका और पड़ गया है। खेत में कुछ हिन्दू, मुसलमान किसान और मजदूर बैठे हुए हैं। उनकी वेष-भूषा पंजाब के किसान-मजदूरों की-सी है और हिन्दू-मुसलमानों की वेष-भूषा में कोई फ़र्क़ नहीं। इनमें कुछ युवकों के बाल और कपड़े शहरातियों जैसे हैं। इन्हीं में महफ़ूजख़ाँ है। महफ़ूजख़ाँ की उम्र २३-२४ वर्ष की दिखती है। वह गेहुएँ रंग का, ऊँचा-पूरा, बलिष्ठ युवक है। जान पड़ता है ये युवक गाँव के होते हुए भी शहर से पढ़-लिखकर गाँव को लौटे हैं।]

एक किसान—भगवान को तो इस बरस दोस नहीं दिया जा सकता।

दूसरा किसान—हाँ, खुदा का इस बरस क्या कसूर, चौधरी ?

तीसरा किसान—ठीक बखत पानी बरसा, न जादा न कमती, मुल्ला जी।

चौथा किसान—और बीच-बीच में ठीक बखत खुला भी रहा, चौधरी।

चौधरी—बैल होते तो **(खेत की ओर इशाराकर)** इस तरह जमीन पड़ती पड़ जाती ?

मुल्ला—कमायी जाती, बोयी जाती।

पहला मजदूर—हमें भी काम मिलता।

दूसरा मजदूर—हाँ, हमारी भी यह हालत थोड़े ही होती।

तीसरा किसान—पर बीज भी पूरा कहाँ था ?

चौथा किसान—हाँ, परसाल हुआ ही क्या ?

पाँचवाँ किसान—और जो हुआ, वह ले गया जमींदार।

छठवाँ किसान—बचा हुआ चला गया साहूकार के सूद में।

सातवाँ किसान—और भी जो बचा था सो सरकारी तकाबी में चला गया।

आठवाँ किसान—जमींदार और साहूकार को देने के बाद भी मैंने तो बड़ी कोसिस से थोड़ा-बहुत बोने के लिए बचाया था।

पाँचवाँ किसान—फिर वह कहाँ गया ? तुम्हारी जमीन भी तो पड़ गयी।

आठवाँ किसान—जब खाने को न रहा, और जब बच्चों का बिलखना न देखा गया, तब खा गये उसे सब मिलकर।

तीसरा किसान—भई, मेरे पास भी थोड़ा-सा अनाज न बचा हो, यह नहीं, पर बदन ढाँकने को चिथड़े भी न बचे थे, औरतों के पास तक कपड़े न थे। अनाज बेंचकर कपड़ा लेना पड़ा; इज्जत तो बचानी ही पड़ती।

चौथा किसान—और मेरे पास भी थोड़ा-सा न बचा हो, ऐसी बात नहीं, पर तुम सब जानते ही हो, घर में दो-दो खाट बिछी हैं। डाक्टर बैद न सही, पर घर की दवा-दारू में भी पैसा तो लगता ही है। मुल्ला की दौड़ मस्जिद तक; किसान की दौड़ नाज तक। बचा-खुचा दवाई खा गयी और फिर भी बीमारी में कोई फायदा नहीं, शहर ले जाने की औकात कहाँ ?

छठवाँ किसान—सब एक ही नाव में हैं।

तीसरा मजदूर—हाँ, सब किसान मजदूर।

पाँचवाँ किसान—और वह नाव अब चल नहीं सकती।

चौथा किसान—एक छेद हो तो चले।

तीसरा किसान—ठीक तो है, जमींदार का छेद, साहूकार का छेद।

एक युवक—और सरकारी छेद नहीं ?

दूसरा युवक—हाँ, सबसे बड़ा छेद तो वह है जो हमारी नाव में ही नहीं, पर जमींदार और साहूकार की नावों में भी है।

महफ़ूज़ख़ाँ—पर ज़मींदार और साहूकार न हों तो सरकारी छेद से नाव नहीं डूब सकती।

पहला युवक—(**मुस्कराकर**) ये बोले साम्यवादी !

चौधरी—साम्य....साम्य....क्या कहा तुमने ?

पहला युवक—एक मत निकला है, चाचा, उसे साम्यवाद कहते हैं।

मुल्ला—कोई मजहब है ?

पहला युवक—नहीं, ताऊ, मज़हब नहीं एक....क्या कहूँ ?.....

दूसरा युवक—फ़िरक़ा है....फ़िरक़ा।

मुल्ला—फिरका ? क्या कहता है यह फिरका ?

दूसरा युवक—वह इतना थोड़ा थोड़े ही है कि दो-चार फ़िक़रों में समझाया जा सके। पुराण और क़ुरान से भी बड़ी हैं इनकी किताबें !

महफ़ूज़ख़ाँ—किताबें चाहे पुराण और क़ुरान से भी बड़ी हों, पर साम्यवाद जो कहता है, वह थोड़े से में, बल्कि एक फ़िक़रे में भी, समझाया जा सकता है; उसी तरह जिस तरह सारी रामायण की राम-कथा—'आदौ राम तपो वनादि गमनम्', भागवत की कृष्ण-कथा—'आदौ देव देवकी गर्भ जन्मं' एक-एक श्लोक में आ जाती है, जिस तरह इस्लाम का तमाम सार—'लाइलाहिलइल्लाह' एक कलमे में आ जाता है।

चौधरी—(**मुल्ला से**) मुल्ला जी, महफूज शहर से कुछ पढ़कर आया है, ऐसे ही नहीं।

मुल्ला—(**मुस्कराकर**) हाँ, मालूम तो यही पड़ता है। मैं भी चाहता था, चौधरी, अपने बच्चे को शहर पढ़ने भेज दूँ, पर कहाँ है पैसा

पढ़ाने को। **(महफ़ूजखाँ से)** अच्छा, एक फिकरे में बताओ क्या कहता है यह फिरका ?

महफ़ूजखाँ—यह फ़िरक़ा कहता है, ताऊ, ज़मींदार नहीं होना, साहूकार नहीं होना, पूँजीपति नहीं होना।

तीसरा किसान—और होना क्या ?

महफ़ूजखाँ—किसान होना, मजदूर होना, और कम से कम अभी कुछ समय तक सरकार होना।

पहला मजदूर—मजदूर तो होना न ?

महफ़ूजखाँ—मज़दूर ? **(कुछ सोचकर)** बल्कि एक मज़दूर ही होना; साम्यवाद यह कहता है, यह भी कह सकते हो।

पहला मजदूर—(दूसरे से हाथ मिलाते हुए) देखा, नया फिरका यह कहता है—मजदूर होना, एक मजदूर ही होना, और कोई नहीं।

तीसरा मजदूर—पर, भाई, मैं तो मजदूर नहीं रहना चाहता। अगर मुझे जमीन मिल जाये, या जैसे मेरे दादा, परदादा, कपड़ा बुनते थे, उस तरह का कोई काम मिल जाये, तो मैं तो मजदूरी छोड़ दूँ।

महफ़ूजखाँ—यह तुम इसलिए कहते हो, काका, कि साम्यवाद में मज़दूरी शब्द का जो मतलब है, वह तुम नहीं समझे। ज़मीन जोतोगे तो, काम तो करना पड़ेगा न ?

तीसरा मजदूर—काम से मैं जी थोड़े ही चुराता हूँ।

महफ़ूजखाँ—और कपड़ा बुनोगे, या और कोई भी हुनर करोगे तो भी काम तो करना पड़ेगा ?

तीसरा मजदूर—जरूर।

महफ़ूजखाँ—ज़मींदार, साहूकार, पूँजीपति को क्या करना पड़ता है ?

तीसरा मजदूर—(विचार में कुछ रुककर दूसरे मजदूर की ओर देखते हुए) क्यों, भाई, जमींदार, साहूकार और पूँजीपति को क्या करना पड़ता है ?

दूसरा मजदूर—(**विचार में कुछ रुककर, पहले मजदूर की तरफ़ देखते हुए**) बताओ न, भाई, जमींदार, साहूकार और पूंजीपति को क्या करना पड़ता है ?

पहला मजदूर—(**विचार में कुछ रुककर, चौधरी से**) आप बुजरग हैं, आप बताइए जमींदार, साहूकार और पूंजीपति को क्या करना पड़ता है।

चौधरी—(**विचार में कुछ रुककर, मुल्ला से**) मुल्ला जी, आप बताइए—जमींदार, साहूकार और पूंजीपति को क्या करना पड़ता है ?

मुल्ला—(**विचारते हुए कुछ रुककर**) जमींदार, साहूकार और पूंजीपति को क्या करना पड़ता है ? (**कुछ रुककर**) क्या....क्या करना पड़ता है, कुछ समझ में नहीं आता।

महफ़ूजखाँ—(**हँसते हुए**) समझ में क्या आये, ताऊ, कुछ करना पड़ता हो, तब तो समझ में आवे; कुछ नहीं करना पड़ता, मुतलक़ नहीं। करना सब कुछ पड़ता है किसानों को, मजदूरों को। आप लोग बरसात के मूसलाधार बरसते हुए पानी की परवाह न कर उन्हीं पैरों को, जिनकी उँगलियाँ पानी की नमी से पैदा हुई कँदरियों से सड़ी रहती हैं, दिन भर कीचड़ में रखकर ज़मीन को जोतते हैं, जाड़े की बरफ़ीली ठंडी रातों में शरीर ढाकने के लिए पूरा कपड़ा न होने पर भी काँपते और दाँत कटकटाते हुए फ़सल की रक्षा के लिए न जाने कितनी रातें जागते-जागते बिता देते हैं और गरमी की दुपहरी में तन्दूर-सी तपती हुई धरती पर बिना जूते ही खड़े हो झुलसती हुई लू में अनाज उड़ा-उड़ाकर इकट्ठा करते हैं। कारखानों में भी आपको अपना ख़ून पसीना बनाकर बहाना पड़ता है। आपके कान लगातार मशीनों की आवाज़ सुनते-सुनते बहरे से हो जाते हैं। आपका स्वर मशीनों के कर्कश स्वर-सा हो जाता है। अरे! आपके दिल और दिमाग़, ताज़ापन क्या है यह तक भूल जाते हैं। जानवरों की गुफाओं से भी बदतर मकानों में आपको रहना पड़ता है। जिसमें किसी तरह का

भी सत नहीं रहता, ऐसा खाना खाना पड़ता है। इस प्रकार की रहन-सहन के सबब से न जाने कितनी बीमारियाँ आपके पीछे लग जाती हैं और कई तो उन मशीनों में एक के दो, और दो क्या, न जाने कितने, होकर देखते-देखते कट-मर जाते हैं। आप किसान मज़दूर काम करते हैं, उन कामों को करते हुए बेशुमार अकथनीय कष्ट उठाते हैं। ज़मींदार, साहूकार, पूंजीपति, कोई भी काम नहीं करते; वे तो आपके काम पर ज़िन्दा रहते हैं, और ज़िन्दा रहते हैं मामूली तौर से नहीं, पर गुलछर्रे उड़ाते हुए। किस तरह इनका जीवन चलता है—महलों और उद्यानों में, वह आप लोगों में से कौन नहीं जानता? और....और यह होता है आपके गटर के समान घरों में रहते हुए, आपके भूख से तड़पते हुए, आपको चिथड़े भी नसीब न होते हुए, अरे! बीमारी तक में आपको दवा न मिलते हुए! जो हाथों से काम करते हैं, चाहे वह कोई भी काम क्यों न हो, उन्हें साम्यवाद मज़दूर कहता है। इन्हीं को जीने का हक़ है और जो काम नहीं करते, उन्हें वह ख़त्म कर देना चाहता है; सुना आप लोगों ने, समाप्त।

[महफ़ूजख़ाँ का यह लम्बा भाषण सारे समुदाय को स्तब्ध-सा कर देता है। कुछ देर सन्नाटा-सा छा जाता है और सब लोग एक दूसरे का मुंह देखते रहते हैं।]

मुल्ला—और तुमने कहा था न, बेटा, कि यह फिरका कहता है—सरकार होना—

महफ़ूजख़ाँ—हाँ; ताऊ, यह फ़िरक़ा कहता है—फ़िलहाल सरकार होना। पर ऐसी विदेशी लूटने वाली डाकू सरकार नहीं, जिसका काम इस देश का सच्चा ख़ून अर्थ को चूस-चूसकर विलायत को लाल बनाना है, जिसने यहाँ के अन्नदाता किसानों को मुट्ठी-मुट्ठी अन्न के लिए मोहताज कर भिखमंगा बना दिया है, जिसने यहाँ के उद्योगी कलाकारों में से किसी के अँगूठे कटवा तथा किसी को किसी तरह और किसी को किसी तरह की तकलीफ़ें दे-देकर यहाँ के उद्योग-धन्धों को इसलिए नष्ट किया है कि तरह-तरह के

विलायती माल के लिए यह मुल्क एक अच्छा-सा बाज़ार भर रह जावे। यह लुटेरी और डाकू सरकार यहाँ अगर किसी की सच्ची सरकार है तो इन लुटेरे और डाकू ज़मींदारों, साहूकारों, और पूँजीपतियों की। यह सभी जानते हैं कि 'चोर-चोर मौसेरे भाई' होते हैं। साम्यवाद चाहता है इस देश की सरकार और इस देश में भी मज़दूरों की सरकार।

मुल्ला—ऐसा ?

महफ़ूज़ख़ाँ—जी हाँ, मैं तो हाल ही पढ़कर लौटा हूँ, पर आप लोगों की बातों से मालूम हुआ कि गये साल यहाँ फ़सल अच्छी नहीं आयी।

चौधरी—अच्छी नहीं क्या, बहुत खराब आयी।

महफ़ूज़ख़ाँ—और इतने पर भी आप लोगों को लगान देना पड़ा ?

पाँचवाँ किसान—हाँ, जमींदार ने पटवारी को कुछ दे-लेकर रपट लिखवा दी कि अच्छी फसल आयी; लगान लग गया।

छठवाँ किसान—और साहूकार भी सूद वसूल कर सके, अदालत डिगरियों की जारी मुल्तवी न कर दे, इसलिए उसने कोसिसकर लगान के साथ ही सरकारी तकावी की भी वसूली बुलवा दी।

महफ़ूज़ख़ाँ—मज़दूरों की सरकार यह सब नहीं कर सकती। ज़मींदार और साहूकार तो उस सरकार के ज़माने में रह ही नहीं सकते। फिर जो सरकार आपकी होगी, वह कभी आप पर ज़ुल्म कर सकती है ? सोचिए, आपके हाथ में लगान लगाने और माफ़ करने का इख़्त्यार हो तो आप ऐसी साल लगान लगायँगे ?

बहुत से व्यक्ति—(एक साथ) कभी नहीं, कभी नहीं।

महफ़ूज़ख़ाँ—बल्कि जिस तरह बिना बैलों के ज़मीन न सुधरी, बीज की कमी के सबब बहुत-सी ज़मीन पड़ गयी, यह सब आपकी सरकार के ज़माने में नहीं हो सकता। कठिनाई के समय इन सब बातों का प्रबन्ध सरकार करेगी; इतना ही नहीं, गये साल पानी न बरसने या कम बरसने से जिस तरह फ़सल न आयी, ऐसा भी न होगा।

पहला युवक—(हँसते हुए) वह सरकार पानी भी बरसा देगी।

[कुछ लोग हँसने लगते हैं।]

महफ़ूजखाँ—पानी न बरसायगी, पर आज भी जिस तरह कई गाँवों को नहरों से पानी मिलता है उसी प्रकार उस सरकार के राज्य में हर गाँव में आबपाशी और इसी तरह के दूसरे सुधार होंगे, जिनकी वजह से ख़राब फ़सल आने के मौक़े नहीं के बराबर रह जायँ; और फिर भी अगर कभी फ़सल बिगड़े ही, तो लोगों को सरकार से हर तरह की सहायता मिलेगी।

तीसरा मजदूर—और हम मजदूरों का क्या होगा, यह बताओ?

महफ़ूजखाँ—सबसे पहले तो ये कारख़ाने पूँजीपतियों के न रहकर मज़दूरों के हो जायँगे।

दूसरा मजदूर—(आश्चर्य से) मजदूरों के हो जायँगे?

महफ़ूजखाँ—जी हाँ।

पहला मजदूर—(विचारते हुए) पर मजदूर तो बहुत हैं, सब के कारखाने कैसे होंगे?

महफ़ूजखाँ—कारख़ाने होंगे सरकार के, और सरकार होगी मज़दूरों की। आपको तो अच्छा घर, अच्छा खाना, पहनना, बीमारी के वक़्त इलाज, बच्चों की पढ़ाई, यही सब चाहिए न?

दूसरा मजदूर—हाँ, हाँ, और क्या?

महफ़ूजखाँ—मज़दूरों की सरकार का पहला कर्तव्य होगा कि वह ये सब बातें देखे।

तीसरा मजदूर—भाई, मुझे तो खुद अपने लिए कोई वैसा पेशा चाहिए जैसे मेरे दादा, पर दादा करते थे।

महफ़ूजखाँ—(विचारते हुए) एक-एक व्यक्ति को उस तरह का स्वतन्त्र पेशा देना तो साम्यवाद के उसूलों के ख़िलाफ़ है।

चौधरी—पर हम सब की जमीन तो हमारी अलग-अलग ही रहेगी न?

पहला युवक—नहीं, चाचा, यह भी साम्यवाद के सिद्धान्त के ख़िलाफ़ है।

चौधरी—तब क्या होगा ?

पहला युवक—जिस तरह कारख़ाने सरकार के हो जायँगे, उसी प्रकार ज़मीन भी सरकार की हो जायगी।

पाँचवाँ किसान—तो जमींदार की जमीन न हुई, वह हो गयी सरकार की; हमें क्या फायदा हुआ ? **(उत्तेजना से)** ऐसी सरकार हमें नहीं चाहिए।

सातवाँ किसान—**(और उत्तेजना से)** हाँ, हाँ, नहीं....नहीं चाहिए।

महफ़ूजख़ाँ—**(कुछ चिढ़कर)** पर आप लोग एक बात तो समझते ही नहीं।

छठवाँ किसान—**(अधीर होकर)** कौन-सी ?

महफ़ूजख़ाँ—वह सरकार ही जो आपकी होगी।

[कुछ देर सन्नाटा।]

आठवाँ किसान—कहो, भाई ! क्या कहना है पंचों का ?

दूसरा युवक—पर सूत, न कपास, जुलाहों में लठा, लठी। कहाँ है वह सरकार ?

चौधरी—**(महफ़ूजख़ाँ से)** बोल, भाई।

महफ़ूजख़ाँ—उसे स्थापित करना ही तो हम लोगों का काम है।

मुल्ला—ऐसा ? जैसे अब तक हम सुराज की कोसिस करते थे, उसी तरह अब इस तरह की सरकार कायम करने की कोसिस करें ?

महफ़ूजख़ाँ—स्वराज्य का सच्चा मतलब ही इस तरह की सरकार की स्थापना है।

चौधरी—यह सब तो ठीक ही होगा, पर, भाई, हमारे सामने तो कल से खाने का सवाल है।

मुल्ला—हाँ, कल से ही हम क्या खायँगे ?

तीसरा किसान—कैसे अपने तन ढाँकेंगे ?

चौथा किसान—कैसे पड़ती जमीन सुधारेंगे ?

पाँचवाँ किसान—हाँ, कहाँ से बैल आयँगे ?

छठवाँ किसान—और कहाँ से आयगा बीज ?

पहला मज़दूर—हमें भी कहाँ काम मिलेगा ?

दूसरा मज़दूर—हाँ, कहाँ ?

तीसरा मज़दूर—बिना काम के हम भी कैसे जिन्दा रहेंगे ?

[नेपथ्य में मोटर खड़ी होने की आवाज़ आती है। सब का ध्यान उस ओर आकर्षित होता है। पीरबख़्श का दो अन्य मुसलमान साथियों के साथ प्रवेश। इन्हें देखकर सब खड़े हो जाते हैं। दुआ-सलामें होती हैं।]

पीरबख़्श—बैठिए, बैठिए, **(स्वयं बैठते हुए)** मैं भी बैठता हूँ।

एक युवक—कुरसी. . . .कुरसी तो यहाँ. . . .

पीरबख़्श—कुरसी की क्या ज़रूरत है, जनाब ? देहात आया हूँ। देहातियों की तरह बैठूँगा।

[सब लोग बैठ जाते हैं।]

महफ़ूज़ख़ाँ—**(पीरबख़्श से)** कहिए, कहाँ से आना हुआ; दिल्ली से, मेरठ से, या और कहीं से ?

पीरबख़्श—दिल्ली से आ रहा हूँ, भाई।

महफ़ूज़ख़ा—बड़ी कृपा हुई हमारे गाँव पर।

पीरबख़्श—अब तो, भाई, जो मुल्क और क़ौम की ख़िदमत करना चाहते हैं, उन्हें गाँव पर ही आना होगा। इस मुल्क के अस्सी फ़ी सदी से ज़्यादा इन्सान तो गाँवों में ही रहते हैं।

महफ़ूज़ख़ाँ—देहातियों के लिए इससे अच्छी और क्या बात हो सकती है कि शहरातियों का ध्यान देहात की तरफ़ खिचे।

पीरबख़्श—आप देहाती हैं ?

महफ़ूजख़ाँ—जी हाँ, यहीं जन्मा, बचपन में यहीं रहा, इस दृष्टि से देहाती कहा जा सकता हूँ।

पहला युवक—क्यों, बी० ए० पासकर फिर यहीं रहने आ गये हो, सच्चे देहाती न होते तो शहर में ही न रम जाते ?

पीरबख़्श—अच्छा आप बी० ए० पास हैं ?

दूसरा युवक—मामूली बी० ए० नहीं, जनाब, बी० ए० आनर्स, और प्रथम श्रेणी। फिर सरकारी ऊँची नौकरी मिलती थी, उसे लात मारकर, देहात में रहने और यहाँ के लोगों की सेवा करने को आये हैं।

पीरबख़्श—देहात के लिए इससे ज़्यादा क्या ख़ुशक़िस्मती हो सकती है कि देहात के रहने वाले ऐसे पढ़े-लिखे हों और इस तरह की क़ुर्बानियाँ कर देहात में ही रहना तय करें।

महफ़ूजख़ाँ—पहले मैं भी ऐसा ही समझता था और इसीलिए किसी प्रकार विद्यार्थियों को पढ़ा लिखा, गुज़र बसर चला, इम्तहान पास किये, पर यहाँ आने के बाद तो इस सम्बन्ध में मेरी राय बदल गयी है।

पीरबख़्श—(**कुछ आश्चर्य से**) अच्छा, तो आपकी राय में देहातियों को पढ़ने-लिखने की ज़रूरत ही नहीं है ?

महफ़ूजख़ाँ—देहातियों को पढ़ने-लिखने की ज़रूरत ही नहीं है, यह मैं नहीं कहता, पर जैसी शिक्षा हमें दी जाती है, वैसी शिक्षा-पद्धति से इतनी दूर तक पढ़ने-लिखने की आवश्यकता देहातियों को नहीं है। इस विद्या का देहात में कोई व्यवहारिक उपयोग नहीं होता।

पीरबख़्श—इस मसले के तो मुआफ़िक़ और ख़िलाफ़ बहुत कुछ कहा जा सकता है। ख़ैर। आपसे नियाज़ हासिल कर अज़हद ख़ुशी हुई। आपका इस्म शरीफ़ पूछ सकता हूँ ?

महफ़ूजख़ाँ—लोग मुझे महफ़ूजख़ाँ कहते हैं।

पीरबख़्श—(**अत्यन्त आश्चर्य से**) आप मुसलमान हैं ?

महफ़ूजखाँ—(**मुस्कराकर**) मेरे मुसलमान होने से आपको क्या कोई ताज्जुब हुआ ?

पीरबख़्श—(**कुछ सहमे हुए स्वर में**) नहीं, ताज्जुब....ताज्जुब तो नहीं, लेकिन आपको देखकर, आपकी ज़बान को सुनकर, आप मुसलमान हैं, यह....यह कहना मुश्किल है।

महफ़ूजखाँ—मुसलमान और हिन्दू में यदि पहचान न हो सके और दोनों एक से दिखें तो इससे अच्छी और क्या बात हो सकती है ?

पीरबख़्श—आप समझते हैं, यह होना चाहिए ? हिन्दू और मुसलमान दो क़ौमें हैं। आपने शायद अपने को इस तरह बनाने की कोशिश की है, जिससे आपको देखकर और आपकी ज़बान सुनकर यह शनाख़्त करना मुश्किल हो जाय कि आप मुसलमान हैं। यह कोशिश उन कोशिशों का नमूना है जो इन दो क़ौमों को मिलाने के लिए की गयी हैं। पर इन कोशिशों का नतीजा उल्टा ही निकला है। जितनी-जितनी मिलाने की कोशिशें हुई हैं उतने-उतने ही झगड़े बढ़े हैं; या फिर मुसलमान मुसलमान नहीं रह गये; जैसे आप।

महफ़ूजखाँ—लेकिन दो क़ौमें हैं कहाँ ? दो मज़हबों के मानने वाले एक ही देश में एक ही क़ौम के लोग सैकड़ों वर्षों से रह रहे हैं।

पीरबख़्श—यही तो ग़लतफ़हमी है। हिन्दू-मुसलमानों की न एक क़ौम है और न हिन्दोस्तान एक मुल्क ही है।

महफ़ूजखाँ—समझा, तो जनाब मुस्लिम लीग के।

पीरबख़्श—जी हाँ, और इस मामले के मुताल्लिक़ हाल ही में पाकिस्तान की जो तहरीक मुस्लिम लीग ने पास की है, वह देहात के लोगों को समझाने के लिए ही मैं दिल्ली से निकला हुआ हूँ।

महफ़ूजखाँ—तो जहाँ किसी तरह का झगड़ा-झंझट नहीं है, वहाँ भी आप झगड़ा पैदा कराने के लिए तशरीफ़ लाये हैं।

पीरबख़्श—**(चिढ़कर)** आप क्या बक रहे हैं, जनाब ? मैं झगड़ा पैदा कराने के लिए आया हूँ या झगड़ा मिटाने के लिए। मुस्लिम लीग की पाकिस्तान की इस तजवीज़ के मुताबिक़ अगर मुल्क के दो हिस्से कर, हिन्दू और मुसलमान दोनों क़ौमों को अलग-अलग अपनी-अपनी हुकूमत के नीचे रहना तय कर दिया जाय तो हिन्दू-मुस्लिम झगड़ा ही ख़त्म न हो जायगा, बल्कि मुल्क फ़ौरन आज़ाद हो जायगा और ग़ुलामी की वजह से ग़रीबी वग़ैरह की जो बेशुमार तकलीफ़ें हैं, वह सब रफ़ा हो जायँगी।

महफ़ूजख़ाँ—मुल्क आज़ाद कैसे हो जायगा, यह तो सुनूँ ?

पीरबख़्श—कांग्रेस और मुस्लिम लीग की मिली हुई माँग को ब्रिटिश गवर्नेमेन्ट पूरी न करे, यह हो सकता है ?

महफ़ूजख़ाँ—और हिन्दू महासभा कहाँ जायगी ? देशी रियासतों के प्रश्न का क्या होगा ? जनाब, छोड़िए ये सब बातें। आज़ादी मिलने का और ग़रीबी दूर करने का लोभ देकर एक नया ज़हर न फैलाइए। यह तो काँटे में चारे को लगाकर मछलियाँ फँसाना है।

पीरबख़्श—**(अत्यन्त क्रोध से)** आप जैसे आधे तीतर और आधे बटेर, देहाती और शहराती, हिन्दू और मुसलमान एक ही में मिले हुए आदमियों से बातें करने मैं नहीं आया, मैं आया हूँ सच्चे देहातियों से बात करने।

महफ़ूजख़ाँ—बैठे तो हैं आपके सामने सच्चे देहाती, कीजिए न बात उनसे। मैं क्या आपको रोक रहा हूँ।

पीरबख़्श—**(मुल्ला से)** आप मुसलमान हैं ?

[मुल्ला पीरबख़्श को कोई जवाब न देकर महफ़ूजख़ाँ की ओर देखता है।]

महफ़ूजख़ाँ—हाँ, ताऊ, बात करो न इनसे, मुझे कोई उज्र थोड़े ही है।

कुछ हिन्दू—**(एक साथ)** हाँ, करो....करो न बात, ताऊ।

मुल्ला—(**पीरबख़्श से**) हाँ, मुसलमान तो हूँ।

पीरबख़्श—तो फिर (**हिन्दुओं की ओर संकेतकर**) इनके ताऊ कैसे हो गये ?

[**बहुत से व्यक्ति हँस पड़ते हैं।**]

पीरबख़्श—(**चिढ़कर**) हाँ, बताइए न, आप मुसलमान, यह हिन्दू, आप इनके ताऊ कैसे हो गये ?

मुल्ला—(**विचारते हुए**) यह....यह तो मैं नहीं जानता कि ताऊ हुआ कैसे, पर इनका ताऊ मैं हूँ ज़रूर; और सिर्फ़ इनका ही नहीं, पर इस गाँव के तमाम हिन्दू-मुसलमानों का।

चौधरी—और मैं सब का चाचा हूँ।

[**बहुत से व्यक्ति फिर हँस पड़ते हैं।**]

पीरबख़्श का एक साथी—अच्छे ताऊ और अच्छे चाचा ! अजी जनाब, हिन्दू और मुसलमान दो क़ौमें हैं, एक हो नहीं सकती। इन्सान के लिए खाना और कपड़ा दो सबसे बड़ी ज़रूरीयात हैं। इन्हीं दो चीज़ों के मुताल्लिक़ देख लीजिए दोनों क़ौमों में कितना फ़र्क़ है। मुसलमानों के पुलाव कोरमा वग़ैरह के मुआफ़िक़ हिन्दुओं का कोई खाना नहीं। उनके आबा, खाबा वग़ैरह के मुआफ़िक़ हिन्दुओं की कोई पोशाक नहीं। और इतने पर भी हिन्दू कहते हैं दोनों क़ौमें एक हैं।

पीरबख़्श—भाई, यह अजीब गाँव है।

महफ़ूज़ख़ाँ—(**पीरबख़्श से**) क्षमा कीजिएगा, मैं फिर बोलता हूँ। आपने कभी कोई गाँव देखा है ?

पीरबख़्श—जी नहीं, लेकिन....लेकिन अगर सभी गाँवों का यह हाल है, तो यह है हिन्दुओं की एक बहुत बड़ी साज़िश। मुसलमानों के हाथ का खाना हिन्दू न खायँगे, उनको छूकर कोई हाथ धोयेगा और कोई नहायेगा, उनके मकान पर आने से कोई बिछायत धुलवायेगा और कोई मकान ही, उनका इस तरह का कमीने से कमीना बॉयकॉट करके

रखेंगे और उन्हें कहेंगे ताऊ। हर तरह उनकी बेइज़्ज़ती करने के बाद भी, उनसे जायज़ और नाजायज़ सब तरह के फ़ायदे उठाने के लिए, उन्हें भुलावे में रखने के लिए यह तरीक़े इख़्त्यार किये गये हैं।

पहला युवक--(क्रोध से) यह सब क्या कह रहे हैं आप ? सहभोज तो हिन्दू-हिन्दू में भी नहीं। यहाँ सब मर रहे हैं अपनी ग़रीबी के कारण, खाने और कपड़े के लाले पड़े हुए हैं, आप जायज़ और नाजायज़ फ़ायदे और भुलावे में रखने की बातें कर रहे हैं।

दूसरा युवक—हाँ, हाँ, मैं मुसलमान हूँ, पाँचों नमाज़ पढ़ता हूँ, मैं यह कहता हूँ कि यहाँ के हिन्दू चाहे हमारे हाथ का न खाते हों, यह तो उनके मज़हब की बात है, लेकिन यह हमें माँ जाये भाइयों से कम नहीं समझते। चाहे हिन्दू मन्दिर में पूजा करें और हम मसजिद में इबादत, पर हर तरह के आराम व तकलीफ़ में हम एक दूसरे के काम आते हैं; एक दूसरे को ब्याह-शादी में, एक दूसरे के मरने-जीने में, एक दूसरे के त्योहारों में शरीक होते हैं।

पीरबख़्श—(गला साफ़ करते हुए) लेकिन....लेकिन....

महफ़ूज़ख़ाँ—देखिए, यहाँ सब खेती करने वाले हैं, या मज़दूरी। हिन्दू भी वही करते हैं, मुसलमान भी वही, रोटी का सवाल सब के लिए एक-सा है और वही इस दुनिया में एक दूसरे को एक सूत्र में बाँधता है। मज़हब की दूसरी बात है, वह इस संसार की नहीं, दूसरी दुनिया की चीज़ है।

पीरबख़्श—(क्रोध से) जनाब, मज़हब का इस दुनिया से भी उतना ही ताल्लुक़ है, जितना दूसरी दुनिया से, पर बीच-बीच में बोलकर आप तो मुझे बात ही नहीं करने देंगे। कांग्रेस से कुछ तनख़्वाह मिलती दिखती है।

दूसरा युवक—(अत्यन्त क्रोध से) अच्छा, आपने तो हमारे एक अज़ीज़ को गाली देना शुरू कर दिया। मैं आपसे दरख़्वास्त करूँगा कि आप यहाँ से तशरीफ़ ले जायँ।

पहला युवक—**(अत्यन्त क्रोध से)** हाँ, हाँ, फ़ौरन चल दीजिए।

मुल्ला—**(क्रोध से)** नहीं तो कोई न कोई वारदात हो जायगी।

चौधरी—ज़रूर ही....ज़रूर ही....

महफ़ूजख़ाँ—अरे! यह आप लोग क्या कर रहे हैं....आप लोगों के....थोड़ा धीरज.....

[महफ़ूजख़ाँ की बात कोई नहीं सुनता। हल्ला होने लगता है। पीरबख़्श को जाते न देख कुछ किसान मजदूर अपनी लाठियाँ सँभालते हैं और कुछ आस्तीनों को ऊपर चढ़ाते हैं।]

पीरबख़्श का एक साथी—**(पीरबख़्श से)** चलिए, चलिए!

पीरबख़्श का दूसरा साथी—हाँ, हाँ, हमें चल ही देना चाहिए!

महफ़ूजख़ाँ—**(देहातियों से)** देखिए....

[पीरबख़्श का अपने साथियों के साथ प्रस्थान। कई किसान और मजदूर जोर से हँस पड़ते हैं।]

यवनिका

दूसरा अंक

पहला दृश्य

स्थान—दिल्ली में पीरबख़्श के बँगले का दफ़्तर

समय—तीसरा पहर

[कमरा आधुनिक ढंग से सजा हुआ दफ़्तर दिखायी पड़ता है। लिखने-पढ़ने की मेज़ रखी है। आये हुए तारों का टेबिल पर ढेर-सा लगा हुआ है। घूमने वाली कुर्सी पर बैठा हुआ पीरबख़्श टैलीफ़ोन-रिसीवर को कान में लगाये हुए बात कर रहा है।]

पीरबख़्श—थैंक्स....मैनी, मैनी थैंक्स।....यस....यस इट वाज़ इनएवीटेबिल....एब्सल्यूटली इनएवीटेबिल। **(रिसीवर फ़ोन पर रखकर टेबिल पर के कुछ बन्द तारों को खोलकर पढ़ने लगता है। फिर फ़ोन की घंटी बजती है। रिसीवर उठाकर)** हलो!.... हलो!....यस, पीरबख़्श स्पीकिंग।....थैंक्स....थैंक्स।....एक म्यान में दो तलवार वाली हिन्दोस्तानी मसल बिलकुल सही है।.... हाँ,....हाँ,....कैसे दो क़ौमें एक साथ रह सकती हैं? **(रिसीवर रखता है और फिर तार पढ़ने लगता है। फ़ोन की घंटी फिर बजती है। रिसीवर उठाकर)** यस....स्पीकिंग।....यस....यस.... रोज़मर्रा का झगड़ा।....हाँ, दशहरा हो तो झगड़ा।....मुहर्रम हो तो झगड़ा।....होली हो तो झगड़ा।....ईद हो तो झगड़ा।... बेशक...बेशक दो अलग-अलग...दो अलाहिदा-अलाहिदा कौमें हैं।... ज़रूर....ज़रूर राइल-आम लेते ही खत्म हो जायगा,....हमेशा के लिए खत्म हो जायगा अब यह सब फ़साद। **(रिसीवर रखता है। एक**

चपरासी का प्रवेश। वह एक तश्तरी में कुछ तारों को लिये है। तार टेबिल पर रखकर वह जाता है। नये तारों के लिफ़ाफ़े देखता है। फ़ोन की घंटी फिर बजती है। रिसीवर उठाकर) यस....यस.... हाँ, मैं ही हूँ पीरबख़्श।....थैंक्स....थैंक्स।....ह, ह, ह, ह,.... ठीक....ठीक....आपरेशन की ठीक मिसाल दी तुमने।.... हाँ, जब मल्हम-पट्टी से फोड़ा अच्छा नहीं होता, तब चीराफाड़ी करनी ही पड़ती है।...बेशक सूबों को अलाहिदा होने के इख़्त्यार का उसूल मंज़ूर होना आपरेशन ही हुआ है....बड़े से बड़ा आपरेशन।.... ह, ह, ह, ह, मुस्लिम अक्सीरियत के सूबे अलाहिदा होंगे ही ?...हाँ, हाँ, मालूम....मालूम तो ऐसा ही होता है। **(रिसीवर रखता है और नये तारों को लिफ़ाफ़ों में से निकालना शुरू करता है। फ़ोन की घंटी फिर बजती है। रिसीवर उठाकर)** ह, ह, ह, ह,....मैं पाकिस्तान का वज़ीरे आज़म !....क्या...क्या कहते हो ?...मेरा हक़ है ?.... हक़....इसमें हक़ की बात नहीं है,....लायक़ कौन है, यह सवाल उठेगा।....मेरा ही हक़ है और मैं ही लायक़ भी हूँ ? ...... ह, ह, ह, ह,....दोस्ताने की वजह से मेरे लिए तुम्हारा यह कहना है। ....नहीं ?....क्यों, भाई, नहीं क्यों ?....अच्छा....अच्छा, ...ज़रूर....ज़रूर मिलना।....कब ?....ज़रा एक दो दिन ठहर कर। **(रिसीवर रखता है। नये तारों को देखना शुरू करता है। फ़ोन की घंटी फिर बजती है। रिसीवर उठाकर)** यस....यस.... पीरबख़्श ही बोल रहा है।....मुबारकबादी तो तुम्हें भी है, भाई। **(रिसीवर रखता है। चपरासी फिर तार लेकर आता है और टेबिल पर रखकर जाता है। नये तारों के लिफ़ाफ़ों को पहले आये हुए तारों के लिफ़ाफ़ों के नीचे रखता है और तार पढ़ने लगता है। फ़ोन की घंटी फिर बजती है। रिसीवर उठाकर)** हलो !....हलो !....यस.... यस....यू वान्ट पीरबख़्श ?....पीरबख़्श स्पीकिंग। **(जहाँनारा**

का प्रवेश। जहाँनारा को देखकर) थैंक्स....थैंक्स।....कुछ देर बाद फ़ोन कीजिए। **(खड़े होते हुए)** हाँ, इस वक़्त मैं बहुत.... बहुत ज़्यादा मशगूल हूँ। **(रिसीवर रख जहाँनारा की ओर बढ़ते हुए)** आइए, तशरीफ़ लाइए।

जहाँनारा—(मुस्कराते हुए) इस कामयाबी पर मुबारिकबाद।

पीरबख़्श—शुक्रिया; और आपकी दी हुई मुबारिकबाद से हज़ार दर्जे बड़ी मुबारिकबाद आपको। बैठिए, तशरीफ़ रखिए।

[पीरबख़्श अपनी कुर्सी पर बैठता है और जहाँनारा उसके सामने की एक कुर्सी पर बैठती है।]

जहाँनारा—(हँसते हुए) तो क्या मेरी मुबारिकबाद कम दरजे की थी?

पीरबख़्श—(जल्दी से) नहीं, नहीं....भला आप यह क्या कह रही हैं?

[फ़ोन की घंटी फिर बजती है। पीरबख़्श रिसीवर उठाकर नीचे रख देता है।]

जहाँनारा—आप बात कर लीजिए, मुझे कोई जल्दी नहीं है।

पीरबख़्श—कहाँ तक और किस-किस से बात करूँ? टेलीफ़ोनों की तो बारिश-सी हो रही है। कुछ देर रिसीवर पड़ा रहने दीजिए; फ़ोन करने वाले समझेंगे, कोई दूसरा बात कर रहा है, नहीं तो आपसे बातचीत ही न हो सकेगी।

जहाँनारा—(टेबिल पर से तारों को देखते हुए) और तारों की भी तो बरसात सी हुई है। होना भी यही चाहिए। इतनी बड़ी कामयाबी मिलने पर भी फ़ोन और तार न आवें तो कब आवें? आपने तारीख़ बनायी है तारीख़।

पीरबख़्श—(विचारते हुए) तारीख़....तारीख़ मैंने अकेले क्या बनायी है, मिस जहाँनारा, आपका भी इसके बनाने में कितना बड़ा हाथ है।

जहाँनारा—मेरा हाथ ?

पीरबख़्श—बेशक। (**कुछ रुककर**) और फिर तारीख़ बनने का मौक़ा भी आ गया था। हिन्दुओं ने जल्दी न की होती तो, यह न होता, जो हुआ।

जहाँनारा—हाँ, यह तो ठीक है।

पीरबख़्श—हिन्दू जानते थे, मिस जहाँनारा, कि बिना मुसलमानों की मदद के इस मौक़े पर भी वह अकेले आज़ादी हासिल नहीं कर सकते, और हम जानते थे कि आज़ादी की जो क़ीमत भी माँगी जायगी, वह हिन्दू इस वक़्त ज़रूर देंगे। हम भी मुल्क को आज़ाद करने के लिए हिन्दुओं से कम ख़्वाहिशमन्द नहीं थे।

जहाँनारा—मुसलमानों के तो ख़ून में आज़ादी है।

पीरबख़्श—ठीक; और इसीलिए मुल्क के साथ ही हम मुस्लिम क़ौम की भी सच्ची आज़ादी चाहते थे।

जहाँनारा—हाँ, अंग्रेज़ों की ग़ुलामी से निकलकर हिन्दुओं की ग़ुलामी हमें मंज़ूर न थी।

पीरबख़्श—कितना ठीक फ़र्माया आपने। इसीलिए तो हम अपनी बात पर अड़े रहे। हमने जल्दबाज़ी न की। ठीक वक़्त पाँसा फेंका गया और दाँव में हमारी दुहरी जीत हो गयी।

[चपरासी का फिर कुछ तार लिये हुए प्रवेश। वह तारों को टेबिल पर रखकर जाता है। कुछ देर सन्नाटा। पीरबख़्श जहाँनारा की ओर देखता रहता है; जहाँनारा बाहर की तरफ़।]

जहाँनारा—अच्छा, अब क्या करना है ?

पीरबख़्श—असली काम तो अब शुरू होगा, मिस जहाँनारा, अभी हुआ ही क्या है ? अभी तो जो सूबे चाहें वह अलाहिदा होकर अपनी अलग मरकज़ी हुकूमत बना सकते हैं, इतना ही तय हुआ है। इस मामले पर राइल-आम तो अब होगी और राइल-आम का नतीजा अगर कुछ सूबों के

का प्रवेश। जहाँनारा को देखकर) थैंक्स....थैंक्स।....कुछ देर बाद फ़ोन कीजिए। **(खड़े होते हुए)** हाँ, इस वक़्त मैं बहुत.... बहुत ज़्यादा मशगूल हूँ। **(रिसीवर रख जहाँनारा की ओर बढ़ते हुए)** आइए, तशरीफ़ लाइए।

जहाँनारा—(मुस्कराते हुए) इस कामयाबी पर मुबारिकबाद।

पीरबख़्श—शुक्रिया; और आपकी दी हुई मुबारिकबाद से हज़ार दर्जे बड़ी मुबारिकबाद आपको। बैठिए, तशरीफ़ रखिए।

[पीरबख़्श अपनी कुर्सी पर बैठता है और जहाँनारा उसके सामने की एक कुर्सी पर बैठती है।]

जहाँनारा—(हँसते हुए) तो क्या मेरी मुबारिकबाद कम दरजे की थी?

पीरबख़्श—(जल्दी से) नहीं, नहीं....भला आप यह क्या कह रही हैं?

[फ़ोन की घंटी फिर बजती है। पीरबख़्श रिसीवर उठाकर नीचे रख देता है।]

जहाँनारा—आप बात कर लीजिए, मुझे कोई जल्दी नहीं है।

पीरबख़्श—कहाँ तक और किस-किस से बात करूँ? टेलीफ़ोनों की तो बारिश-सी हो रही है। कुछ देर रिसीवर पड़ा रहने दीजिए; फ़ोन करने वाले समझेंगे, कोई दूसरा बात कर रहा है, नहीं तो आपसे बातचीत ही न हो सकेगी।

जहाँनारा—(टेबिल पर से तारों को देखते हुए) और तारों की भी तो बरसात सी हुई है। होना भी यही चाहिए। इतनी बड़ी कामयाबी मिलने पर भी फ़ोन और तार न आवें तो कब आवें? आपने तारीख़ बनायी है तारीख़।

पीरबख़्श—(विचारते हुए) तारीख़....तारीख़ मैंने अकेले क्या बनायी है, मिस जहाँनारा, आपका भी इसके बनाने में कितना बड़ा हाथ है।

जहाँनारा—मेरा हाथ ?

पीरबख़्श—बेशक। **(कुछ रुककर)** और फिर तारीख़ बनने का मौक़ा भी आ गया था। हिन्दुओं ने जल्दी न की होती तो, यह न होता, जो हुआ।

जहाँनारा—हाँ, यह तो ठीक है।

पीरबख़्श—हिन्दू जानते थे, मिस जहाँनारा, कि बिना मुसलमानों की मदद के इस मौक़े पर भी वह अकेले आज़ादी हासिल नहीं कर सकते, और हम जानते थे कि आज़ादी की जो क़ीमत भी माँगी जायगी, वह हिन्दू इस वक़्त ज़रूर देंगे। हम भी मुल्क को आज़ाद करने के लिए हिन्दुओं से कम ख़्वाहिशमन्द नहीं थे।

जहाँनारा—मुसलमानों के तो ख़ून में आज़ादी है।

पीरबख़्श—ठीक; और इसीलिए मुल्क के साथ ही हम मुस्लिम क़ौम की भी सच्ची आज़ादी चाहते थे।

जहाँनारा—हाँ, अंग्रेज़ों की ग़ुलामी से निकलकर हिन्दुओं की ग़ुलामी हमें मंज़ूर न थी।

पीरबख़्श—कितना ठीक फ़र्माया आपने। इसीलिए तो हम अपनी बात पर अड़े रहे। हमने जल्दबाज़ी न की। ठीक वक़्त पाँसा फेंका गया और दाँव में हमारी दुहरी जीत हो गयी।

[चपरासी का फिर कुछ तार लिये हुए प्रवेश। वह तारों को टेबिल पर रखकर जाता है। कुछ देर सन्नाटा। पीरबख़्श जहाँनारा की ओर देखता रहता है; जहाँनारा बाहर की तरफ़।]

जहाँनारा—अच्छा, अब क्या करना है ?

पीरबख़्श—असली काम तो अब शुरू होगा, मिस जहाँनारा, अभी हुआ ही क्या है ? अभी तो जो सूबे चाहें वह अलाहिदा होकर अपनी अलग मरकज़ी हुकूमत बना सकते हैं, इतना ही तय हुआ है। इस मामले पर राइल-आम तो अब होगी और राइल-आम का नतीजा अगर कुछ सूबों के

अलाहिदा होने के हक़ में गया तो हिन्दू और मुस्लिम दो वफ़ाक़ बना दिये जायँगे।

जहाँनारा—लेकिन राइल-आम का क्या नतीजा निकलेगा, यह तो हम मुसलमान ही नहीं, हिन्दू भी जानते हैं।

पीरबख़्श—हाँ, बहुत हद तक तो यही उम्मीद है कि राइल-आम के बाद दो मरकज़ी हुकूमतें बन ही जायँगी, लेकिन, मिस जहाँनारा, अभी एक मर्तबे हिन्दू और जी-जान से कोशिश करेंगे कि राइल-आम हमारे खिलाफ़ जाय।

जहाँनारा—पर इस मामले में हमने अब तक जिस तरह की कोशिशें की हैं, उससे मुझे यक़ीन है कि हिन्दुओं की अब कोई भी मुसलमान सुनने वाला नहीं।

पीरबख़्श—पर अभी कुछ मुसलमान भी तो ऐसे हैं जो हिन्दुओं के साथ हैं।

जहाँनारा—दाल में नमक के बराबर भी नहीं; और अगर गिन्ती के कुछ हैं भी तो उनकी भी मुसलमान मानने वाले नहीं।

पीरबख़्श—(**विचारते हुए**) मिस जहाँनारा, मुस्लिम लीग की पाकिस्तान की तजवीज़ को देहातियों को समझाने के लिए जब मैं दौरे पर निकला था उस वक़्त पहले दिन जो हुआ था, उसे मैं अब भी नहीं भूल सका हूँ।

जहाँनारा—हाँ, आपने मुझे यू० पी० की शुमाली सरहद के किसी गाँव का, जिसमें महफ़ूज़ख़ाँ नाम का कोई ग्रेजुएट रहता था, एक वाक़या बताया था; वही ?

पीरबख़्श—हाँ, वही। वहाँ के हिन्दू ही नहीं, मुसलमान भी मुझे पीटने पर उतारू हो गये थे। ज़िन्दगी में उसके पहले मैं किसी गाँव को गया ही न था। कितनी नाउम्मीदी हुई थी, वहाँ से लौटकर मुझे !

जहाँनारा—लेकिन आप अपने मक़सद पर अड़े रहे और नतीजा आखिर आपके हक़ में निकला।

पीरबख्श—पक्का तो यह राइल-आम के बाद ही होगा, लेकिन उम्मीद.......

जहाँनारा—**(बीच ही में)** उम्मीद की बात न कीजिए, यह तो यक़ीन का मामला है।

पीरबख्श—**(कुछ रुककर)** दूसरों से तो मैं भी यही कहता हूँ कि सब कुछ हो गया, नहीं तो उनमें पस्त हिम्मती आ जायगी, लेकिन आपके और मेरे बीच की बात तो दूसरी ठहरी। जो दिल में उठता है, आपसे ही न कहूँ तो कहूँ किससे ? अभी हिन्दू न जाने कितने सवाल उठाने की कोशिश करेंगे।

जहाँनारा—मसलन ?

पीरबख्श—मसलन यह कि पंजाब और बंगाल की जिन जगहों में मुसलमान अकल्लीयत में हैं, उन जगहों को इन सूबों से अलग कर दिया जाय। सिक्खों का सवाल भी पूरी तरह ख़त्म नहीं हुआ है। रियासतों का सवाल भी अभी खड़ा-सा ही है, ख़ासकर काश्मीर और हैदराबाद का। फिर जिन सूबों में मुस्लिम अकल्लीयत में हैं, उन सूबों....

जहाँनारा—**(बीच ही में)** यह राइल-आम तो उन सूबों में ही ली जानी है न, जिनमें मुसलमानों की कसरतराय है ?

पीरबख्श—हाँ, लेकिन हिन्दू इन सब बातों को उठाकर मुस्लिम अक्सीरियत वाले सूबों के मुसलमानों पर भी असर डालने की कोशिश करेंगे।

जहाँनारा—और उनका ज़रा भी असर पड़ने वाला नहीं है।

पीरबख्श—**(मुस्कराते हुए)** उम्मीद तो मुझे भी यही है, लेकिन आप जानती हैं कि छोटे-छोटे रोड़े भी मुझे बड़े-बड़े पहाड़ नज़र आते हैं।

जहाँनारा—तभी तो आपको इस तरह की कामयाबियाँ हासिल होती हैं। एक छोटी-सी गिट्टी को कुचलने के लिए आपका स्टीम रोलर चलता है। एक छोटे से भुनगे को मारने के लिए दुनाली बन्दूक़।

[पीरबख़्श हँस पड़ता है। चपरासी का फिर कुछ तार लेकर प्रवेश। वह तारों को टेबिल पर रखकर जाता है।]

जहाँनारा—राइल-आम और दो मरकज़ी हुकूमतें क़ायम होने तक का मामला तो अब तय-शुदा समझिए। उसके बाद क्या करना है, यह बताइए।

पीरबख़्श—उसके बाद के काम तो और भी बड़े हैं।

जहाँनारा—अच्छा।

पीरबख़्श—हमें इस्लाम और मुस्लिम तहज़ीब की फ़ज़ीलत तमाम दुनिया को सुबूत कर देना है। सच तो यह है कि इसी एक ख़याल के अन्दर हमारा सारा प्रोग्राम आ जाता है, मिस जहाँनारा। पाकिस्तान में मुस्लिम क़ौम की हर तरह की तरक़्क़ी तो होगी ही, लेकिन हमें पाकिस्तान की अकल्लीयतों की भी हर तरह की तरक़्क़ी करनी होगी; उनके हुक़ूक़ की भी हर तरह से हिफ़ाज़त।

जहाँनारा—**(प्रसन्नता से)** बहुत अच्छा ! बहुत अच्छा !

पीरबख़्श—इस बँटवारे की हलचल में पाकिस्तान में अकल्लीयतों पर कैसे-कैसे ज़ुल्म होंगे, इसके हिन्दुओं, सिक्खों वग़ैरह ने बड़े-बड़े ऐलान किये हैं। हमें बता देना है कि उनके वह तमाम ख़ौफ़ एकदम बेबुनियाद थे।

जहाँनारा—**(और भी प्रसन्नता से)** ठीक। बिल्कुल ठीक।

पीरबख़्श—मिस जहाँनारा, इस्लाम में अपने ज़िम्मी के साथ जैसा ताल्लुक़ रखने को कहा गया है, वैसा किसी मज़हब में नहीं। मुस्लिम तहज़ीब इस वजह से भी दुनिया की तमाम तहज़ीबों में ख़ुसूसियत रखती है।...पाकिस्तान की अकल्लीयतें दरअसल हमारी ज़िम्मी होंगी और उनके साथ हमारा जैसे सलूक होगा, उसी पर दुनिया हमारी जाँच करेगी।

जहाँनारा—बेशक। और आप इन कुल कामों को करेंगे पाकिस्तान के वज़ीरे-आज़म की हैसियत से।

पीरबख़्श—क्या कहती हैं आप ?

जहाँनारा—मैं क्या, सभी कहते हैं; और सबका यह कहना मुनासिब ही है। आप को ही प्रीमियर होने का हक़ है।

पीरबख़्श—यह हक़ का सवाल नहीं है।

जहाँनारा—तब काहे का सवाल है ?

पीरबख़्श—क़ाबलियत का, मिस जहाँनारा।

जहाँनारा—आपसे ज़्यादा क़ाबलियत भी कौन रखता है ? फिर यहाँ तक तमाम स्कीम को कामयाब बनाने में आपने कितनी कोशिश की है। मि० जिन्ना तो बहुत बूढ़े हो गये, आप ही वज़ीरे-आज़म हो सकते हैं।

पीरबख़्श—**(कुछ रुककर)** एक बात कहे देता हूँ।

जहाँनारा—कहिए।

पीरबख़्श—अगर मुझे प्रीमियर होना ही पड़ा तो आपको मेरी कैबीनेट में रहना पड़ेगा।

जहाँनारा—**(एकदम आश्चर्य से)** क्या कहते हैं आप ?

पीरबख़्श—क्या मेरे 'क्या कहती हैं आप' का आप जवाब दे रही हैं ?

जहाँनारा—**(मुस्कराकर)** सच मानिए, आपने क्या कहा था, यह मुझे याद ही नहीं था, लेकिन....लेकिन....

पीरबख़्श—अगर मगर , लेकिन कुछ नहीं, मिस जहाँनारा, आप शायद एक बात नहीं जानतीं ?

जहाँनारा—कौन-सी ?

पीरबख़्श—**(प्रेम भरे स्वर में)** इतने दिनों तक आपके साथ काम करने के बाद अब मैं बिना आपके, अकेले, कोई काम नहीं कर सकता, उसके मैं लायक़ ही नहीं रह गया हूँ।

[जहाँनारा सिर झुका लेती है। पीरबख़्श प्रेम भरी दृष्टि से जहाँनारा की ओर देखता है। कुछ देर निस्तब्धता। चपरासी का तश्तरी में कई मुलाकाती कार्ड लिए हुए प्रवेश। पीरबख़्श कार्डों को देखता है।]

पीरबख़्श—(प्रसन्नतापूर्वक जहाँनारा से) ज़्यादातर हम लोगों के साथी हैं। सब शायद मुबारिकबाद देने आये हैं। **(चपरासी से)** भेज दो सब को यहीं !

[चपरासी का प्रस्थान। कई मुसलमानों का प्रवेश। अलग-अलग उम्र और रंग के मनुष्य हैं। कोई मोटा, कोई दुबला, कोई ऊँचा, कोई ठिगना। वस्त्र भी सब के भिन्न-भिन्न प्रकार के हैं। कोई शेरवानी और चूड़ीदार पाजामा, कोई अचकन और ढीला पाजामा, कोई सिर्फ़ कुरता और पाजामा पहने है। टोपियाँ भी कई तरह की हैं—कोई लाल तुर्की, कोई काली बालदार और कोई दुपलिया लगाये हैं। किसी के दाढ़ी है, किसी के सिर्फ़ मूछें ही। सब के मुखों पर उत्साह और उल्लास के चिह्न हैं। पीरबख़्श और जहाँनारा खड़े हो, थोड़ा-सा आगे बढ़, सब का स्वागत करते हैं। सब लोग पहले पीरबख़्श और फिर जहाँनारा का आदाब बजाते हैं। 'मुबारिक हो।' 'मुबारिक हो।' शब्दों से कमरा गूँज उठता है। पीरबख़्श किसी को गले लगाता है। किसी के दोनों हाथ पकड़कर हाथ मिलाता है, किसी का एक हाथ पकड़कर हाथ मिलाता है।]

पीरबख़्श—बैठिए. . . .बैठिए,. . . .तशरीफ़ रखिए. . . .तशरीफ़ रखिए।

[पीरबख़्श अपनी कुर्सी पर, जहाँनारा उसके नजदीक की एक कुर्सी पर और बाक़ी सब लोग भी दूसरी कुर्सियों पर बैठते हैं। चपरासी फिर तार लेकर आता है और तारों को रखकर जाता है।]

पीरबख़्श—बड़ी. . . .बड़ी इनायत की आप सब हज़रात ने।

एक—इनायत ? क्या फ़रमा रहे हैं आप ! हमारा फ़र्ज़ था कि यह ख़ुश ख़बरी सुनते ही हम फ़ौरन ख़िदमत में हाज़िर होते।

दूसरा—बेशक ! बेशक !

तीसरा—आज के दिन अपने सदर को मुबारिकबाद देने आने से बड़ा हमारा कौन-सा फ़र्ज़ हो सकता है ?

चौथा—आज के दिन से बड़ा दिन ही हमारी ज़िन्दगी में नहीं आ सकता।

पाँचवाँ—हमारी ज़िन्दगी में ? हमारी ज़िन्दगी में क्या, जनाब, मुस्लिम क़ौम की तारीख़ में नहीं आ सकता।

पीरबख़्श—लेकिन, बिरादरान, अभी तो बहुत काम बाक़ी है।

छठवाँ—अब क्या बाक़ी है, हुज़ूर ?

सातवाँ—हाँ, सरकार, अब क्या बाक़ी हो सकता है ?

पीरबख़्श—वोट तो मुस्लिम क़ौम के अब लिये जायँगे।

आठवाँ—**(बेपरवाही से)** अरे, वोट ! वह अब जब चाहिए तब ले लीजिएगा।

छठवाँ—हाँ, आधीरात को सोते हुए किसी भी मुस्लिम को आप जगाकर पूछेंगे कि पाकिस्तान के मुताल्लिक़ तुम्हारी क्या राय है, तो पूरे होश में आने के पहले ही वह कह देगा कि हम हिन्दू-राज से बाहर जाने के हक़ में हैं।

सब—**(एक साथ)** बेशक। बेशक।

जहाँनारा—मैंने आप लोगों के तशरीफ़ लाने के पहले ही अर्ज़ कर दिया था कि इस मामले में फ़िक्र करने की गुंजाइश ही नहीं है।

सब—**(एक साथ)** बिल्कुल ठीक. . . .बिल्कुल वजा।

पीरबख़्श—**(जैसे कुछ याद आ गया हो, जहाँनारा से)** हाँ, अब फ़ोन का रिसीवर रख देता हूँ। **(रिसीवर रखता है।)**

जहाँनारा—न जाने इतनी देर में कितने फ़ोन करने वालों को नाउम्मीदी हुई होगी।

[फ़ोन की घंटी बजती है।]

पीरबख्श—**(मुस्कराकर)** यह लीजिए, रखने भर की देर थी। **(रिसीवर उठाकर कान पर लगाते हुए)** हलो ! हलो !....

[चपरासी फिर कुछ तार लेकर आता है।]

लघु यवनिका

दूसरा दृश्य

स्थान—दिल्ली में शान्तिप्रिय के बँगले का बैठक़ख़ाना

समय—प्रातःकाल

[कमरा पश्चिमी ढंग से सजा हुआ है। शान्तिप्रिय एक सोफ़े पर बैठा हुआ, हाथ में एक नोट बुक लिये, उसमें से कुछ याद कर रहा है। रूबी एक कुर्सी पर सो रही है।]

शान्तिप्रिय—मुल्क माने देश, मुल्क माने देश, मुल्क माने देश। (कुछ रुककर) यह....यह तो नहीं भूला जा सकता।....मक़्सद माने उद्देश, मक़्सद माने उद्देश, मक़्सद माने उद्देश। **(कुछ रुककर)** यह ....यह याद नहीं हो सकता।....इस उम्र में....नहीं, नहीं, इस अवस्था में रटाई, घुटाई यह तो बड़ी मुश्किल....उफ़ !... मुश्किल नहीं,....फिर क्या ? **(कुछ सोचकर)** कठिन....हाँ, हाँ, कठिन बात है। **(कुतिया की तरफ़ देखकर)** टाइग्रेस ! ओ टाइग्रेस ! **(जब कुतिया नहीं आती, तब उसके पास जाते हुए)** कभी टाइग्रेस कहने से नहीं सुनेगी।....रुबी ! ओ रुबी !

[कुतिया आँख खोलकर शान्तिप्रिय की ओर देखती है।]

शान्तिप्रिय—रुबी !....रुबी !....रुबी....रुबी....रुबी .....

[कुतिया उठकर कुर्सी पर से कूद दुम हिलाते हुए शान्तिप्रिय के नजदीक श्राती है ।]

शान्तिप्रिय—(**फिर से सोफ़ा पर बैठते हुए, कुतिया से, जो साथ-साथ श्राती है ।**) क्यों, टाइग्रेस, तुम लोगों में भी विलायती कुत्तों की ज़बान.... ....उह....फिर गड़बड़ हो गया।....ज़बान नहीं, भाषा,.... हाँ, विलायती कुत्ते की भाषा एक तरह की, देशी कुत्तों की दूसरी तरह की, इस तरह का कोई अन्तर.... (**अपनी पीठ को थपथपाते हुए**) हाँ,....अन्तर हो तो कहना—भों ! भों ! भों ! नहीं तो चुप रहना। (**चुप होकर कुतिया की श्रोर देखता है। वह कुछ नहीं बोलती, सिर्फ़ दुम हिलाती रहती है ।**) कोई अन्तर नहीं है। तब इन्सान....उफ़ !....इन्सान नहीं, मनुष्य, हाँ, मनुष्यों में एक दूसरे की भाषा में क्यों अन्तर है ? मनुष्य को अंग्रेज़ी में सोशल एनीमल कहा है, पर सोशल एनीमल एक दूसरे के साथ मिल-जुलकर रहने के कारण ....(**फिर अपनी पीठ ठोकते हुए**) कारण....या एक दूसरे के साथ लड़ने के कारण ?....श्रौर भाषा....भाषा भी लड़ाई का एक कारण; वह....वह भाषा जो इन्सान को हैवान से अलाहिदा करने की पहली....उफ़ !....इन्सान ! हैवान ! अलाहिदा ! ....यह सब क्या हुआ ? (**नोटबुक को जमीन पर पटकते हुए**) जब जहाँनारा ने अलिफ़, बे, सिखाया, तब दुधमुहाँ बच्चा था; सीख जाता था, जो वह सिखाती थी उसे फ़ौरन, लेकिन इस....इस उम्र में, रुबी, ...टाइग्रेस....

कुतिया—भों ! भों ! भों !

शान्तिप्रिय—ठीक यह कोशिश भोंकने....हाँ, भोंकने के बतौर होगी। (**कुछ रुककर**) श्रौर....श्रौर, रुबी, जो बात ज़बान के मुताल्लिक़ मालूम होती है, वही....हाँ, वही आगे चलकर दो क़ौमी नज़रिये की दूसरी बातों के मुताल्लिक़ भी तो नहीं मालूम होगी ?

(कुछ रुककर) पहले कब कोई फ़र्क़ जान पड़ता था मुझे अपने में और जहाँनारा में ? वह बहन-सी ही नहीं, माँ-सी भी मालूम होती थी। मुसलमान....हाँ, मुसलमान थी वह, हिन्दू था मैं ! लेकिन.... लेकिन, रुबी,....**(कुतिया अपने दोनों पैर शान्तिप्रिय के घुटनों पर रखकर दुम हिलाने लगती है।)**....और....और दुर्गा हिन्दू.... हाँ, हिन्दू है, मैं हिन्दू हूँ, पर....पर....**(फिर कुछ रुककर)** पर उस वक़्त मैं पचहत्तर परसैन्ट मुसलमान जो था।....हिन्दुओं में गंगा को इसलिए महत्त्व है कि जो नदियाँ उसमें मिलती हैं उनका पानी गंगा के सदृश हो जाता है।....उस धारा में शक्ति है अपने में गिरने और पड़ने वाली सारी वस्तुओं को बहा ले जाने की।....मेरी, हाँ, मेरी उस शक्ति का लोप हो गया था।.....मैं जहाँनारा के सदृश होता जाता था।... वह....वह मुझे बहाये लिये जाती थी। **(कुछ रुककर)** फिर.... फिर अब तो बात और आगे बढ़ गयी।....अब तक दो क़ौमें रही हों या न रही हों लेकिन अब तो होकर रहेंगी। राइल-आम का नतीजा तो जानी समझी-सी चीज़ है।

कुतिया—भों ! भों ! भों !

शान्तिप्रिय—हाँ, कौन....कौन सुनता है, इस भों भों में दलीलों को ?....जहाँनारा ने भी क्या कम भोंका है और दुर्गा ने भी क्या कम भोंका ?....और....और अगर दो क़ौमें ही होना है, इस.... इस.... कमबख़्त मुल्क के दो टुकड़े होना नहीं रोका जा सकता, तो....तो, टाइग्रेस, हिन्दुओं को भी ज़िन्दा तो रहना ही पड़ेगा। **(कुछ रुककर, जोश से)** और....और वह....वह ज़िन्दा रहेंगे गंगा.... हाँ, गंगा की उस धारा....धारा....

[दुर्गा का प्रवेश। उसका मुख एकदम उतरा हुआ है और अंग भी शिथिल से जान पड़ते हैं। उसे देख शान्तिप्रिय खड़े हो उसका स्वागत करता है। दोनों सोफ़ा पर बैठते हैं।]

शान्तिप्रिय—(**कुतिया से**) गो अवे, रुबी, गो अवे फ़ॉर सम टाइम।

[**कुतिया धीरे-धीरे बाहर जाती है।**]

दुर्गा—(**नीचे पड़ी हुई नोटबुक को देखकर**) अच्छा, बड़ा क्रोध आया दिखता है इस बेचारी पर।

शान्तिप्रिय—(**सहमें हुए स्वर में**) इस पर नहीं, मिस दुर्गा, क्रोध तो आया था मुझे अपने आप पर; इस पर निकाला गया है।

दुर्गा—भाषा के पीछे आप इतने पड़े ही क्यों हैं? भाषा तो आपकी अपने आप ठीक हो जायगी।

शान्तिप्रिय—कभी न होगी।

दुर्गा—नहीं, नहीं, अवश्य हो जायगी। हिन्दी-उर्दू के सम्बन्ध में तो यह बात है कि जैसा संग होता है, वैसे ही शब्द मुँह से निकलने लगते हैं, उठना-बैठना मुसलमानों के साथ रहेगा, तो अरबी फ़ारसी के अधिक शब्द निकलेंगे, हिन्दुओं के साथ रहेगा, तो संस्कृत के। और आपकी भाषा ठीक न भी हुई तो कोई बड़ा भारी अनर्थ न हो जायगा। (**लम्बी साँस लेकर**) अनर्थ तो हो गया, शान्तिप्रिय जी, बड़े से बड़ा अनर्थ!

शान्तिप्रिय—(**दुर्गा की ओर देखते हुए**) आज भी आप बहुत ही उदास दिख रही हैं।

दुर्गा—मैं अब भी जीवित हूँ यही बड़ी बात है। हिन्दुओं के बहुमत ने जिस विषय पर मुसलमानों को सर्व-जन-मत का अधिकार देकर उनसे समझौता किया है, वह देश का विभाजन करके रहेगा। इस धक्के से ही मेरी मृत्यु हो जानी चाहिए थी, शान्तिप्रिय जी, मृत्यु!

शान्तिप्रिय—लेकिन यह न हो, इसके लिए आप जो कुछ कर सकती थीं, आपने सब कुछ किया; और आप कर ही क्या सकती थीं?

दुर्गा—ठीक है, परन्तु गीता में जिस स्थितप्रज्ञ का वर्णन है, मैं वह तो नहीं हूँ, न, शान्तिप्रिय जी। मेरी स्थिति गीता में कहे हुए—'दुःखेष्व-

नुद्विग्नमनाः सुखेशु विगत स्पृहः'—सुख-दुख में समभाव वाली नहीं हो गयी है। हिन्दू जाति ने स्वतन्त्रता रूपी मृग-मरीचिका के लालच में घोर से घोर अनर्थ किया है। माता का हिमालय रूपी किरीट अब खंडित हो जायगा। माता की गंगा और यमुना रूपी मेखला अब टूट जायगी और उसके मोती यत्र-तत्र बिखर जायँगे। माता के चरणों में रत्नाकर अपनी लहरों के जो नूपर पहनाया करता है, वे चरण ही खंडित प्रतिमा के चरण हो जायँगे। अपनी मातृभूमि के शरीर के टुकड़े करने के सिद्धान्त को स्वीकारकर हिन्दू जाति ने अपनी माता की ही चिता तैयार नहीं करायी है, किन्तु इस चिता की ज्वालाओं में यह जाति भी झुलस जायगी, और ऐसी झुलसेगी, कि जब तक यह जीवित रहेगी, तब तक इस झुलस के जले हुए वृणों को धोते-धोते और इन्हीं का उपचार करते-करते इसका सारा समय व्यतीत हो जायगा। शान्तिप्रिय जी, स्वतन्त्रता तो मिलती ही, आज न मिलती, कल मिलती। चालीस करोड़ मानवों के राष्ट्र को सदा कोई पराधीन रख सकता था; और फिर ऐसे राष्ट्र को, जिसने सदा ही स्वतन्त्र होने का प्रयत्न किया है ? ऐसे प्राचीन राष्ट्र के लिए सौ-पचास वर्ष क्या हैं ? और....और अभी क्या हम स्वतन्त्रता की ओर बढ़ न रहे थे ? पर....पर हाय ! यह....यह क्या हुआ ? जो एक सहस्र वर्ष के दासत्व में न हुआ था, वह....वह आज हम थोड़ी-सी शीघ्रता के कारण कर बैठे। यह....यह, शान्तिप्रिय जी, स्वातन्त्र्य-प्रेम नहीं है, यह है विवेक-हीनता; बड़ी से बड़ी विवेकहीनता। और.... ....और इसका अन्तिम परिणाम क्या निकलेगा, यह....यह भविष्य वाणी करना, आज किसी के लिए भी सम्भव नहीं है।

[दुर्गा के इस लम्बे भाषण के चलते हुए शान्तिप्रिय के मुख पर आने-जाने वाले रंगों से उसके पल-पल पर बदलते हुए भावों का पता लगता है। भाषण का अन्त होते-होते उसके गाल आँसुओं से भींग जाते हैं। कुछ देर सन्नाटा रहता है।]

दुर्गा—और, शान्तिप्रिय जी, यह सब हुआ है आत्मनिर्णय के सिद्धान्त पर। आत्मनिर्णय के सिद्धान्त पर किसी व्यक्ति को आत्महत्या करने का अधिकार नहीं है। आत्महत्या के प्रयत्न करने वाले को न्यायालय दंड देता है, परन्तु आत्मनिर्णय के सिद्धान्त पर एक राष्ट्र को आत्महत्या करने का अधिकार दे दिया गया है। आत्मनिर्णय के सिद्धान्त पर लोगों का शराब पीना ठीक नहीं समझा जाता। कांग्रेस मन्त्रिमंडलों ने भी शराबबन्दी की नीति को कार्यरूप में परिणत भी किया था, परन्तु साम्प्रदायिक मद से मदोन्मत्त एक जाति को आत्मनिर्णय सिद्धान्त के अनुसार इतने बड़े प्रश्न पर मत देने का अधिकार दिया गया है।

शान्तिप्रिय—**(गला साफ़ करते और आँखें पोंछते हुए)** और सर्व-जन-मत के नतीजे की कोई अच्छी उम्मीद रखना तो अपने आपको धोका देना है?

दुर्गा—बड़े से बड़ा धोका। इस सर्व-जन-मत में सिर्फ़ मुसलमानों को मत देने का मन्तव्य भी जो मान लिया गया है। याने पंजाब और बंगाल की प्रायः आधी जनसंख्या इस सम्बन्ध में वोट ही न दे सकेगी। दूसरे शब्दों में पचपन परसैन्ट मुसलमानों में आधे से यदि एक भी अधिक ने विभाजन के पक्ष में मत दिया तो विभाजन हो जायगा, अर्थात् पंजाब और बंगाल के कुल निवासियों में यदि अट्ठाइस प्रतिशत लोग विभाजन के पक्ष में हो गये तो माता के शरीर के टुकड़े! घोर अन्याय है, घोर! मेरी समझ में नहीं आता कि अमरनाथ सदृश समझदार व्यक्ति मुसलमानों को अब समझाने की कैसी आशा रखते हैं?

शान्तिप्रिय—तो आप इस सर्व-जन-मत के मुताल्लिक़ कुछ करने वाली नहीं हैं?

दुर्गा—जब मैं हिन्दुओं का मत अपनी ओर न कर सकी, और उन्होंने ऐसे प्रश्न को मुसलमानों के सर्व-जन-मत पर छोड़ दिया, तो मैं मुसलमानों से क्या आशा कर सकती हूँ?

[फिर कुछ देर निस्तब्धता ।]

शान्तिप्रिय—**(लम्बी साँस लेकर)** तो मुल्क के टुकड़े होकर हिन्दुस्तान और पाकिस्तान के दो फ़ेडरेशन अब तयशुदा बात समझ लेनी चाहिए।

दुर्गा—एक बार तो अब यह होकर रहेगा।

शान्तिप्रिय—और इसके बाद हम क्या करेंगे ?

दुर्गा—हाथ पर हाथ रख कर तो हम बैठ नहीं सकते, वह तो हिन्दू-जाति के अब तक के सिद्धान्तों, इतिहास इत्यादि सबके विरुद्ध होगा।

शान्तिप्रिय—तब ?

दुर्गा—उस समय का कार्यक्रम व्योरेवार तो नहीं बनाया जा सकता, किन्तु जिस दिन से यह सर्व-जन-मत लेना निर्णय हुआ है, उस दिन से मेरे मस्तिष्क में यही विषय घूम रहा है। **(कुछ रुककर)** शान्तिप्रिय जी, देश के विभाजन का यह प्रश्न कुछ तो स्वार्थी मुसलमानों ने उठाया, जो अपना नेतृत्व चाहते थे और अपने अन्य प्रकार के भी अगणित स्वार्थों की पूर्ति, किन्तु यह भी अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि कुछ के हृदय में, और इनमें मुस्लिम जनता ही अधिक थी, बहुमत-हिन्दू-राज्य से सचमुच का भय भी था। मानते हैं न ?

शान्तिप्रिय—हाँ, यह तो सच है।

दुर्गा—हिन्दुओं की हर प्रकार की समृद्धि और संघटन करते हुए हमारा यह भी कर्त्तव्य होगा कि हम हिन्दुस्थान में रहने वाले मुसलमानों की समृद्धि के लिए भी उतना ही प्रयत्न करें, साथ ही उनके उचित अधिकारों की हर प्रकार से रक्षा।

शान्तिप्रिय—**(प्रसन्नता से)** बिल्कुल ठीक।

दुर्गा—किसी भी राज्य की सुव्यवस्था तभी रह सकती है, जब उसकी सारी प्रजा समृद्धिशाली रहे, क्योंकि 'बुभुक्षितः किं न करोति पापं' के अनुसार जो भी भूखा रहेगा, वह कोई भी पाप कर सकता है और 'क्षीणा-

जना निष्करुणा भवन्ति' के अनुसार इस प्रकार क्षुधा से क्षीण मनुष्य के हृदय में करुणा भी नहीं रह जाती; वह पाषाणवत् हो जाता है।

शान्तिप्रिय—(और भी प्रसन्नता से) बिल्कुल ठीक कह रही हैं आप।

दुर्गा—फिर, शान्तिप्रिय जी, हमारे धर्म और संस्कृति की सबसे बड़ी विशेषता क्या है, आप जानते हैं ?

शान्तिप्रिय—कहिए।

दुर्गा—सहिष्णुता, धार्मिक-सहिष्णुता, सामाजिक-सहिष्णुता, हर प्रकार की सहिष्णुता। हमें मुसलमानों को यह सिद्ध कर देना है कि उन्हें हमसे भयभीत होने की आवश्यकता ही न थी और जो विभाजन उन्होंने एक मिथ्या भय के कारण कराया है, उसे मिटाकर पुनः देश को एक कर देने में हानि नहीं, वरन् उन्हें हर प्रकार का लाभ ही है।

शान्तिप्रिय—(अत्यन्त प्रसन्नता से) आपके दिल की इस तरह की रद्दोबदल देखकर, मुझे जितनी ख़ुशी हो रही है, वह मैं लफ़्ज़ों में ब्यान नहीं कर सकता।

दुर्गा—(कुछ आश्चर्य से) दिल की रद्दोबदल !....कैसा परिवर्तन, शान्तिप्रिय जी ? मेरे विचार तो सदा ही ऐसे रहे हैं। मैं मुसलमानों पर अत्याचार थोड़े ही करना चाहती थी। हिन्दू जाति में मुसलमानों का विलीन होना मैं एक स्वाभाविक बात मानती थी, आज भी मानती हूँ, और यह हिन्दू संस्कृति की विशालता के कारण, स्वाभाविक ढंग से, किसी बल के उपयोग से नहीं। भारतवर्ष, हिन्दू धर्म, हिन्दू संस्कृति की मैं भक्त हूँ। भारतवर्ष को एक देश रखना चाहती हूँ और संसार के सामने यह सिद्ध करना चाहती हूँ कि हिन्दू धर्म से महान् धर्म, हिन्दू संस्कृति से बड़ी संस्कृति, अन्य कोई नहीं।

शान्तिप्रिय—(विचारते हुए) हाँ, यह तो ठीक ही है।

[कुछ देर सन्नाटा।]

दुर्गा—(प्रेमपूर्वक शान्तिप्रिय की ओर देखते हुए) शान्तिप्रिय जी, एक बात और जानते हैं ?

शान्तिप्रिय—कौन-सी ?

दुर्गा—मैं अब आपके संग के बिना कोई काम ही नहीं कर सकती।

शान्तिप्रिय—ऐसा ?

दुर्गा—जी हाँ, और....और यदि हिन्दुस्थान की सरकार हमारे हाथ में आयी तो हम दोनों मिलकर उसे चलाएँगे।

शान्तिप्रिय—आप तो सब तरह से उसके लायक़ हैं, लेकिन.... लेकिन मैं तो....

दुर्गा—**(हँसते हुए)** पर आपके बिना तो अब मैं नालायक़ हो जाऊँगी न ? **(कुछ रुककर)** और देखिए, हम दोनों मिलकर इस प्रकार से कार्य करेंगे कि मुसलमान ही दूसरे सर्व-जन-मत की प्रार्थना करेंगे, जिसमें इस अस्वाभाविक और नाशकारी विभाजन का अन्त होगा। **(कुछ रुककर)** शान्तिप्रिय जी, अभी....अभी भी मैं सर्वथा निराश नहीं हूँ।

[शान्तिप्रिय दुर्गा की ओर देखता है और दुर्गा शान्तिप्रिय की ओर।]

लघु यवनिका

तीसरा दृश्य

स्थान—दिल्ली में अमरनाथ के बँगले का बैठकखाना

समय—दोपहर

[बैठकख़ाना यद्यपि आधुनिक ढंग का बना है, तथापि बैठकख़ाने में कुर्सियाँ, टेबिलें इत्यादि नहीं हैं। जमीन पर बैठने का इन्तज़ाम है। खादी की सुन्दर छपी हुई जाजिम पर सफ़ेद खादी की चादर से ढकी हुई गद्दी है और उस पर खादी की सफ़ेद खोलियों से आच्छादित कई मसनद। अमरनाथ गद्दी पर बैठा है। उसके पास, तथा उसके सामने, उसके कई

साथी कार्यकर्ता बैठे हैं, इनमें से कुछ मुसलमान भी हैं। पीरबख़्श के साथियों के समान ये भी अलग-अलग उम्र और रंग के हैं। शरीर में भी सब भिन्न-भिन्न प्रकार के, लेकिन कपड़े सब खादी के पहने हैं। बातचीत चल रही है।]

अमरनाथ—हाँ, मैं जनता को जनार्दन का रूप मानता हूँ। जो हिन्दू-मुस्लिम समझौता हुआ है, वह आत्मनिर्णय के उसूल के अनुसार बिलकुल सही है, लेकिन जो ग़लत भावनाएँ नेताओं के दिलों में हैं वे ही जनता के दिलों में होंगी, यह मैं नहीं मानता। सर्व-जन-मत का नतीजा कुछ प्रान्तों के अलग होने के पक्ष में ही निकलेगा, पहले से ही यह समझ लेना, करोड़ों इन्सानों की बुद्धि को लांछन लगाना है।

एक—आप में ज़बर्दस्त आशावाद है।

अमरनाथ—बेशक। और मैं चाहता हूँ कि आप सब लोग भी इसी तरह आशावादी रहें। इन्सान ने जहाँ नाउम्मीदी की शरण ली कि उसने उसे दबोचा। आशा देवी है और निराशा राक्षसी। आशा की शरण मनुष्य को काम करने की क़ूबत देती है, क्योंकि उसका दिल और दिमाग़ उत्साह से भर जाता है। निराशा का पंजा आदमी को निकम्मा बना देता है, क्योंकि उसकी तमाम उमंगें पहले से ही ख़त्म हो जाती हैं।

दूसरा—लेकिन आप समझते हैं कि इस सर्व-जन-मत का नतीजा सूबों के अलग होने के ख़िलाफ़ जायगा?

अमरनाथ—जितनी आशा उसके हक़ में जाने की है उतनी ही ख़िलाफ़ जाने की भी। इस सर्व-जन-मत के पहले हमें हर शहर और हर गाँव में घूम-घूमकर लोगों को समझाना चाहिए कि दरअसल हिन्दुस्तान एक ही देश है। एक ही क़ौम यहाँ रहती है। दो धर्मों का अर्थ दो राष्ट्र नहीं हो सकता। एक राष्ट्र में मुख़्तलिफ़ मज़हब मानने वाले रह सकते हैं। ज़बान, तहज़ीब, राजनैतिक और आर्थिक सवाल तमाम मुल्क के यकसाँ हैं; साथ ही हमें यह द्विराष्ट्र सिद्धान्त इस देश में कहाँ से आया, यह बताना चाहिए। सूडेटन जर्मनों

ने जैसे सवाल उठाये थे क़रीब-क़रीब वैसे ही इस द्विराष्ट्र सिद्धान्त मानने वालों ने उठाये हैं। सूडेटन जर्मनों का ऐलान लोगों को दिखाकर, उसमें सूडेटन जर्मनों के स्थान पर मुस्लिम शब्द रखकर, हमें अपनी बात की सचाई का लोगों को सुबूत देना चाहिए। फिर हमें उन्हें यह समझाना चाहिए कि देश के विभाजन से भी हिन्दू-मुस्लिम समस्या हल नहीं हो सकती, हिन्दुस्तान के मुसलमानों में से क़रीब-क़रीब एक तिहाई हिन्दू बहुमत वाले सूबों में रहेंगे, इनमें से अधिकांश का अपने जन्म स्थानों और जायदादों को छोड़कर मुस्लिम बहुमत वाले सूबों में जाकर रहना असम्भव कल्पना है; फिर यह करने का यदि प्रयत्न भी किया जाय तो उसमें जो ख़र्च पड़ेगा उसे देखते हुए यह सिद्ध हो जाता है कि यह ग़रीब देश इतना ख़र्च नहीं कर सकता। यूनान में यह कोशिश हुई थी कि तुर्की में बसे हुए यूनानी तुर्की छोड़कर यूनान में बस जायँ, तुर्की में बसे हुए यूनानियों की संख्या सिर्फ़ तेरह लाख थी और इन तेरह लाख यूनानियों को यूनान में लाकर बसाने में एक करोड़ पाउंड ख़र्च हुआ। इन सब कारणों से विभाजन नहीं, पर एक साथ रहना ही इस समस्या को हल कर सकता है, यह सिद्ध करने की कोशिश करनी चाहिए। और देश के टुकड़े होने से देश कितना कमज़ोर हो जायगा, गत लड़ाई में कमज़ोर मुल्कों की क्या हालत हुई, यह भी बताना चाहिए। और अन्त में हमें मुसलमानों को ख़ास तौर पर एक बात और भी बतानी होगी।

एक मुसलमान—कौन-सी ?

अमरनाथ—यह कि देश के टुकड़े होने से मुसलमानों को उल्टी हानि पहुँचेगी।

दूसरा मुसलमान—कैसे ?

अमरनाथ—पहला कारण तो यह है कि जब कोई भी जमात एक दायरे के अन्दर बन्द हो जाती है तब उसका सारा राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक विकास रुक जाता है। इस्लाम का सारा इतिहास बताता

है कि उसने अपनी संख्या की कभी भी परवाह न कर हर स्थान में हर प्रकार से अपना विस्तार ही किया है। पाकिस्तान इसे रोक देगा।

तीसरा मुसलमान—हाँ, यह तो ठीक है।

अमरनाथ—दूसरी वजह यह है कि जो टुकड़ा पाकिस्तान में जायगा उससे क़रीब सात करोड़ और जो हिस्सा हिन्दुस्तान में जायगा उससे बावन करोड़ टैक्स में मिलते हैं। खर्च होता है हिन्दू-मुसलमान सबों पर समान रूप से। टैक्स का बोझा इस समय भी पाकिस्तान ज़ोन के लोगों पर अधिक है। व्यक्तिशः पाकिस्तान ज़ोन का टैक्स है ७·२ और हिन्दुस्तान ज़ोन का ५·३। फिर सरहद्दी प्रान्त को चलाने के लिए केन्द्रीय सरकार एक करोड़ देती है, और सिन्ध को चलाने के लिए एक करोड़ पाँच लाख। बलूचिस्तान को तो केन्द्रीय सरकार ही चलाती है। यह सारा बोझ पाकिस्तान की केन्द्रीय सरकार के मत्थे पड़ेगा। यही सबब है कि जिन प्रान्तों में मुसलमानों का बहुमत है जैसे बंगाल, पंजाब, सिन्ध, सरहद्दी प्रान्त, बलूचिस्तान वहाँ मुस्लिम लीग का इतना ज़ोर नहीं रहा, जितना उन प्रान्तों में रहा है, जहाँ मुसलमान अल्प मत में हैं, और जहाँ के मुसलमानों का पाकिस्तान से बहुत बड़ा नुक़सान पहुँचेगा। सर्व-जन-मत होगा उन प्रान्तों में जहाँ मुसलमान बहुमत में हैं; इसीलिए तो इस सर्व-जन-मत के मुस्लिम लीग के ख़िलाफ़ जाने की मुझे और अधिक आशा है।

तीसरा—आप समझते हैं मुसलमान यह सब सुनेंगे, शान्ति से सुनेंगे?

अमरनाथ—ज़रूर सुनेंगे, शान्ति से न सुनें तो ख़ुद अशान्त न होकर पूरी-पूरी अहिंसात्मक शान्ति रखकर दूसरों की अशान्ति को हिम्मत से हमें बर्दाश्त कर लेना चाहिए।

चौथा—हिन्दुओं की बात तो मुसलमान सुनेंगे नहीं; **(मुसलमान कार्यकर्त्ताओं की ओर देखकर)** मुसलमानों की बातें शायद सुन लें।

अमरनाथ—न जाने इन दिनों में यह भावना इस मुल्क में कहाँ से आ गयी है कि हिन्दू हिन्दुओं की ही बात सुनेंगे और मुसलमान मुसलमानों

की। पहले यह बात नहीं थी। अगर हम पुराने इतिहास को देखें तो हमें जान पड़ता है कि वाजिब और महत्त्व की बातों को, चाहे वे हिन्दू ने कही हों या मुसलमान ने, सब ने सुना है। इतना ही नहीं, हिन्दुओं की मातहती में मुस्लिम फ़ौजों ने और मुसलमानों की मातहती में हिन्दू सेनाओं ने जंग तक किये हैं। सन्त कबीर मुसलमान थे। कितने हिन्दू उनके उपदेश सुनते थे। तानसेन मुसलमान थे। कितने हिन्दू उनके गाने सुनते थे। बल्लभाचार्य हिन्दू थे। कितने मुसलमान उनके शिष्य हुए थे। चैतन्य महाप्रभु हिन्दू थे। कितने मुसलमान उनके संग घूमते थे। अरे! हाल ही में स्वामी विवेकानन्द और रामतीर्थ के भाषणों में कितने मुसलमान जाते थे। गान्धीजी को भी कम मुसलमानों ने अपना नेता नहीं माना और मौलाना मुहम्मदअली के कम हिन्दू अनुयायी नहीं रहे। जब से हिन्दुओं के मन में यह आया कि उनकी बात मुसलमान नहीं सुनेंगे, और जब से मुसलमानों के मन में यह आया कि उनका कहना हिन्दू नहीं, तभी से परिस्थिति बिगड़ते-बिगड़ते वर्त्तमान अवस्था को पहुँची। जो बात हम ठीक समझते हैं, हमारी आत्मा ठीक समझती है, उसे हम हिन्दू और मुसलमान ही नहीं, दुनिया के हर इन्सान से कहेंगे। **(कुछ रुककर)** फिर एक बात और है।

पाँचवाँ—कौन-सी ?

अमरनाथ—हमें इस मामले पर सिर्फ़ मुसलमानों से ही बात करने की ज़रूरत है, यह नहीं समझना चाहिए।

एक मुसलमान—तब ?

अमरनाथ—हिन्दू और मुसलमान दोनों से ही हमें बातें करनी हैं, और बिलकुल साफ़-साफ़, बिना किसी लाग-लपेट के।

दूसरा मुसलमान—लेकिन राइल-आम में वोट तो सिर्फ़ मुसलमान देंगे ?

अमरनाथ—ठीक है, लेकिन स्थानीय हिन्दुओं के व्यवहार का भी तो मुसलमानों पर असर पड़ता है, बल्कि सबसे ज़्यादा। यह दो क़ौमों

की बात यद्यपि बाहर से आयी है, पर यहाँ का वायुमंडल अगर इसके पनपने लायक़ न होता, तो यह इस तरह पनप थोड़े ही सकती थी। मुसलमानों के साथ हिन्दुओं का जैसा बर्ताव होना चाहिए वैसा न था, न आज है ही। किसी जगह जाकर अगर हम मुसलमानों को समझा-बुझाकर, ठीक-ठाक करके भी चले आवें, तो भी उसका तब तक कोई नतीजा नहीं निकल सकता, जब तक हम वहाँ के हिन्दुओं को भी सारा मामला अच्छी तरह न समझा आवें और दोनों के आपसी सम्बन्ध को भी ठीक न करा आवें। **(कुछ रुककर)** जहाँ के मुसल्मानों को सर्व-जन-मत में वोट नहीं देना है, वहाँ के हिन्दू-मुसलमानों के पास भी हमें जाना होगा।

छठवाँ—यह क्यों ?

अमरनाथ—रिश्तेदारियों और दोस्ताने तो दूर-दूर तक फैले हुए हैं न। **(कुछ रुककर)** हमें सब जगह अच्छी तरह समझा देना है कि हिन्दू और मुसलमान दोनों ही पहले हिन्दुस्तानी हैं और बाद में हिन्दू या मुसलमान। हिन्दुस्तान की जनता भाव-प्रधान है तभी तो यहाँ झंडों, नारों, राष्ट्रीय गानों वग़ैरह का इतना महत्त्व है। ठीक है न ?

कुछ व्यक्ति—(एक साथ) हाँ, हाँ, यह तो ठीक है।

अमरनाथ—हिन्दू और मुसलमान दोनों में भावुक कौन ज़्यादा हैं, यह कहना मुश्किल है। दलीलों से उनके दिमाग़ों को ठीक करने के बाद हमें उनके दिलों में यह भर देने की कोशिश करनी है कि वे हिन्दुस्तानी हैं। जहाँ एक बार इस भावना ने उनके दिलों पर असर किया कि अलाहदा होने की सारी प्रवृत्ति ख़त्म हो जायगी। हाँ, इसके लिए एक बात और ज़रूरी होगी।

पहला मुसलमान—क्या ?

अमरनाथ—ख़ासकर मुसलमानों को इस बात का विश्वास कि उनके मज़हबी तथा दूसरे ऐसे मामलात में, जो सिर्फ़ मुसलमानों से ताल्लुक़ रखते हैं, उन्हें इंडियन फ़ेडरेशन में हर तरह की आज़ादियाँ रहेंगी। इस

संरक्षण के लिए भारतीय विधान में ही ऐसी धाराएँ रहेंगी कि उनमें रद्दोबदल फ़ेडरेशन के सिर्फ़ मुस्लिम मेम्बर ही कर सकेंगे, दूसरी जातियों को इस तरह की वैधानिक धाराओं में दखल देने का कोई हक़ न होगा। फिर न्यायालय राजनैतिक दबाव से मुक्त और स्वतन्त्र रहेंगे, जिससे विधान के मुताल्लिक़ वे अपने निष्पक्ष निर्णय दे सकें। इस तरह के संरक्षण का विश्वास बहुत ज़रूरी है। पृथक्करण की भावना के जन्म और पोषण में अविश्वास एक बहुत बड़ा कारण है।

दूसरा मुसलमान—और फिर मुसलमानों को यह भी तो समझना चाहिए कि अलग होने पर पाकिस्तान में भी वे तब तक न तसल्ली के साथ रह सकते और न अपनी तरक़्क़ी कर सकते, जब तक दोनों क़ौमों में इत्तफ़ाक़ न हो।

तीसरा मुसलमान—बेशक, क्योंकि बिना सच्चे इत्तफ़ाक़ के जो मुस्लिम आबादी हिन्दोस्तान में रहेगी उसे हिन्दू मनमानी तकलीफ़ें पहुँचा सकते हैं।

एक हिन्दू—बिना एकता की भावना के यह तो दोनों तरफ़ से होगा।

पहला मुसलमान—बेशक, और ऐसी हालत में आराम और तरक़्क़ी का ख़्याल ही दुश्वार है।

चौथा मुसलमान—ज़रूर, आपस में झगड़े होते रहेंगे या तरक़्क़ी होगी और आराम मिलेगा?

दूसरा मुसलमान—इसलिए जब अलग होने पर भी आपसी इत्तफ़ाक़ पहली ज़रूरत है, तब अलग होकर मुल्क के टुकड़ेकर मुल्क और दोनों क़ौमों को कमज़ोर बना, नये-नये झगड़े और नयी-नयी आफ़तों के बीज क्यों बोये जायँ और एक साथ ही रहकर, जो छोटे-मोटे झगड़े हो गये हैं, उनका किसी भी तरह समझौता क्यों न कर लिया जाय?

पहला मुसलमान—फिर मुसलमान कोई कमज़ोर क़ौम नहीं। अगर हम अलग होकर अपने हक़ों की हिफ़ाज़त कर सकते हैं, तो क्या साथ रहकर नहीं? अलग तो हम पाँच करोड़ ही होंगे, साथ-साथ रहे तो इससे क़रीब-क़रीब दुगने।

दूसरा मुसलमान—और तमाम रिआया के लिए सच्चे इस्लामी क़ानून तो हम अलग होने पर भी पास कराकर काम में नहीं ला सकते, क्योंकि बंगाल और पंजाब ही हमारे सबसे बड़े सूबे होंगे और दोनों में हिन्दू सिक्ख वग़ैरह दूसरी क़ौमों की बहुत बड़ी तादाद है।

[कुछ देर निस्तब्धता।]

अमरनाथ—असेम्बलियों, कौंसिलों वग़ैरह के चुनावों में हमने काफ़ी परिश्रम उठाये हैं। एक-एक दिन में दस-दस, बीस-बीस और पच्चीस-पच्चीस सभाएँ की हैं। न भोजन की चिन्ता रखी है और न सोने की परवाह। कई बार काफ़ी जोखिम उठायी हैं—रास्ते में नदी, नालों की और मारपीट की भी। उन चुनावों से कहीं ज्यादा महत्त्व रखता है यह सर्व-जन-मत। हमें आज से लेकर जब तक यह सर्व-जन-मत न ले लिया जाय, चुनावों से भी कहीं अधिक परिश्रम करने, तकलीफ़ें और जोखिमें उठाने का संकल्प करके यहाँ से उठना चाहिए। आज से इस सर्व-जन-मत के दिन तक शहर-शहर और गाँव-गाँव, हर हिन्दू-मुसलमान तक अपने मत को पहुँचाना हमारी दिवस की चिन्ता और रात्रि का स्वप्न होना चाहिए।

सब—**(एक साथ)** यही होगा।....यही होगा।....बेशक ....बेशक।

लघु यवनिका

*

चौथा दृश्य

स्थान—पहले अंक के चौथे दृश्य वाले गाँव का ही एक दूसरा स्थान

समय—रात्रि

[एक ओर सड़क का कुछ हिस्सा दिखायी पड़ता है, लेकिन अँधेरे के कारण धुंधला, दूसरी तरफ़ गाँव के झोपड़े, पक्के मकान, मन्दिर, मस्जिद आदि भी, पर ये भी अँधेरे की वजह से स्पष्ट नहीं और धुंधले, मिले से। बीच में बहुत बड़े बरगद के दरख़्त का कुछ भाग दिख पड़ता है। उसकी शाखाओं से नीचे की तरफ़ आने वाली बरोहें जमीन् को छू रही हैं, तथा काफ़ी मोटी हो गयी हैं, जिससे जान पड़ता है कि पेड़ बहुत पुराना है। वृक्ष के नीचे कुछ पत्थर की मूर्तियाँ और एक बड़ा-सा पत्थर नजर आते हैं। यह बड़ा पत्थर अधर सा खड़ा जान पड़ता है पत्थर और मूर्तियों पर सिन्दूर लगा है, पत्थर पर बहुत अधिक; साथ ही कुछ कनेर और जासौन के फूल भी चढ़े हैं। मूर्तियों के चारों तरफ़ फूटे हुए नारियलों के छिलके पड़े हैं। नारियल की चिटकें देवताओं के निकट पड़ी हैं। दरख़्त के नजदीक ही एक तरफ़ आग जल रही है और दूसरी ओर एक देहाती मशाल लिये बैठा है। आग और मशाल के बीच में कुछ आगे की तरफ़ एक ओर हिन्दू और दूसरी ओर मुसलमान बैठे हुए हैं, पर ये इस तरह एक दूसरे के सामने मुँह किये बैठे हैं कि बरगद के नीचे के देवता स्पष्ट दीख पड़ते हैं और उनकी तरफ़ उनकी पीठ भी नहीं है। इनके बीच में महफ़ूजख़ाँ बैठा है। महफ़ूजख़ाँ भी मूर्तियों और पत्थर को अदृश्य नहीं किये है, लेकिन उसकी पीठ इन देवताओं की ओर जरूर है। आग और मशाल के प्रकाश की वजह से बरगद और उसके आस-पास का सारा दृश्य स्पष्ट है।]

महफ़ूजख़ाँ—कितना....कितना वक़्त गुज़र गया। लंका की लड़ाई तो जल्दी ही समाप्त हो गयी थी। कुरुक्षेत्र का महाभारत भी

अठारह दिनों में ख़त्म हो गया था। पर महीनों बीत जाने पर भी हमारे लंकाकाण्ड, हमारे महाभारत का अन्त नहीं दिख रहा है। जिस गाँव में आपसी प्रेम की वजह से पूरी शान्ति थी, कभी-कभी आर्थिक तकलीफ़ें हमें ज़रूर दुख दे जाती थीं, लेकिन उन्हें भी हम परस्पर सहयोग के सबब से किसी न किसी तरह सह ही लेते थे, उसी गाँव में आज यह गृह-कलह, हिन्दू-मुसलमानों का झगड़ा ! व्यक्तिगत ताल्लुक़ात में ही नहीं, पर सार्वजनिक सम्बन्धों में भी यहाँ कितना मेल-जोल था। यहाँ ईद के दिन मुसलमान, मुसलमान ही गले न मिलते थे पर हिन्दू और मुसलमान भी। यहाँ मुहर्रम के दिन मुसलमान ही आँसू नहीं बहाते थे, पर हिन्दू भी। यहाँ दिवाली के चिराग़ हिन्दुओं के घर में ही नहीं जलते थे, पर मुसलमानों के घर भी उनसे रोशन होते थे। यहाँ होली के रंग से हिन्दू ही रंगीन न होते थे, पर मुसलमानों पर भी वह उसी तरह खिलता था। मन्दिर और मस्जिद तो, भाइयो, आपसी मुहब्बत के साधन होने चाहिए।

एक मुसलमान किसान—पर, भइया, तुम मस्जिद कहाँ मानते हो ?

एक हिन्दू किसान—और न मन्दिर।

महफ़ूजखाँ—मैं मानूँ चाहे न मानूँ, पर आप लोग तो मानते हैं न, और ईश्वर तथा ख़ुदा को मानकर....

एक युवक—भइया, ईश्वर और ख़ुदा की बात तुम छोड़ दो।

महफ़ूजखाँ—अच्छा छोड़ देता हूँ, और ताऊ और चाचा की बात करता हूँ; वह तो कर सकता हूँ न ? कल तक जिन ताऊ और चाचा का काम एक दूसरे के बिना एक मिनिट भी न चलता था, आज महीनों से वे एक दूसरे से बोले तक नहीं हैं। सारे हिन्दू मुसलमानों और तमाम मुसलमान हिन्दुओं की जान के गाहक हो रहे हैं। ....क्या पिछला वक़्त अब सपना ही हो गया ?....सपने भी कभी लौट-लौटकर आ जाते हैं, पर वह समय तो सपनों के समान भी लौटता नहीं दिखता।.... यह क्या हुआ ?....क्या हो रहा है ?....इन दिनों मैंने हरचन्द

कोशिशें कीं कि किसी तरह यह कलह मिटे, पर कलह मिटना तो दूर रहा, कलह का कारण ही कोई साफ़-साफ़ बताने को तैयार नहीं। कितनी मुश्किलों से आज आप सब को इकट्ठा कर पाया हूँ। और देखिए, या तो आज इस झगड़े का खात्मा हो, या फिर मैं अपना बसना-बोरिया बाँधकर चला।

[महफ़ूजखाँ चुप होकर दृष्टि को घुमाता हुआ सब की तरफ़ देखता है। कोई कुछ नहीं बोलता। सब एक दूसरे की ओर एक विचित्र प्रकार की दृष्टि से देखते हैं और जब एक देखता है कि दूसरा उसी की तरफ़ देख रहा है, तब वह जल्दी से अपनी नजर या तो नीची कर लेता है, या दूसरी ओर घुमा लेता है। कुछ देर सन्नाटा।]

महफ़ूजखाँ—फिर भी आप चुप हैं। मैं कहता हूँ, जब तक आप साफ़-साफ़ बात न करेंगे, जब तक अपना-अपना दिल खोलकर एक दूसरे के सामने न रखेंगे, तब तक इस झगड़े का अन्त हो ही नहीं सकता। **(फिर भी सब को चुप देखकर, बरगद के नीचे के देवताओं की ओर इशारा कर)** इस देवता को तो आप हिन्दू-मुसलमान सभी मानते हैं। खुश क़िस्मती से आज इसीकी साया में अब इकट्ठे हुए हैं। मैं इसी देवता की क़सम दिलाता हूँ आपको, कर डालिए. . . .कर डालिए किसी तरह दिल को साफ़ !

एक मुसलमान किसान—पर, भइया, तुम तो इस देवता को भी नहीं मानते।

एक हिन्दू मजदूर—तभी तो देखो, देव को भी पीठ किये बैठे हैं।

महफ़ूजखाँ—(कुछ घूमकर बैठते हुए, मुल्ला से) बोलो, ताऊ, तुम्हीं बोलो, तुम्हीं कुछ कहो।

मुल्ला—(लम्बी साँस लेकर) क्या बोलूँ मैं ?

महफ़ूजखाँ—(चौधरी से) तो आप ही बोलो, चाचा।

चौधरी—(गला साफ़ करते हुए) मुझे तो कुछ नहीं कहना है।

महफ़ूजख़ाँ—(किसान मजदूरों से) अच्छी बात है, ताऊ और चाचा को अगर कुछ नहीं कहना है, तो आप ही लोग कहिए, कोई तो बोलिए।

एक हिन्दू किसान—हम क्या कहें ? ऐसी कौन-सी बात है, भइया, जो तुम्हें मालूम न हो ?

दूसरा हिन्दू किसान—हाँ, हाँ, तुम्हें क्या नहीं मालूम है ?

एक हिन्दू मजदूर—फिर हमारे मुँह से क्यों कुछ कहलाना चाहते हो ?

दूसरा हिन्दू मजदूर—हाँ, भइया, हमारे घाव ताजे न करो !

महफ़ूजख़ाँ—मुझे झगड़े के कोई कारण मालूम नहीं यह मैं नहीं कहता, पर मैं चाहता हूँ कि आप लोग ही एक दूसरे के सामने अपनी शिकायतें पेश करें, झगड़े का सच्चा और टिकाऊ तस्फ़िया तभी हो सकेगा।

चौधरी—तो फिर मुल्ला ही क्यों नहीं कहते। वे कहें न कि उन्हें हमारे खिलाफ क्या कहना है ?

मुल्ला—पहले वह कहे जिसने झगड़ा सुरू किया।

कुछ हिन्दू—(एक साथ कुछ उत्तेजित हो) हिन्दुओं ने ?..... हिन्दुओं ने झगड़ा शुरू किया है ?

कुछ मुसलमान—(और उत्तेजना से, एक साथ) बेशक !..बेशक !

महफ़ूजख़ाँ—(जल्दी से) आप लोग शान्त....थोड़ा शान्त रहें; नहीं तो फिर इस इकट्ठे होने का नतीजा और भी बुरा निकलेगा। **(कुछ रुककर, मुसलमानों से)** अच्छा थोड़ी देर को अगर यह भी मान लिया जाय कि झगड़ा हिन्दुओं ने शुरू किया है, तो उसकी शिकायत तो आप ही लोगों को करनी चाहिए न ?

एक मुसलमान किसान—तुम तो हमेसा हिन्दुओं की पच्छ करते ही हो। झगड़ा हिन्दुओं ने सुरू किया, यह थोड़ी देर को कैसे मान लिया जाय ? यह तो हमेसा को मानना होगा कि (इस गाँव में झगड़ा हिन्दुओं ने सुरू किया। न दुर्गा पूजा के बाजे हमारी मस्जिद के सामने बजते, न झगड़ा होता।)

एक हिन्दू किसान—इसके पहले कभी बाजे मस्जिद के सामने काहे को बजे होंगे ? अरे मियाँजी, हिन्दुओं का हर जुलूस, जिसमें पहले तुम लोग भी सामिल रहते थे, मस्जिद के सामने से ही निकलता था और बाजा बजाता हुआ ।

मुल्ला—इसके पहले मस्जिद के सामने कभी बाजे नहीं बजे ।

चौधरी—अरे ! काहे को झूठ बोलते हो, मुल्ला....

मुल्ला—(**क्रोध से**) इसीलिए तो मैं बोलता नहीं था; मैं झूठा....

कुछ हिन्दू—(**एक साथ उत्तेजना से**) हाँ, हाँ, एक बार नहीं हज़ार बार झू........

महफ़ूजखाँ—(**बीच ही में हिन्दुओं को रोकते हुए**) फिर....फिर अशान्ति....भाई ! शान्ति....शान्ति से बात करो । (**मुसलमानों से**) अच्छा, झगड़े का एक सबब तो बाजा हुआ । और कहो ।

मुल्ला—कुछ नहीं, बाबा, हमें कुछ नहीं कहना है; हम तो झूठे हैं ।

महफ़ूजखाँ—देखो, ताऊ, ऐसी बातों का ख्याल नहीं करना पड़ता; झगड़ों में तो ऐसी कहा-सुनी हो ही जाती है । (**कुछ रुककर मुसलमानों से**) हाँ, तो आगे बढ़ो ।

[**कोई कुछ नहीं बोलता । कुछ देर निस्तब्धता ।**]

महफ़ूजखाँ—(**हिन्दुओं से**) अच्छा, देखो, मुसलमानों का मन जिस बात से दुखा वह उन्होंने कह दी । अब आप लोग बताओ कि आपकी क्या शिकायत है ?

एक हिन्दू किसान—हमारी ?....हमारी सिकायत तो बहुत बड़ी है । बीच गाँव में दिनदहाड़े इन लोगों ने गाय काटी है ।

एक मुसलमान किसान—हमारी मस्जिद के सामने बाजा बजाने से मस्जिद नापाक हो गयी । कुफ्फ़ारे के बिना वह पाक नहीं हो सकती थी ।

एक मुसलमान मजदूर—और मस्जिद के पाक हुए बिना नमाज नहीं ।

दूसरा मुसलमान मजदूर—गाय की कुर्बानी हमारा मजहबी हक है ।

दूसरा मुसलमान किसान—और वही करके हमने मस्जिद को पाक किया।

एक हिन्दू मजदूर—**(क्रोध से)** ओ हो रे! पाक और नापाक...

दूसरा हिन्दू मजदूर—**(उत्तेजित स्वर से)** इसके पहले कभी इस तरह गाय कटी?

कुछ हिन्दू—**(एक साथ उत्तेजित स्वर से)** कभी नहीं! कभी नहीं!

महफ़ूजखाँ—**(जल्दी से)** देखो, फिर....फिर अशान्त हो रहे हो।....शान्ति....शान्ति। **(कुछ रुककर, हिन्दुओं से)** अच्छा और कोई शिकायत?

एक हिन्दू किसान—यही क्या छोटी सिकायत है?

[कुछ देर निस्तब्धता।]

महफ़ूजखाँ—**(दोनों समुदायों की तरफ़ देखकर)** अच्छा, देखो, मैं किसी का पक्ष न लेकर सच्ची-सच्ची बात कहूँ; सुनोगे?

[कोई कुछ नहीं बोलता, फिर सन्नाटा।]

महफ़ूजखाँ—जहाँ तक बाजे का प्रश्न है, मेरा यह कहना है कि इसके तीन पहलू हैं। अगर कोई यह कहता है कि बाजे से नमाज़ में ख़लल पहुँचता है तो मैं कहूँगा कि अगर ध्यान लगा हो तो किसी बाहरी आवाज़ से वह नहीं टूट सकता।

एक मुसलमान किसान—तुम क्या जानो, कभी ध्यान लगाते हो?

महफ़ूजखाँ—चाहे न लगाता होऊँ, पर जानता अवश्य हूँ। फिर बड़े-बड़े शहरों के बाज़ारों में भी मस्जिदें हैं। वहाँ के हल्ले-गुल्ले, मोटरों के बिगुल और बग्गी, ताँगों की घंटियों से यदि नमाज़ में विघ्न नहीं पड़ता तो मामूली बाजों से कैसे पड़ सकता है? और आज तो यह सवाल विघ्न का न रहकर कदमों का हो गया है। मस्जिद से दस क़दम पर बजायी हुई मन्द बाँसुरी विघ्नकारक मानी जाती है, पर चालीस क़दम पर बजने वाला

भड़भड़ाता हुआ ढोल नहीं। दूसरा पहलू यह है कि मुसलमानों के लिए यह मजहबी सवाल नहीं है।

कुछ मुसलमान—(एक साथ) मजहबी सवाल कैसे नहीं है ?

महफ़ूजखाँ—अगर आप मेरी पूरी बात बिना दख़ल दिये शान्ति से सुन लेंगे तो मान जायँगे कि मेरा कहना ठीक है। हमारे पैग़म्बर साहब के ज़माने में यह प्रश्न उठा ही नहीं था। मैंने क़ुरान शरीफ़ की एक-एक आयत ध्यान से पढ़ी है। आप जानते हैं मैं अरबी ज़बान अच्छी तरह जानता हूँ। सारे क़ुरान शरीफ़ में इसके मुताल्लिक़ मुझे कहीं एक शब्द भी नहीं मिला। यह सवाल पहले पहल उठा था मिसर देश में हज़रत उमर इब्न ख़त्ताब के समय में। उस वक़्त मिसर के लोग ज्यादातर ईसाई थे। इस्लाम कहता है हर मुसलमान को फ़ौज का सिपाही होना चाहिए, परन्तु मुस्लिम सेना में उस वक़्त इस्लाम के अनुयायी ही भरती हो सकते थे और इस्लाम ग्रहण न करने वालों को फ़ौज में भरती न हो सकने की वजह से जज़िया नामक टैक्स देना पड़ता था, जिसका आगे चलकर एक कुत्सित रूप हो गया। मिसर पर हज़रत उमर का दख़ल होते ही जब मिसर वालों के फ़ौज में भरती होने या जज़िया देने का प्रश्न उठा, तब वहाँ के बाशिन्दगान ने दोनों ही बातें अस्वीकृत कर दीं। उस वक़्त हज़रत उमर और उनमें एक समझौता हुआ और उस समझौते में तय हुआ कि मिसर में मुसलमानों के मजहबी काम बिना किसी ग़ुल-गपाड़े वग़ैरह के होने दिये जायँगे। पहले-पहल मस्जिद के सामने बाजे बजने का प्रश्न वहाँ उठा और वह मुसलमानों और ईसाइयों के दर्म्यान एक सुलहनामे की शक्ल में। इससे मजहब का कोई सम्बन्ध ही नहीं है।

एक मुसलमान किसान—आखिर तुम हिन्दुओं की पच्छ करोगे, यह तो हम जानते ही थे।

महफ़ूजखाँ—बिना पूरी बात सुने मुझे दोष न दो। मैंने अभी सवाल के दो पहल बताये हैं, एक पहलू और भी जो है।

एक मुसलमान मजदूर—उस पहलू को और बता दो।

महफ़ूजखाँ—वह पहलू है मस्जिद की इज़्ज़त का।

दूसरा मुसलमान किसान—सो हम तुम्हारी राय जानते हैं। तुम्हारे लिए मस्जिद और किसी मामूली मकान में कोई फर्क नहीं।

महफ़ूजखाँ—मेरे लिए चाहे न हो, पर आप लोगों के लिए तो है। और जब हिन्दू आप के पड़ोसी हैं तब उन्हें आप की भावनाओं का ख्याल ज़रूर ही करना होगा। पहले बाजे बजते थे या नहीं, इस वक्त यह प्रश्न नहीं उठना चाहिए। अगर अब मुसलमानों के दिल बाजे बजने से दुखने लगे हैं तो हिन्दुओं का कर्त्तव्य है कि वे मस्जिद के सामने बाजा बजाना बन्द कर दें।

एक हिन्दू मजदूर—आखिर, भइया, हो तो मुसलमान ही।

महफ़ूजखाँ—तुम मुझे बिल्कुल ग़लत समझ रहे हो, मैंने मुसलमानों का ज़रा भी पक्ष नहीं लिया है। **(कुछ रुककर)** अच्छा, अब गोकुशी के सम्बन्ध में भी मेरी बात सुनो। इस सवाल के दो पहलू हैं।

कुछ हिन्दू—**(उत्तेजना से)** दो....दो पहलू !....इसके.... इसके दो पहलू....हो....हो नहीं सकते।

महफ़ूजखाँ—**(जल्दी से)** शान्ति !....शान्ति !....पहले मेरी पूरी बात सुन लो। सबसे पहले मैं यह कहूँगा कि गोकुशी को आप लोगों ने जो धर्म का सवाल बना लिया है, यह ग़लत बात है।

एक हिन्दू किसान—तुम धरम-करम क्या जानो ?

महफ़ूजखाँ—मैं धर्म मानता नहीं, पर जिसे आप लोग धर्म कहते हैं, उसे जानता ज़रूर हूँ। पहले हिन्दू तक गऊ का गोश्त खाते थे।

कुछ हिन्दू—**(एक साथ कानों पर हाथ रख)** शिव ! शिव ! हरि ! हरि !...

महफ़ूजखाँ—न मानो तो अपनी पुरानी पुस्तकें देख लो। महाराज रन्तिदेव के यहाँ हज़ारों गायें इसलिए रहती थीं कि उनका मांस दावतों

में खिलाया जाता था। भवभूति ने उत्तर रामचरित नाटक में लिखा है कि एक मर्तबे जब वसिष्ठ ऋषि वाल्मीकि ऋषि के आश्रम को गये तब उनकी खातिरदारी के लिए आश्रम की एक बछिया मारी गयी थी।

एक हिन्दू किसान—(क्रोध से) झूठ ! बिल्कुल झूठ !

कुछ हिन्दू—(एक साथ, क्रोध से) हाँ ! हाँ ! . . . . झूठ ! . . . . झूठ !

महफ़ूजखाँ—सच है या झूठ, यह तो महाभारत, पुराणों और इस नाटक को किसी अपने पंडित से पढ़वा कर सुन लो।

तीसरा हिन्दू किसान—(क्रोध से) नाटक-चेटक तो हम जानते नहीं, पर जिसने यह सब लिखा, वह भूत ही तो है, हिन्दू नहीं।

महफ़ूजखाँ—भूत नहीं, जिसने नाटक लिखा उसका नाम भवभूति था; और महाभारत तथा पुराणों के लिखने वाले तो वेदव्यास थे।

तीसरा हिन्दू किसान—जो कुछ हो, जिनने भी यह सब लिखा है वे अधरमी होंगे; पापी ! वेद सास्तर, किसी में लिखा है कि हिन्दू गाय का गोस खाते थे ?

महफ़ूजखाँ—हाँ, वेदों में भी गोमेध यज्ञ का ज़िक्र है।

चौथा हिन्दू किसान—वह मैं भी जानता हूँ, पर इन जग्यों में जिसका बलिदान किया जाता था उन्हें रिसी लोग तपस्या के बल से जिला देते थे।

महफ़ूजखाँ—यह भी कहीं लिखा है ?

चौधरी—(क्रोध से) बी० ए० पास करने से तू समझता है कि तू हिन्दुओं के धरम सास्तर भी जानता है ?

महफ़ूजखाँ—चाचा, मैं हिन्दुओं के धर्मशास्त्र को उतना ही जानता हूँ, जितना क़ुरान को। बी० ए० में मैंने संस्कृत लिया था। मुझे धर्म पर विश्वास न होते हुए भी संस्कृत से इसलिए दिलचस्पी थी कि उससे हिन्दुस्तान की पुरानी विचारपद्धति और संस्कृति का भी पता लग जाता

है। इसलिए मैंने हिन्दुओं के वेद, शास्त्र, स्मृतियाँ, पुराण, काव्य, नाटक आदि मुसलमानों की पुस्तकों से भी ज़्यादा पढ़े होंगे, कम नहीं।

एक हिन्दू किसान—और तुम मानते हो कि पहले हिन्दू गऊ का गोस खाते थे ?

महफ़ूज़खाँ—ज़रूर खाते थे और बाद में वह इसलिए छोड़ा गया कि उससे भी हमारी रोटी के सवाल का बहुत बड़ा सम्बन्ध था। खेती इस देश के लोगों का मुख्य पेशा हो गया था। यहाँ की खेती बग़ैर गाय-बैल के हो नहीं सकती थी। इसलिए इन्हें पूज्य-पशु मानकर इनका गोश्त खाना धर्म की नज़र से वर्जित कर दिया गया और आज भी इस मुल्क में गोकुशी हिन्दू-मुसलमान सब के लिए समान रूप से बुरी चीज़ है। आप सब जानते हैं कि मुसलमान होते हुए भी मैंने आज तक गो-मांस खाना तो दूर रहा, पर उसे छुआ तक नहीं है।

एक मुसलमान किसान—तुम हो नाम के मुसलमान, मजहबी मुसलमान नहीं; गो-कुशी हमारा मजहबी सवाल है।

महफ़ूज़खाँ—ग़लत बात है। आप लोग जानते हैं कि हमारे पैग़म्बर साहब तक ने कभी गो-मांस नहीं खाया। एक बार गाय के गोश्त के शोरबे में उन्होंने अपनी सबसे छोटी उँगली डुबोकर उसे केवल ओठ पर लगाया था, यह भी सब नहीं थोड़े से उलेमाँ मानते हैं। यह इसलिए जिससे गाय क़ुर्बानी के जानवरों में शामिल कर दी जाय। गाय की क़ुर्बानी इस्लाम में कोई ज़रूरी बात नहीं। फिर हिन्दुस्तान में तो उसकी क़ुर्बानी आवश्यक चीज़ हो ही नहीं सकती। (**कुछ रुककर**) जिस गऊ के दूध को बचपन में पीकर हम सिर्फ़ बड़े ही नहीं होते, परन्तु बड़े होने पर उसके न मिलने पर न मज़बूत रह सकते हैं न निरोग, बीमारी में जिसके दूध के बिना हम ज़िन्दा नहीं रह सकते, जिसके बच्चों को बैल बनाकर हम खेती करते और माल ढोते हैं, जिनके बिना हमारी ज़मीन पड़ती पड़ जायगी, हमारा माल एक जगह से दूसरी जगह न जायगा, अरे ! जिसके गोबर

के बिना हमारे घर तक साफ़ नहीं रह सकते, उस गऊ को मारने से बुरी और कोई बात नहीं हो सकती; उसकी क़ुर्बानी से मस्जिद पाक न होकर उल्टी नापाक हो जायगी।

एक मुसलमान मजदूर—(खड़े होते हुए) चलो जी, हम यहाँ से चलेंगे। आधे तीतर और आधे बटेर, हिन्दू और मुसलमान एक ही में मिले हुए आदमी से हम मजहबी सबक नहीं ले सकते।

दूसरा मुसलमान मजदूर—(खड़े होते हुए) गोकुशी हमारा मजहबी फर्ज है, उसे हम बन्द नहीं कर सकते।

[सब मुसलमान खड़े हो जाते हैं।]

एक हिन्दू किसान—(अत्यन्त उत्तेजना से) देखें अब कौन इस गाँव में गऊ माता को मारता है? उसका सिर धड़ पर न रहेगा।

कुछ हिन्दू—(खड़े होकर एक साथ) हाँ, हाँ,....हाँ, हाँ,.... उनके सिर....उनके सिर कभी धड़ पर न रहेंगे।

महफ़ूजखाँ—(खड़े होकर, दोनों हाथ जोड़ते हुए) शान्ति !.... शान्ति !....बैठिए, बैठिए।

एक हिन्दू मजदूर—(उत्तेजना से) क्या....क्या बैठिए? बैठिए? हम हैं हिन्दू। समझे हिन्दू ही रहेंगे।

दूसरा हिन्दू मजदूर—ये सिर....सिर कटने की बातें हैं।

महफ़ूजखाँ—कैसी सिर कटने की बातें? गो-वध बुरा है, बहुत बुरा है, यह तो मैं मानता हूँ, लेकिन अगर एक गाय के मारने पर आप आदमियों के सिर काटने की बातें करते हैं तो गोरी फ़ौजों के लिए जो हज़ारों गायें कटती हैं उन काटने और खाने वालों के सिर आप क्यों नहीं काटते? इन छोटी-छोटी मज़हबी कही जाने वाली बातों....

एक हिन्दू किसान—(बीच ही में अत्यन्त उत्तेजना से) ये छोटी... छोटी बातें हैं....

एक मुसलमान किसान—(**बीच ही में अत्यन्त क्रोध से**) मजहबी बातें....छोटी-छोटी....

दूसरा मुसलमान किसान—(**अत्यन्त उत्तेजित हो**) और अगर हिन्दू, हिन्दू ही रहेंगे, तो मुसलमान भी मुसलमान ही....

तीसरा मुसलमान किसान—(**अत्यन्त क्रोध से**) हाँ, वह हिन्दू नहीं हो जायँगे !

एक मुसलमान मजदूर—(**क्रुद्ध स्वर में**) और डरते भी नहीं हैं, वे हिन्दुओं से, सुना ?....

कुछ हिन्दू—(**एक साथ क्रोध से**) तो...तो क्या हिन्दू डरते हैं ?

कुछ मुसलमान—(**एक साथ क्रोध से**) मुसलमान भी नहीं डरते ! ....मुसलमान भी....

[एकदम हल्ला होने लगता है। हल्ले में महफ़ूजखाँ की आवाज तो नहीं सुनायी देती, पर वह हाथ जोड़-जोड़कर लोगों को बैठाने की कोशिश कर रहा है, यह दिख पड़ता है। उसी समय नेपथ्य में मोटर खड़े होने की आवाज आती है। सब लोग चुप होकर सड़क की तरफ़ देखते हैं। अमरनाथ का एक साथी के साथ सड़क से प्रवेश।]

महफ़ूजखाँ—(**आगे बढ़कर**) आइए, आइए, (**और भी आगे बढ़कर हाथ जोड़कर**) नमस्ते। (**किसान-मजदूरों से**) आप लोग भी नजदीक आ जाइए।

[समुदाय के लोग एक दूसरे की ओर देखते हुए विवश-से आगे बढ़ते हैं। अमरनाथ भी अपने साथी के साथ नजदीक आ जाता है। दोनों आगन्तुक हाथ जोड़कर सब का अभिवादन करते हैं। समुदाय के लोग भी अभिवादनों का उत्तर देते हैं।]

अमरनाथ—(**सब की तरफ़ देखते हुए**) हम सचमुच शुभ मुहूर्त में आये। इतने सज्जनों के एक साथ ही सड़क के इतने नजदीक दर्शन हो

गये, **(पत्थर और मूर्तियों की ओर देखकर)** और फिर ऐसी पवित्र जगह, **(झुककर पत्थर और मूर्तियों को प्रणामकर)** ख़ुश क़िस्मती है।

महफ़ूज़खाँ—आपके दर्शन तो हमारे लिए भी ख़ुश क़िस्मती की ही बात है, लेकिन....लेकिन वह ऐसे समय हुए हैं कि क्या कहूँ ?

अमरनाथ—क्यों, क्या हुआ, महाशय ?

महफ़ूज़खाँ—अपने गाँव का झगड़ा मेहमानों के सामने रखना तो कोई बहुत अच्छी बात नहीं, परन्तु अगर झगड़े के बीच में ही मेहमान आ जायँ तो फिर क्या किया जा सकता है ?

अमरनाथ—आपको इस तरह के संकोच की ज़रूरत नहीं, महाशय। असल में तो सारा हिन्दुस्तान हमारा घर है और हम सब उस घर में रहने वाले कुटुम्बी; न कोई ग़ैर है, न मेहमान। क्या मामला है ?

महफ़ूज़खाँ—मामला तो कुछ नहीं है। हम धजी का साँप बना बैठे हैं, और वही अब हमें डस रहा है। हम आज उसे मारने के लिए ही इकट्ठे हुए थे, पर शायद हम सब की ताक़त से उसकी फुफकार में अधिक बल है।....बैठिए, आप भी निपटाने की कोशिश कर देखिए। **(समुदाय से)** भाइओ ! आप भी बैठ जाओ।

(सब लोग बैठते हैं, परन्तु समुदाय वाले अनमने से।)

अमरनाथ—क्या जो वोट पड़ने वाले हैं उनके सम्बन्ध में कोई झगड़ा है ?

महफ़ूज़खाँ—तह में शायद हो, ऊपर से देखने से तो मस्जिद के सामने बाजे और गोकुशी का प्रश्न है।

अमरनाथ—अच्छा !

महफ़ूज़खाँ—जी हाँ ! और उसे दोनों ही फ़िरक़े छोटा-सा प्रश्न न मानकर, बड़ा अहम मज़हबी मसला मानते हैं।

अमरनाथ—सवाल छोटा है, या बड़ा यह बात नहीं ह, परन्तु बड़े बेमौक़े यह उठा है, इसमें सन्देह नहीं। धर्म बड़ी भारी और बड़ी पवित्र

चीज़ है और इस धर्म का काम है—एक दूसरे को मिलाना, पर देखा यह जाता है कि छोटी-छोटी चीज़ों को धर्म का रूप दे दिया जाता....

एक मुसलमान किसान—(बीच ही में) मस्जिद की बेइज्जती छोटी चीज नहीं।

कुछ मुसलमान—(एक साथ) हरगिज नहीं....हरगिज नहीं।

एक हिन्दू किसान—और गाय काटना छोटी बात है न ?

कुछ हिन्दू—(एक साथ) बिल्कुल नहीं। बिल्कुल नहीं।

अमरनाथ—लेकिन, भाइयो, फूट इन चीज़ों से भी बड़ी चीज़ है। आपसी फूट ने हमें ग़ुलाम बनाया। साम्प्रदायिकता का ज़हर फैलाकर इस ग़ुलामी को क़ायम रखने के विदेशियों ने अगणित प्रयत्न किये। ग़ुलाम कभी सच्चे धर्म का पालन कर सकते हैं ? उनका तो एक ही मज़हब होता है—ग़ुलामी को दूर कर आज़ादी प्राप्त करना, चाहे वे ग़ुलाम किसी भी जाति के हों और कोई भी धर्म मानने वाले। बमुश्किल ग़ुलामी की ज़ंजीरों के कटने का अवसर दिखा और उस मौक़े पर भी अगर इस तरह की छोटी-छोटी बातें—बाजा, गोकुशी को लेकर हम आपस में लड़ेंगे.......

एक मुसलमान मजदूर—(खड़े होते हुए) अरे ! यह सब पढ़े-लिखे शहराती एक-से होते हैं।

दूसरा मुसलमान मजदूर—(खड़े होते हुए) हाँ, कोई गुलामी की बात करता है, और कोई रोटी की।

महफ़ूजख़ाँ—दोनों ही जो सबसे ज़रूरी वस्तुएँ हैं।

एक मुसलमान किसान—(खड़े होकर) मजहब छोड़ दें। मस्जिद की इज्जत इन चीजों से भी बड़ी चीज है।

कुछ मुसलमान—(एक साथ) बेशक ! बेशक !

एक हिन्दू किसान—(खड़े होते हुए) धरम नहीं छोड़ सकते। आजादी और रोटी से भी बड़ा सवाल है—गाय का।

कुछ हिन्दू—(एक साथ) जरूर ! जरूर !

महफ़ूजखाँ—शान्त....शान्त होइए आप लोग।....करिए जो खुशी हो, लेकिन मेहमानों की बात तो सुन लेनी चाहिए।

अमरनाथ—पर, भाइयो, धर्म या मजहब छोड़ने को तो मैंने कभी नहीं कहा। मैं आपके यहाँ कई शहरों और गाँवों से घूमता हुआ आ रहा हूँ। और अधिकांश जगह मैंने देखा कि इसी तरह के न जाने कितने सवालों की इस समय बाढ़-सी आ गयी है। मुल्क को तक़सीम करने के मामले में जो वोट पड़ने वाले हैं, वह आप जानते हैं ?

कुछ लोग—(एक साथ) हाँ, हाँ, जानते हैं।

अमरनाथ—इसी तरह की बातों की मदद ले-लेकर देश का बँटवारा कराया जाने वाला है। आप लोग क्या यह चाहते हैं कि आपके देश के टुकड़े-टुकड़ेकर मुल्क को कमज़ोर बना दिया जाय ? हिन्दू राज्य अलग और मुस्लिम राज्य अलग क़ायम किये जायँ ? हिन्दू और मुसलमानों को सदैव के लिए जुदा-जुदाकर इस देश में ऐसी समस्याएँ उठा दी जायँ, जिनका हल करना आगे चलकर ग़ैरमुमकिन हो जाय ? हिन्दू राज्य के सब मुसलमान तो अपनी ज़मीन-जायदाद छोड़कर मुस्लिम राज्य में ज़ायँगे नहीं, और मुस्लिम राज्य के सब हिन्दू, हिन्दू राज्य में नहीं। हिन्दुस्तान में मुसलमानों और पाकिस्तान में हिन्दुओं पर कितने अत्याचार होंगे, इसकी आप कल्पना कीजिए। कितनी....कितनी तकलीफ़ें बढ़ जायँगी ?

एक मुसलमान किसान—अभी कौन-सा आराम है ?

दूसरा मुसलमान किसान—हाँ, अलग-अलग हो जाना तो कहीं बेहतर होगा।

कुछ मुसलमान—(एक साथ) हाँ ! हाँ ! कहीं....कहीं बेहतर।

एक मुसलमान मजदूर—चलो, चलोजी, हमें इन शहरातियों की बातें ही नहीं सुनना है।

कुछ मुसलमान––**(उठते हुए)** हाँ ! हाँ ! चलो. . .चलो ।

महफ़ूजख़ाँ—देखिए. . . .देखिए. . . .

[कोई नहीं सुनता। सब मुसलमानों का प्रस्थान ।]

एक हिन्दू किसान––**(उठते हुए)** हाँ, हाँ, हम भी इन शहरातियों की बातें सुनते-सुनते बहरे हो गये।

दूसरा हिन्दू किसान––**(उठते-उठते)** इस तरह की गऊ-हत्या से तो देस क्या गाँव-गाँव का भी बँटवारा हो जाय तो अच्छा ।

तीसरा हिन्दू किसान––**(उठते-उठते)** जहाँ हिन्दू हों वहाँ मुसलमान नहीं ।

एक मजदूर––**(उठते-उठते)** जहाँ मन्दिर हो वहाँ मस्जिद नहीं ।

कुछ हिन्दू––**(एक साथ उठते हुए)** ठीक ! ठीक ! न देखेंगे। न भौंकेंगे ।

महफ़ूजख़ाँ—परन्तु. . . .परन्तु. . . .परन्तु. . . .भाइयो !. . . . सुनो. . . .सुनो तो. . . .

[कोई नहीं सुनता । सब हिन्दू भी जाते हैं । मशाल वाले का भी प्रस्थान । परन्तु चन्द्रमा के उदय होने के कारण काफ़ी प्रकाश फैल गया है । अमरनाथ अपने साथी के साथ, तथा महफ़ूजख़ाँ रह जाते हैं । कुछ देर सन्नाटा ।]

अमरनाथ––**(महफ़ूजख़ाँ से)** आप कुछ पढ़े-लिखे आदमी जान पड़ते हैं ?

महफ़ूजख़ाँ—यों ही, थोड़ा बहुत ।

अमरनाथ—अंग्रेज़ी भी शायद जानते हैं ?

महफ़ूजख़ाँ—जी हाँ, बी० ए० तक पढ़ लिया था ।

अमरनाथ—अच्छा, तो शायद ग्राम-निवासियों की सेवा के लिए ही यहाँ रहने लगे हैं ?

महफ़ूजखाँ—जी हाँ, जब रहना शुरू किया तब तो कुछ ऐसे ही विचार थे, लेकिन अब देखता हूँ कि यहाँ के लोगों के साथ बिचारों की पटरी ही नहीं बैठती।

अमरनाथ—आपके समान पढ़े-लिखे आदमी यदि गाँवों में रहने लगें तब तो गाँव वालों को न जाने कितने फ़ायदे पहुँचने चाहिए।

महफ़ूजखाँ—पर यह लोग मुझे अधरमी समझते हैं, और भी न जाने क्या-क्या ? मन्दिर, मस्जिद और मज़हबी ढोंग धतूरों पर मेरा विश्वास भी नहीं है।

[कुछ देर निस्तब्धता।]

अमरनाथ—मैंने इन कुछ दिनों में कई शहरों और गाँवों में देखा कि नये-नये झगड़े उठे हुए हैं, शायद इस समय इसके लिए कोई संघटित शक्ति काम कर रही है।

महफ़ूजखाँ—**(विचारते हुए)** हो सकता है। **(फिर विचार में कुछ रुककर)** आप क्या इस सर्व-जन-मत के सम्बन्ध में दौरे पर निकले हैं ?

अमरनाथ—जी हाँ।

महफ़ूजखाँ—आपका शुभ नाम पूछ सकता हूँ ?

अमरनाथ—मुझे लोग अमरनाथ कहते हैं।

महफ़ूजखाँ—ओ ! मशहूर कांग्रेस नेता। **(कुछ रुककर)** यद्यपि आपकी और मेरी फ़िलासफ़ी में बहुत अन्तर है, आप गाँधीवादी हैं और मैं साम्यवादी, पर आपके इस काम में अगर मुझसे कोई सहायता मिल सके तो मैं हाजिर हूँ।

अमरनाथ—धन्यवाद। आप ज़रूर मेरे साथ चलें पर....पर माफ़ कीजिए अगर एक बात पूछूँ तो।

महफ़ूजखाँ—पूछिए, जो आप पूछना चाहते हैं अवश्य पूछिए।

अमरनाथ—आप अपने को साम्यवादी कहते हैं और आप हिन्दुस्तान

के टुकड़े होने के ख़िलाफ़ हैं ? यहाँ के साम्यवादी दल ने तो विभाजन का समर्थन किया है ।

महफ़ूजख़ाँ—मैं साम्यवादी होते हुए भी यहाँ के साम्यवादी दल का सदस्य नहीं हूँ । मार्क्स का अनुयायी मैं ज़रूर हूँ और इसीलिए अपने को साम्यवादी कहता हूँ, पर मार्क्स के अनुयायी होने का यह अर्थ मैं नहीं मानता कि आज हिन्दुस्तान के साम्यवादी जो कुछ कर रहे हैं उन सब बातों का मैं समर्थन करूँ । दृष्टान्त के लिए रूस के मित्र राष्ट्रों के साथ आते ही यहाँ के साम्यवादी दल ने इस लड़ाई को जो लोक-युद्ध कहना आरम्भ किया उसके मैं सख़्त खिलाफ़ था ।

अमरनाथ--(**हर्ष से**) बहुत अच्छा....बहुत अच्छा ।

महफ़ूजख़ाँ—इसी प्रकार रूस का दृष्टान्त देकर यहाँ के साम्यवादियों ने आत्मनिर्णय के सिद्धान्त पर मुस्लिमलीग की पाकिस्तान की माँग का जो समर्थन किया उसके भी मैं ख़िलाफ़ हूँ, क्योंकि रूस की और इस देश की परिस्थिति में महान अन्तर है ।

अमरनाथ—अच्छा ।

महफ़ूजख़ाँ—बेशक । क्योंकि रूस के अनुसार भारत को यह अधिकार क्षेत्रीय-निवास-ऐक्य के सिद्धान्त पर न दिया जाकर धार्मिक बिना पर दिया जाने वाला है । पाकिस्तान की माँग धर्म की नींव पर होने से समयानुसार नहीं । फिर रूस में यह अधिकार तीन कारणों से दिया जा सका ।

अमरनाथ—किन तीन कारणों से ?

महफ़ूजख़ाँ—पहला यह कि पृथक्करण की वहाँ भावना ही नहीं है । इस भावना को देश-द्रोही और क्रान्ति-विरोधक भावना मानकर सदा कुचलने की कोशिश की गयी है । दूसरा यह कि हर प्रजातन्त्र आर्थिक दृष्टि से साम्यवादी है और दो साम्यवादी प्रजातन्त्र एक दूसरे से कभी अलग नहीं होना चाहते । और तीसरा यह कि केवल एक साम्यवादी

दल ही वहाँ के चुनाव आदि में उम्मीदवार खड़े कर सकता है, दूसरे दलों का वहाँ कोई राजनैतिक अस्तित्व नहीं।

अमरनाथ—(विचारते हुए) हाँ, यह तो है।

महफ़ूज़खाँ—मेरी समझ में नहीं आता कि आर्थिक दृष्टि से यह विभाजन देश को हानि पहुँचाता है यह जानते हुए भी साम्यवादी इसका समर्थन कैसे कर रहे हैं ? और जहाँ तक आत्मनिर्णय का सम्बन्ध है वहाँ तक पहले भारतवर्ष साम्यवादी हो जाय तब यहाँ रूस के सदृश आत्मनिर्णय का अधिकार दिया जा सकता है।

अमरनाथ—और भारत कदाचित् कभी साम्यवादी हो न सकेगा।

महफ़ूज़खाँ—यह तो मैं नहीं मानता। फिर जब तक भारत साम्यवादी नहीं हो जायगा तब तक यहाँ की समस्याएँ हल होने वाली नहीं। इस समय की भारत की ही नहीं सारे संसार की समस्त समस्याएँ जातीयता की वजह से हैं। जातीयता के नारे का कारण है पूँजीवाद। शोषण, युद्ध, सारे झगड़े की जड़ है जातीयता। सच्चे साम्यवादियों का न कोई राष्ट्र है और न देश। समस्त संसार के श्रमजीवी उनके भाई हैं और सारा संसार उनका देश। जातीयता और उससे उत्पन्न तमाम मसलों का हल है साम्यवाद। भारत में भी ज्योंही साम्यवाद क़ायम हुआ त्योंही यहाँ की भी सब समस्याएँ हल हो जायँगी। हिन्दू और मुसलमानों का आर्थिक सवाल एक दूसरे से भिन्न नहीं और आर्थिक प्रश्न ही प्रधान चीज़ है।

अमरनाथ—(मुस्कराकर) माफ़ कीजिए यदि एक बात कहूँ।

महफ़ूज़खाँ—ज़रूर. . . .ज़रूर कहिए।

अमरनाथ—आपने अभी कहा था कि यहाँ के लोगों के साथ आपके विचारों की पटरी नहीं बैठती, उसका मुख्य कारण आपकी फ़िलासफ़ी ही है।

महफ़ूजख़ाँ—मानता हूँ, यहाँ सब के सब पैटी बूर्ज्वा फ़िलासफ़ी से अन्धे जो हैं।

अमरनाथ—पर आपके मानिन्द पढ़े-लिखे और सेवा के लिए त्याग-कर गाँवों में आकर रहने वाले सज्जन को तो अपने को इस तरह का बनाना चाहिए कि आपके मुल्क के लोग आपसे सच्चा फ़ायदा उठा सकें।

महफ़ूजख़ाँ—पैटी बूर्ज्वा फ़िलासफ़ी के निहित हितों का नाश होने पर इस देश के लोगों के फ़ायदे मुनस्सर हैं।

अमरनाथ—निहित हितों के नाश से, आपका ख़्याल है कि हिन्दू-मुसलमानों के तथा दूसरे सारे सवाल हल हो जायँगे ?

महफ़ूजख़ाँ—इसमें मुझे थोड़ा-सा भी सन्देह नहीं है।

अमरनाथ—ख़ैर, चलिए, अब हम लोग साथ-साथ रहेंगे ही; साथ रहने से शायद एक दूसरे को अधिक समझ सकेंगे। **(कुछ रुककर)** अब ज़रा अपना नाम भी बताने की कृपा कीजिए।

महफ़ूजख़ाँ—मुझे लोग महफ़ूजख़ाँ कहते हैं।

अमरनाथ—**(आश्चर्य से)** आप मुसलमान हैं ?

महफ़ूजख़ाँ—**(मुस्कराकर)** मेरा मुसलमान होना कोई आश्चर्य की बात मालूम होती है ?

अमरनाथ—**(विचारते हुए)** नहीं....आश्चर्य....आश्चर्य की तो नहीं, लेकिन....लेकिन....

महफ़ूजख़ाँ—**(बीच ही में)** जी नहीं, आश्चर्य की मालूम होती होगी। यह सुनकर कि मैं मुसलमान हूँ, आपके चेहरे पर आश्चर्य के चिह्न देख रहा हूँ; ऐसे ही एक दिन मैंने एक मुस्लिम लीग वाले के मुख पर देखे थे।

अमरनाथ—**(और भी गम्भीरता से विचारते हुए)** ऐसा ?.... तो....तो फिर दोनों को आश्चर्य होते भी आश्चर्य के परिणामों में फ़र्क़ होगा।

महफ़ूजख़ाँ—कैसा ?

अमरनाथ—उन्हें आश्चर्य के साथ दुख हुआ होगा और मुझे आश्चर्य के साथ सुख....महान सुख हुआ है। महफ़ूज़ख़ाँ साहब, आप आदर्श मुसलमान हैं; वैसे....वैसे मुसलमान, जैसे मुसलमानों की हिन्दुस्तान को ज़रूरत है।

महफ़ूजख़ाँ—परन्तु....परन्तु मैं तो अपने को मुसलमान मानता ही नहीं, मैं तो इतना ही मानता हूँ कि मैं मुसलमान के यहाँ पैदा हुआ हूँ और मेरा नाम मुसलमानी नाम है।....अमरनाथ जी, मैं अपने को केवल इन्सान मानता हूँ।

अमरनाथ—ऐसा ही सही। यदि इस देश में सब ऐसे ही इन्सान हो जायँ.....

महफ़ूजख़ाँ—**(मुस्कराकर)** देश यदि साम्यवादी हो गया तो सब ऐसे ही इन्सान हो जायँगे।

अमरनाथ—बिना इसके नहीं ?

महफ़ूजख़ाँ—कदापि नहीं, अमरनाथ जी।

अमरनाथ—और देश को किस तरह का साम्यवादी होना चाहिए ?

महफ़ूजख़ाँ—**(कुछ आश्चर्य से अमरनाथ की तरफ़ देखते हुए)** किस तरह का साम्यवादी ? मैं समझा नहीं।

अमरनाथ—हाँ, रूस के सदृश, या जर्मनी के सदृश, क्योंकि वे भी तो अपने को नेशनल सोशलिस्ट या....

महफ़ूजख़ाँ—ओ ! समझा ! जिस तरह का साम्यवादी कार्ल मार्क्स दुनिया को बनाना चाहता था, वैसा साम्यवादी।

अमरनाथ—पर वैसा तो दुनिया का कोई देश नहीं बन सका। हिन्दोस्तान को किस तरह का साम्यवाद मुआफ़िक़ होगा यह सोचने की बात है। और जहाँ तक मूल सिद्धान्तों का सम्बन्ध है वहाँ तक तो खुद मार्क्स ने कहा था कि वही मार्क्ससिस्ट नहीं रह गया। ख़ैर, साथ रहने से

इस तरह के मामलों पर भी चर्चा हो सकेगी। **(कुछ रुककर)** आज.... आज मैं....कम से कम ऐसे साथी को पाकर कृतार्थ हो गया, यह तो निःसंकोच होकर कह सकता हूँ।

[अमरनाथ महफ़ूजख़ाँ को खींचकर हृदय से लगा लेता है।]

लघु यवनिका

पाँचवाँ दृश्य

स्थान—दिल्ली में जहाँनारा के बँगले का बरामदा

समय—तीसरा पहर

[दृश्य वही है, जो पहले अंक के दूसरे दृश्य में था। जहाँनारा खड़ी हुई अपने तोते से बात कर रही है।]

जहाँनारा—अच्छा....अच्छा तू गंगाराम ही रह, शुबराती न सही; और....और इतने पर भी मैं तो तुझे किसी ऐसे शख्स को नहीं दे सकती जिसके तू दस्तरख्वान के काम आये!....हरगिज़.... हरगिज़ नहीं, गंगाराम!

तोता—गंगाराम।

जहाँनारा—गंगाराम!....गंगाराम!....गंगाराम!.... और?....गंगाराम, तू शुबराती न हुआ और इतने पर भी मेरी मुहब्बत तुझ पर से कम न हुई। दुनिया में शायद दो ही ऐसे हैं, जो चाहे कैसे भी क्यों न हों....कैसे भी क्यों न रहें—मेरी मरजी के मुताबिक़, या ख़िलाफ़, उन पर मेरी मुहब्बत कम नहीं हो सकती, हरगिज़ नहीं.... हरगिज़ नहीं....हरगिज़ हरगिज़ नहीं—एक तू और दूसरा शान्तिप्रिय।

तोता—आवर लाइफ़ इज़ ए रैग्यूलर फ़ीस्ट।

जहाँनारा—हाँ, थी, गंगाराम, कभी थी; आवर लाइफ़ वाज़ ए रैग्यूलर फ़ीस्ट ! लेकिन अब....अब उसकी याद भर रह गयी है। कहाँ....कहाँ वह ज़िन्दगी !....आह ! शान्तिप्रिय के साथ की वह ज़िन्दगी !.....उसकी पैदाइश का दिन आज भी वैसा का वैसा याद आता है।....उसके बचपन के खेलों का नज़ारा आज भी वैसा का वैसा नज़र के सामने से घूम जाता है। दिल्ली आने के बाद के उसके साथ के दिन भूलने की कोशिश करने पर भी नहीं भूले जाते !.... आज भी यहीं है वह और यहीं हूँ मैं !....लेकिन कहाँ है वह और कहाँ हूँ मैं ! **(कुछ रुककर)** पर....पर वह है हिन्दू और मैं हूँ मुसलमान ....दो अलग-अलग क़ौमों के, जो क़ौमें राइल-आम के फ़ैसले से हमेशा के लिए अलग-अलग हो गयी हैं, जिनके मुल्क भी बँट गये हैं, जिनके फ़ेडरेशन भी दो हो गये हैं और आज....आज मिस दुर्गा जिस तरह हिन्दोस्तान की प्रीमियर हुई हैं, और उनकी कैबीनिट में जिस तरह शान्तिप्रिय मिनिस्टर हुआ है, उसी....उसी तरह पीरबख़्श भी पाकिस्तान के वज़ीरे आज़म होकर आते ही होंगे और मैं....मैं भी हो जाऊँगी उनकी केबिनिट की मिनिस्टर।....हिन्दू के साथ हिन्दू हो गया....

तोता—चित्रकोट के घाट पै भई सन्तन की भीर।
तुलसिदास चन्दन घिसैं तिलक देत रघुबीर।

जहाँनारा—ठीक है....लखनऊ में मिस दुर्गा के बँगले पर अब हिन्दुओं की इसी तरह भीड़ हुआ करेगी। शान्तिप्रिय चन्दन घिसैंगे और तिलक करेंगी मिस दुर्गा। **(कुछ रुककर)** और....और लाहौर में, गंगाराम ?

तोता—गंगाराम।

जहाँनारा—हाँ, हाँ, गंगाराम।....शुबराती नहीं, गंगाराम। लाहौर में....लाहौर में पीरबख़्श के बँगले पर मुसलमानों की भीड़ हुआ करेगी। **(कुछ रुककर)** पर....पर वहाँ चन्दन और तिलक

कहाँ ? **(फिर कुछ रुककर)** लेकिन इससे क्या ?....चन्दन तिलक न सही, हम तरह-तरह के गुलाबों को एक ज़मीन पर इकट्ठा करेंगे। उनमें जो बहार आएगी, उस....उस बहार का नज़ारा....हाँ,....हाँ, और....और वह नज़ारा उनके लिए जो उन्हें इकट्ठा कर रहे हैं,.... कैसा....कैसा ख़ुशनुमा होगा ?....उस....उस वक़्त मुझसे और पीरबख़्श से ज़्यादा ख़ुशक़िस्मत कौन होगा ? **(कुछ रुककर)** फिर ज़ाती तौर पर भी कितना....कितना चाहते हैं मुझे पीरबख़्श ! ....घुमा-फिराकर इस मामले में कुछ न कुछ कहते ही जो रहते हैं। ....लेकिन मेरे....मेरे दिल में उनके लिए वैसे ख़्याल ही नहीं उठते, कोशिश,....हाँ, कोशिश करने पर भी नहीं।

तोता—आवर लाइफ़ इज़ ए रैग्यूलर फ़ीस्ट।

जहाँनारा—कहाँ....कहाँ होने पाती है लाइफ़ फ़ीस्ट, गंगाराम ?

तोता—गंगाराम।

जहाँनारा—मुमकिन है शान्तिप्रिय और दुर्गा की लाइफ़ रैग्युलर फ़ीस्ट हो गयी हो।

[पीरबख़्श का प्रवेश। जहाँनारा पीरबख़्श को देख, पीरबख़्श की ओर बढ़ती है।]

जहाँनारा—**(मुस्कराते हुए)** प्रीमियर होने पर मुबारिकबाद देती हूँ।

पीरबख़्श—**(मुस्कराते हुए)** और मैं आपको मिनिस्टर होने पर। **(कुछ रुककर गम्भीर हो)** और....और इस मुबारिकबाद के साथ ही **(फिर कुछ रुकते हुए)** हाँ, साथ ही मुझको ख़ुदा ने जितनी ताक़त और क़ूबत दी है, उस सब को इकट्ठा कर आज....आज एक बात आपसे और...और भी कहता हूँ **(फिर कुछ रुकते हुए)** कहता....कहता क्या देता....देता हूँ, मैं अपने आपको भी, आपको देता हूँ। **(घुटने टेक देता है।)**

[जहाँनारा हक्की-बक्की-सी रह जाती है। उसके मुँह से कुछ नहीं निकलता और दृष्टि जमीन में गड़-सी जाती है। पीरबख़्श अत्यन्त आतुरता से जहाँनारा की तरफ़ देखता है। कुछ देर एक विचित्र प्रकार का सन्नाटा।]

तोता—आवर लाइफ़ इज़ ए रैग्युलर फ़ीस्ट।

जहाँनारा—(**चौंककर तोते की तरफ़ देख, फिर पीरबख़्श की ओर देखते हुए, भर्राये हुए स्वर में**) अच्छा, उठिए, उठिए तो आप।

पीरबख़्श—(**एकटक जहाँनारा की तरफ़ देखते हुए**) जब तक यह नज़र मंज़ूर न हो जायगी, मैं उठने वाला नहीं हूँ।

जहाँनारा—(**बग़लें झाँकते हुए कुछ रुककर, और भी भर्राये हुए स्वर में**) मैं आपसे दस्तबस्ता अर्ज़ करती हूँ कि आप ठीक तरह से खड़े तो हो जायँ, या बैठ जायँ, (**जल्दी-जल्दी**) कोई अगर आ गया तो पाकिस्तान के पहले प्रीमियर की यह हालत देखकर क्या कहेगा ?

पीरबख़्श—(**उसी तरह जहाँनारा को देखते हुए**) इस तरह की बेशुमार वज़ारतों को मैं आपके क़दमों पर क़ुर्बान करता हूँ। मैं तय करके आया हूँ कि आज जब तक आप इस नज़र को क़ुबूल न कर लेंगी, मैं उठने वाला नहीं हूँ।

जहाँनारा—(**कुछ रुककर, अत्यन्त भर्राये हुए स्वर में, जल्दी-जल्दी**) लेकिन....लेकिन, मिस्टर पीरबख़्श, इस नज़र को वही क़ुबूल कर सकता है, जो ख़ुद भी इस तरह की नज़र करने की हालत में हो।

पीरबख़्श—ऐसा ? (**दृष्टि नीचे झुक जाती है। कुछ रुककर, उठते हुए**) तो....तो आप पहले ही अपने को किसी की नज़र कर चुकी हैं। (**फिर कुछ रुककर**) मैं जान भी गया कि वह कौन है। (**फिर कुछ रुककर**) क्यों, मिस जहाँनारा, वह शान्तीप्रिये ही है न ?

जहाँनारा—(**अत्यन्त आश्चर्य से**) क्या....क्या फ़रमा रहे हैं आप !

पीरबख्श—मैं जो कुछ कह रहा हूँ, वह बिल्कुल सच है।

तोता—चित्रकोट के घाट पै भई सन्तन की भीर।

तुलसिदास चन्दन घिसैं तिलक देत रघुबीर।

पीरबख्श—**(तोते की ओर देखकर, जहाँनारा की तरफ़ देखते हुए)** उसे आपने बुत बनाकर चन्दन घिसना तय ही कर लिया था, लेकिन इसी बीच यह मज़हबी और सियासी मामलात आ गये, बात रुक गयी; पर.... पर अभी भी आप उससे मुहब्बत करती हैं; ज़रूर....ज़रूर-ज़रूर करती हैं। यह....यह तोता इसका सुबूत है।

जहाँनारा—**(उसी प्रकार आश्चर्य से)** न जाने क्या....क्या आप सोच रहे हैं? पीरबख्श साहब, शान्तिप्रिय की और मेरी भाई-बहन की मुहब्बत थी।....आज भी शायद मैं उसे चाहती होऊँ, लेकिन ....लेकिन जिस तरह आप सोच रहे हैं, उस तरह नहीं,....हरगिज़ ....हरगिज़....हरगिज़ नहीं।....और....फिर ज़रा उसकी और मेरी उम्र की तरफ़ भी तो देखिए; मैं उम्र में उससे कितनी बड़ी हूँ।

पीरबख्श—इससे....इससे क्या, मिस जहाँनारा, उम्र का इतना-सा फ़र्क़ ऐसी मुहब्बतों के रास्ते में नहीं आता। **(कुछ रुककर घृणा से मुस्करा कर)** भाई-बहन की मुहब्बत!....इन्सान सिर्फ़ दूसरों को ही नहीं, अपने आपको भी इसी तरह धोखा देने की कोशिश किया करता है! **(कुछ रुककर, लम्बी साँस ले)** उफ़!....एक काफ़िर से किसी मुसलमान की....और वह भी मुस्लिम-औरत की....आपके मानिन्द औरत की इस तरह की मुहब्बत!....क्या....क्या कहूँ!

[जहाँनारा का सिर झुक जाता है, पर उसके मुख से कुछ नहीं निकलता। पीरबख्श चुपचाप इधर-उधर घूमते हुए कनखियों से जहाँनारा की ओर देखता है।]

तोता—गंगाराम! गंगाराम!

यवनिका

तीसरा अंक

पहला दृश्य

स्थान—लाहौर में एक छोटा-सा हॉल

समय—सन्ध्या

[हॉल की दीवारें सफ़ेद क़लई से पुती हैं; न उन पर कोई रंग है और न तस्वीरें, शीशे आदि। सीलिंग सागौन की पटियों से पटी हैं। सीलिंग और दरवाजे व खिड़कियों पर वार्निश है। जमीन सीमेंट की है और उस पर बीचोंबीच एक बड़ी-सी गोल लकड़ी की टेबिल रखी है। टेबिल के चारों तरफ़ लकड़ी की कुर्सियाँ हैं। दीवारों के नजदीक कुछ बेंचें पड़ी हैं। इन कुर्सियों और बेंचों पर अनेक हिन्दू और सिक्ख बैठे हुए हैं। वेष-भूषा से सब पंजाबी दिखते हैं।]

एक हिन्दू—हाँ, हाँ, एक मुसीबत हो तो कही जाय ?

एक सिक्ख—अब तो इन मुसीबतों की गिनती ही ग़ैर-मुमकिन-सी होती जाती है।

दूसरा हिन्दू—रोज़-रोज़ यह आफ़तें बढ़ती ही जा रही हैं।

दूसरा सिक्ख—कुछ ही दिनों की बात है, मेरा नाम ही ठेकेदारों की सरकारी लिस्ट में से काट दिया गया।

तीसरा सिक्ख—और मेरा भी। अरे ! मेरे वालिद ने यही काम किया, उनके वालिद ने यही और उनके वालिद ने भी यही।

तीसरा हिन्दू—और कुछ ही दिन हुए मेरे लड़के की नौकरी की दर्ख्वास्त नामंजूर कर दी गयी। उसने एम० ए० सैकिन्ड क्लास में

पास किया था और एक मुसलमान ने थर्ड क्लास में। मुसलमान को नौकरी मिल गयी और उसकी दरख़्वास्त ख़ारिज।

चौथा हिन्दू—नौकरियों में मुस्लिम आबादी के मुताबिक़ क़रीब पचपन फ़ीसदी नौकरियाँ तो मुसलमानों के लिए रिज़र्व हैं, और इस तरह की जो बेइन्साफ़ियाँ होती हैं, यह अलग।

पाँचवाँ हिन्दू—मेरे दो लड़कों के लिए सकूल में जगह नहीं मिली।

चौथा सिक्ख—सो तो मेरे लड़के का भी हुआ।

पाँचवाँ सिक्ख—नौकरियों के मानिन्द सकूलों और कॉलेजों में भी मुस्लिम आबादी के हिसाब से क़रीब पचपन फ़ीसदी जगह मुसलमान लड़कों के लिए रिज़र्व हैं न, भाई।

पाँचवाँ हिन्दू—हाँ, चाहे ख़ाली ही क्यों न पड़ी रहें।

छठवाँ हिन्दू—और मैं तो एक मुक़द्दमा इसीलिए हार गया कि मुक़द्दमा मुसलमान के साथ चल रहा था।

छठवाँ सिक्ख—अरे! यह तो पंजाब में हर जगह रोज़मर्रा की बात है। मुसलमानों के ख़िलाफ़ कोई हिन्दू या सिक्ख पंजाब में जीत सकता है।

सातवाँ हिन्दू—और देहातों की बात जानते हो? वहाँ तो नादिर-शाही मची है, नादिरशाही।

आठवाँ हिन्दू—हाँ, हिन्दुओं की औरतें भगायी जा रही हैं। बच्चे उड़ाये लिये जा रहे हैं। हिन्दू मुसलमान बनाये जा रहे हैं। तब-लीग़ और तन्ज़ीम का ख़ूब दौरदौरा है। और हिन्दू-मुसलमानों के बीच अगर कोई मारपीट हो जाती है, और हिन्दू अगर पुलिस में रिपोर्ट लिखाने जाते हैं तो भी कोई सुनायी नहीं।

पाँचवाँ हिन्दू—और इसके ख़िलाफ़ मुसलमानों की झूठी-झूठी रिपोर्टों पर भी हिन्दुओं को कितना दिक़ किया जाता है।

छठवाँ सिक्ख—सिक्खों को भी कितना!

सातवाँ हिन्दू—हाँ, हाँ, और भी न जाने क्या-क्या हो रहा है?

नवाँ हिन्दू—अरे ! भाई, मेरी दूकानें तो पेशावर, कलकत्ता और करांची में भी हैं। फ्रन्टियर, बंगाल, सिन्ध, सब जगह यहीं अन्धेर मचा हुआ है। हमारे रोजगार-धन्धों को बर्बाद करने के लिए तरह-तरह के रास्ते इख़्त्यार किये गये हैं। इनकम्‌टैक्स के मामलों में हमें इतना तंग किया जाता है, जिसका ठिकाना नहीं। शहरों के अच्छे मुहल्लों में हम अगर जायदाद ख़रीदना या बनवाना चाहें तो हक़शफ़ा वग़ैरह के न जाने कैसे नये-नये झगड़े उठाकर हमारे रास्ते में बेशुमार रोड़े अटकाये जाते हैं।

आठवाँ सिक्ख—यह नतीजा निकला मुल्क के तक़्सीम करने का।

नवाँ सिक्ख—पर मैं तो यह कहूँगा कि इस हालत के लिए हम उतने ही ज़िम्मेदार हैं, जितने मुसलमान।

आठवाँ सिक्ख—यह आपने ख़ूब फ़र्माया ! हम किस तरह ज़िम्मेदार हैं ?

नवाँ सिक्ख—इस तरह कि हम यह सब बर्दाश्त कर रहे हैं।

आठवाँ सिक्ख—हाँ, यह तो ठीक है।

नवाँ सिक्ख—हम इस सरकार के क़ानून ही न मानें, सत्याग्रह करें, सत्याग्रह पर जिनका यक़ीन न हो, वह दंगा-फ़साद, अभी अक्ल ठिकाने आ जाय सरकार की।

पहला हिन्दू—यह आप बिल्कुल ठीक फ़रमा रहे हैं।

नवाँ सिक्ख—अरे ! हम हिन्दू और सिक्ख मिलकर तो पंजाब में क़रीब पैंतालीस परसैन्ट हैं। यह मुसलमान जिन सूबों में पाँच-पाँच परसैन्ट थे, वहाँ भी इन्होंने दंगे किये हैं।

दूसरा सिक्ख—पर उस वक़्त और इस वक़्त की हालत में फ़र्क़ है।

तीसरा सिक्ख—क्या फ़र्क़ है, जनाब ?

दूसरा सिक्ख—यह फ़र्क़ है कि उस वक़्त सरकार बाहर की थी। उसकी एक तो इन दंगों में पोशीदा मदद रहती थी, दूसरे उसकी इस ख़्वाहिश

के सबब से कि दंगे हमेशा के लिए कभी भी ख़त्म न हों, दंगे में जो भी कमज़ोर पड़ता था उसे मदद देकर मज़बूत को थोड़ा ज़्यादा सताया जाता था। तराज़ू बराबर हो जाता था और दूसरे झगड़े के लिए ज़मीन तैयार हो जाती थी। अब अगर दंगे होंगे तो, हम कुचले तो जा ही रहे हैं, और बुरी तरह कुचल डाले जायँगे।

तीसरा सिक्ख—(**उत्तेजना से**) सिक्ख होकर क्या पस्तहिम्मतों की बातें करते हो। कुचल डाले जायँगे ! गुरु तेग़बहादुरसिंह, गुरु गोविन्दसिंह, हमारे दूसरे गुरुओं और बहादुरों ने भी कभी इस तरह सोचा था ?

दसवाँ हिन्दू—देखिए, अब तक मैं तो बोला नहीं, चुप रहा। आप लोगों को क्या इस सरकार से अब कोई भी उम्मीद नहीं रही ?

कुछ व्यक्ति—(**एक साथ**) मुतलक़ नहीं; मुतलक़ नहीं।

दसवाँ हिन्दू—लेकिन मैं अभी भी बिल्कुल नाउम्मीद नहीं हुआ हूँ। मेरा तो ख़याल है कि हम लोगों पर जो यह जुल्म हो रहे हैं, इसकी ज़िम्मेदारी पीरबख़्श साहब और उनकी कैबिनिट के मिनिस्टरों पर बहुत कम है।

कुछ व्यक्ति—(**एक साथ**) क्या ख़ूब ! क्या ख़ूब !

नवाँ सिक्ख—तब ज़िम्मेदारी किस पर है, जनाब ?

दसवाँ हिन्दू—ज़्यादातर छुट भइयों पर—नायब तहसीलदारों, तहसीलदारों, पुलिस हैड कान्सटेबलों, सब-इन्सपैक्टरों, म्यूनिस्पल और डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के प्रेसीडेन्टों, इन जमातों के अफ़सरों—इसी तरह के छोटे-छोटे आदमियों पर।

कुछ व्यक्ति—(**एक साथ**) ब्रे वो ! ब्रे वो !

नवाँ सिक्ख—अब तक दुनिया में सात ताज्जुब की चीज़ें सुनी थीं, यह आज आठवीं आपकी राय सुन रहा हूँ। ताज्जुब की बात यह है कि अभी भी हिन्दू या सिक्खों में ऐसे आदमी मौजूद हैं, जो इस कैबिनिट पर भरोसा

रखते हैं। **(सब लोगों की ओर देखकर)** क्यों, भाइयो ! और किसी को भी इस सरकार पर किसी तरह का भरोसा रह गया है ?

दसवें हिन्दू को छोड़कर शेष सब—(एक साथ) बिल्कुल नहीं, बिल्कुल नहीं।

दसवाँ हिन्दू—ख़ैर; मेरी तो अभी भी वही राय है और मैं समझता हूँ कि इस हॉल में न सही, लेकिन मुल्क में कई लोग मेरी राय के भी हैं। मेरी इस राय का सबब कुछ जाती तजुर्बा है। मैंने सुबूतों के साथ जब कभी भी किसी बेइन्साफ़ी का मामला किसी मिनिस्टर के सामने रखा है, उसकी फ़ौरन तहक़ीक़ात हुई है, इन्साफ़ हुआ है और बेइन्साफ़ी करने वाले को सजा दी गयी है।

नवाँ सिक्ख—ऐसे कितने मामले होंगे ?

दसवाँ हिन्दू—बहुत कम हैं, यह मैं मानता हूँ, क्योंकि इस सरकार के क़ायम होने के पहले से ही अकल्लीयतें इसके ख़िलाफ़ थीं। मिनिस्टरों पर भरोसा न रहने की वजह से उनके सामने सुबूत के साथ बहुत कम मामले पेश किये जाते हैं।

पाँचवाँ सिक्ख—पर मैं तो दूसरी ही बात कहता हूँ। सवाल ज़ाती मामलात का है ही नहीं, सवाल तो है सारे तरीक़े का; मसलन नौकरियों, सकूलों और कॉलेजों में मुसलमानों के लिए जगह रिज़र्व क्यों की गयी ?

दूसरा सिक्ख—और जहाँ इस तरह के रिज़र्वेशन नहीं भी हैं, जैसे सरकारी ठेके वग़ैरह, वहाँ से भी सिक्खों और हिन्दुओं को निकाल-निकालकर मुसलमान क्यों भरे जा रहे हैं ?

दसवाँ हिन्दू—आप लोग एक बहुत बड़ी ग़लती कर रहे हैं।

कुछ व्यक्ति—(एक साथ) कैसी....कैसी ?

दसवाँ हिन्दू—यह पाकिस्तान है; यह मानकर चलना चाहिए कि मुसलमानों का यहाँ ऊँचा हाथ रहेगा ही। हिन्दोस्तान में क्या हो रहा है ?

सवाल यह है कि यहाँ के हिन्दू और सिक्खों पर जान-बूझकर क्या कोई ज़ुल्म हो रहे हैं ?

पाँचवाँ हिन्दू—किसी एक जमात के ऊँचे हाथ रहने का मतलब ही दूसरी जमातों पर ज़ुल्म होना होता है।

नवाँ सिक्ख—इतना ही नहीं, साहब, जान-बूझकर ज़ुल्म किये जाते हैं।

सातवाँ हिन्दू—हाँ, हाँ, देहातियों की बातें मैंने बतायीं कि वहाँ क्या हो रहा है।

छठवाँ हिन्दू—और कचहरियों के इन्साफ़ की बात मैंने बतायी कि वहाँ क्या हो रहा है।

नवाँ हिन्दू—और मैंने तो आपको फ्रन्टियर, बंगाल, सिन्ध सब का हाल बताया; सब जगह यही हाल है।

सातवाँ हिन्दू—हाँ, हाँ, नादिरशाही, पूरी-पूरी नादिरशाही मची हुई है। और यह तमाम मिनिस्टर यह सब करा रहे हैं। लम्बी-लम्बी सपीचें देते हैं जैसे बड़े इन्साफ़ और इत्तफ़ाक़-पसन्द हों, लेकिन अन्दर-अन्दर अहलकारों से मिलकर यह तमाम बातें कर रहे हैं।

पहला हिन्दू—और हमारे जाती हालात ख़राब हुए हैं, इतना ही नहीं, हमारे मज़हब, हमारी तहज़ीब, हमारी ज़बान सब ख़तरे में हैं। मुसलमानों की मजिस्दों, उनकी हर तरह की मज़हबी चीज़ों को सरकार से मदद मिलती है, हमारे मन्दिरों, गुरुद्वारों को नहीं। जहाँ तक तहज़ीब का मामला है, हर वह बात, जिस पर हिन्दू या सिक्ख-असर पड़ा है, चुन-चुनकर अलाहदा की जा रही हैं। गुरुमुखी और हिन्दी का तो सरकारी कामों से पूरा-पूरा बॉयकॉटकर गला ही घोट दिया गया है।

नवाँ सिक्ख—सवाल यह है कि करना क्या ? एक तो यह हो सकता है कि हम पाकिस्तान को ही छोड़ दें; सो सिक्ख तो पंजाब छोड़ नहीं सकते।

कुछ सिक्ख—(एक साथ) कभी नहीं। कभी नहीं।

नवाँ सिक्ख—दूसरा यह है कि यहाँ कुछ कर दिखाना।

कुछ व्यक्ति—हाँ, यहीं कुछ कर दिखाना। यही....यही ठीक है।

पहला सिक्ख—हाँ, हम कमज़ोर थोड़े ही हैं।

दूसरा सिक्ख—अरे! अभी कल तक तो सिक्खों ने पंजाब पर हुकूमत की थी।

कुछ सिक्ख—(एक साथ) बेशक! बेशक!

पहला हिन्दू—सबसे पहले हमें हिन्दू और सिक्खों की एक मिली हुई जमात बनानी चाहिए।

कुछ व्यक्ति—(एक साथ) बिल्कुल ठीक। बिल्कुल ठीक।

पहला हिन्दू—फिर वह जमात इन ज़ुल्मों की जाँच करे।

कुछ व्यक्ति—(एक साथ) ठीक।

पहला हिन्दू—और जाँच के बाद जो ज़्यादतियाँ पायी जायँ उस पर सत्याग्रह किया जाय।

पहला सिक्ख—शिरोमणि-गुरुद्वारा-प्रबन्धक कमिटी तो कई सत्याग्रहों में कामयाबी हासिल कर चुकी है।

कुछ व्यक्ति—(एक साथ) बेशक! बेशक!

दूसरा सिक्ख—लेकिन अकेले सत्याग्रह से ही काम न चलेगा। जिन्हें तशद्दुद पर ही यक़ीन हो उनको भी इकट्ठा करना चाहिए, जिससे अगर एक तरफ़ सत्याग्रह हो तो दूसरी तरफ़ गरिल्ला जंग।

कुछ व्यक्ति—(एक साथ) हाँ, हाँ, यह—यह बिल्कुल ठीक है।

नवाँ सिक्ख—जिस तरह भी हो हमें इस गवर्नमेन्ट को मफ़लूज कर देना है।

सातवाँ हिन्दू—हाँ, जी पैंतालीस फ़ीसदी सिक्ख और हिन्दू मिलकर क्या नहीं कर सकते।

आठवाँ हिन्दू—(नवें हिन्दू से) और आप तो बहुत बड़े आदमी हैं। फ्रन्टियर, बंगाल, सिन्ध सब जगह आपका कारबार है। आपको यह कोशिश करनी चाहिए कि इन सूबों में भी इसी तरह का नज़्म हो; और हमारा काम शुरू हो सब जगह एक साथ।

कुछ व्यक्ति—(एक साथ) यह....यह भी बहुत....बहुत ज़रूरी है।

नवाँ हिन्दू—हाँ, हाँ, इस काम को फ्रन्टियर, बंगाल, और सिन्ध में मैं शुरू ज़रूर करा सकता हूँ।

दूसरा सिक्ख—शुरू होने के बाद तो फिर आपसे आप चलता रहेगा।

दसवाँ हिन्दू—एक अर्ज़ मैं करूँ ?

पहला सिक्ख—यहाँ सभी को बोलने का पूरा-पूरा हक़ है।

दसवाँ हिन्दू—सब से पहले तो मैं यह कह देता हूँ कि मैं हिन्दू और सिक्खों की मिली हुई जमात के हक़ में हूँ।

कुछ व्यक्ति—(एक साथ) शुक्रिया ! शुक्रिया !

दसवाँ हिन्दू—ज़्यादतियों की जाँच की जाय, इसके भी मैं ख़िलाफ़ नहीं।

कुछ व्यक्ति—(एक साथ) दुहरा शुक्रिया ! दुहरा शुक्रिया !

दसवाँ हिन्दू—लेकिन किसी भी तरह की लड़ाई-भिड़ाई के पहले मैं यह ज़रूर चाहूँगा कि जाँच में अगर कोई ज़्यादतियाँ सुबूत हों तो उन्हें हम एक दफ़ा पीरबख़्श की सरकार के सामने पेशकर उन्हीं से उन्हें दुरुस्त कराने की कोशिश करें।

नवाँ सिक्ख—आपको यह उम्मीद है कि मिनिस्टर कुछ करेंगे ?

दसवाँ हिन्दू—उम्मीद ही नहीं, मुझे तो यक़ीन है।

[सब लोग एक दूसरे की तरफ़ देखते हैं। कुछ देर निस्तब्धता।]

नवाँ सिक्ख—(सब से) क्यों, भाइयो ! आप लोगों को कोई उम्मीद है ?

दसवें हिन्दू को छोड़कर सब—(एक साथ) किसी को नहीं। किसी को नहीं !

दसवाँ हिन्दू—देखिए, मैं आप लोगों से कुछ अलग नहीं हूँ। जो आप सब करेंगे, मैं उसमें पूरा-पूरा साथ दूँगा, लेकिन हर्ज क्या है कि एक दफ़ा सरकार से बातकर तब हम अपनी लड़ाई शुरू करें। सत्याग्रह का तो यह तरीक़ा ही है।

[सब लोग फिर एक दूसरे की ओर देखते हैं। फिर कुछ देर सन्नाटा।]

दसवाँ हिन्दू—(कुछ देर तक बारी-बारी से सब की तरफ़ देखने के बाद) अच्छा, देखिए, मैं एक तजवीज़ पेश करता हूँ। हिन्दू, सिक्ख जमात की जाँच के बाद हम मशहूर नैशनल लीडर अमरनाथ साहब को बुलवावें, उनके सामने कुल मामला रख दें और जैसी वह राय दें, वैसी कार्रवाई करें।

बहुत से व्यक्ति—(एक साथ) हाँ, हाँ, यह....यह ठीक है।

दसवाँ हिन्दू—(प्रसन्नता से) मैं अज़हद शुक्रगुज़ार हूँ।

[कुछ देर निस्तब्धता।]

पहला हिन्दू—पंजाब की क़रीब-क़रीब सभी ख़ास-ख़ास जगह के साहबान आज के इस जलसे में तशरीफ़ लाये हैं। हमने देख लिया कि हम सब एक ही नाव पर सवार हैं। नाव डूब रही है, पर इसे बचाने के लिए हम मुनासिब नतीजों पर पहुँचे हैं। अमरनाथ साहब को बुलवाने की तजवीज़ भी बहुत ही मुनासिब बात हुई है। हमारी कामयाबी और हमारे काम हमारी जमात पर मुनस्सर हैं, लेकिन हमारा नज़्म जब तक पक्का नहीं हो जाता, तब तक आज की बातों का पोशीदा रहना निहायत ज़रूरी है, नहीं तो हमारा काम एक क़दम भी आगे न बढ़ सकेगा।

कुछ व्यक्ति—(एक साथ) बेशक ! बेशक ! ...वजा....वजा फ़रमा रहे हैं आप।

लघु यवनिका

दूसरा दृश्य

स्थान—लखनऊ के नज़दीक एक गाँव का बाहरी रास्ता

समय—प्रातःकाल

[दाहनी ओर दूर पर गोमती का प्रवाह दिखायी देता है और बाईं तरफ़ दूर पर गाँव के झोपड़े आदि; बीच में आम का देहाती बग़ीचा है। बाईं तरफ़ से कुछ हिन्दू-मुसलमान बालक-बालिकाओं का प्रवेश। सब बच्चे वेष-भूषा से संयुक्तप्रान्त के देहाती जान पड़ते हैं।]

एक हिन्दू बालक—(पीठ फेरकर गाँव की ओर देखते हुए) अब तो बहुत दूर आ गये न ?

एक मुसलमान बालक—(आम के दरख़्तों की तरफ़ देखकर) पेड़ों की आड़ भी रहेगी।

एक हिन्दू बालिका—(गाँव की ओर देखते हुए) हाँ, गाँव से कोई देखेगा तब तो हम दिखेंगे नहीं।

दूसरा हिन्दू बालक—मेरे बप्पा तो यहाँ तक आ ही नहीं सकते।

तीसरा हिन्दू बालक—बूढ़े हो गये हैं न। कैसे चलते हैं। **(कमर झुकाकर लाठी टेकने का उपक्रम करते हुए खाँसता-खाँसता घूमता है।)**

[सब बच्चे हँस पड़ते हैं। कोई-कोई ताली भी बजाते हैं।]

एक मुसलमान बालिका—और तेरी अम्मा भी इसी तरह चलती है। **(वह तीसरे हिन्दू बालक की नक़ल करती है।)**

[बच्चे और जोर-जोरसे हँसते हैं। इस बार कई तालियाँ बजाते हैं।]

दूसरा मुसलमान बालक—हमें आपस में खेलने से ये बूढ़े रोकते क्यों हैं ?

तीसरा मुसलमान बालक—क्योंकि हम मुसलमान हैं और **(हिन्दू बालकों की तरफ़ इशाराकर)** यह हिन्दू।

दूसरी मुसलमान बालिका—पहले तो नहीं रोकते थे।

तीसरा मुसलमान बालक—(**गम्भीरता से विचारते हुए**) हाँ, पहले तो नहीं रोकते थे।

दूसरी हिन्दू बालिका—पहले हम हिन्दू-मुसलमान नहीं रहे होंगे।

तीसरा मुसलमान बालक—और अब हिन्दू-मुसलमान हो गये ? वाह ! वाह ! अरे ! हिन्दू-मुसलमान पैदा होते ही होते हैं।

दूसरी मुसलमान बालिका—और अम्मा कहती थीं, मरने तक रहते हैं।

पहला हिन्दू बालक—मरना क्या होता है ?

दूसरी मुसलमान बालिका—मरना ?.... (**जल्दी से ज़मीन पर सीधी लेटकर आँखें बन्द कर लेती है।**)

[**सब बच्चे फिर हँस पड़ते हैं।**]

तीसरा हिन्दू बालक—लो भाई ! फ़ातमा बीबी मर गयीं, उठाओ इन्हें, और बोलो—'राम नाम सत्य है।'

दूसरी मुसलमान बालिका—(**जल्दी से उठकर**) बस, यही तो हिन्दूपन है, हर बात में राम नाम !

तीसरा हिन्दू बालक—तुम लोग हर बात में 'अल्ला-अल्ला' नहीं कहते ?

चौथा हिन्दू बालक—अरे छोड़ो ये सब बातें। हमें न राम दिखता है न अल्ला। इन दोनों में फ़र्क़ होगा। हमें दिखते हैं—रामप्रसाद अल्लाबख़्श, रामदेई, फ़ातिमा। इन सब में कोई फ़र्क़ नहीं दिखता। (**कुछ रुककर**) अब खेल कौन-सा खेलना है, यह कहो।

चौथा मुसलमान बालक—खेल ? (**विचारता है**)

चौथा हिन्दू बालक—(**विचारते हुए**) देखो, कचहरी का खेल खेलो, कचहरी का।

कुछ बच्चे—(**एक साथ**) यह ठीक है।....यह ठीक है।

पाँचवाँ हिन्दू बालक—देखो, सबसे बड़ा हूँ मैं, इसलिए मजिस्टर मैं बनता हूँ।

तीसरा हिन्दू बालक—**(कूदते हुए)** और ऊँचा पूरा सबसे मैं जादा हूँ, इसलिए पुलिस वाला मैं बनूंगा।

चौथा हिन्दू बालक—मैं तो गवाह बनूंगा, गवाह।

पहला मुसलमान बालक—मुलजिम कौन बनेगा, यह तो बताओ।

[सब चुप रहते हैं। कुछ देर सन्नाटा।]

पहला मुसलमान बालक—हूँ! मुलजिम बनने को कोई तैयार नहीं। **(कुछ रुककर)** अच्छी बात है, मुलजिम मैं सही। खेल तो हो।

तीसरा मुसलमान बालक—आजकल मुसलमान ही मुल्जिम होते भी हैं।

चौथा हिन्दू बालक—क्यों, हिन्दू मुल्जिम नहीं होते?

तीसरा मुसलमान बालक—मैं जब-जब अब्बा के साथ कचहरी जाता हूँ, मुझे तो मुल्जिम मुसलमान ही दिखते हैं।

चौथा हिन्दू बालक—तू तो हमेशा हिन्दू-मुसलमान की ही बात करता है। **(कुछ रुककर)** अच्छा, छोड़ो यह हिन्दू-मुसलमान की बात। खेल शुरू करो।

[पाँचवाँ हिन्दू बालक एक दरख़्त की ऊँची जड़ों पर अकड़कर बैठता है। तीसरा हिन्दू बालक पहले मुसलमान बालक का हाथ पकड़कर पाँचवें के बाईं ओर खड़ा होता है चौथा हिन्दू बालक पाँचवें की दाहनी तरफ़। बाक़ी के बालक-बालिका कुछ दाहनी ओर कुछ बाईं ओर इनसे कुछ दूर हटकर खड़े हो जाते हैं।]

पाँचवाँ हिन्दू बालक—**(ज़मीन को दाहने हाथ से ठोंकते हुए)** माल मसरूका हमारा मेज पर आना चाइए।

तीसरा हिन्दू बालक—हजूर, चोरी का माल मेज पर नहीं आ सकता।

पाँचवाँ हिन्दू बालक—टुम हुकम टालटा! क्यों नेई आ सकटा।

तीसरा हिन्दू बालक—हजूर वह गाय है।

पाँचवाँ हिन्दू बालक—गा, गा, क्या करटा? माल मसरूका हमारा मेज पर आना चाइए।

तीसरा हिन्दू बालक—हजूर, गाय मेज पर कैसे आ सकती है ?

पाँचवाँ हिन्दू बालक—नेई कैसा आ सकटा ? माल मसरूका हमारा मेज पर आना चाइए।

तीसरा हिन्दू बालक—तो आप बाहर चलकर खुद ही उस माल को देख लीजिए और देखिए कि वह मेज़ पर आ सकता है या नहीं।

पाँचवाँ हिन्दू बालक—आच्चा, आच्चा, चलो, चलो।

[तीसरा हिन्दू बालक आगे और पाँचवाँ उसके पीछे थोड़ी दूर आगे बढ़ते हैं। एक बालिका हाथ और घुटने टेककर ज़मीन पर बैठ जाती है।]

पाँचवाँ हिन्दू बालक—**(बालिका को देखकर)** ओ ! टुम ! . . . गाय-गाय क्या करटा ठा; यूँ क्यू नेई कहा कि बैल का मैम साब चोरी गया है। **(फिर अपने स्थान पर बैठते हुए)** और बैल का मैम साब का चोरी **(पहले मुसलमान की तरफ़ इशाराकर)** इस मुसलमान ने किया ?

तीसरा हिन्दू बालक—जी हजूर, और यह चोरी की इस गाय की कुर्बानी के लिए।

पाँचवाँ हिन्दू बालक—समजा. . . .समजा, मुसलमान और बैल का मैम साब का क्या कर सकटा ? कोई सतूब ?

तीसरा हिन्दू बालक—**(चौथे हिन्दू बालक की ओर इशाराकर)** यह गवाह मजूद है, हजूर।

पाँचवाँ हिन्दू बालक—**(चौथे से)** टुमारा सामने इस मुसलमान ने बैल का मैम साब का चोरी किया ?

चौथा हिन्दू बालक—जी नहीं, झूठी बात है। इसने इस गाय को खरीदा था; और मारने के लिए नहीं, दूध के लिए।

तीसरा हिन्दू बालक—हजूर यह गवाह झूठ बोलता है।

पाँचवाँ हिन्दू बालक—ओ ! हम भूल गया, हमने इससे ये नेई केलाया कि ये ईमान से सच-सच बोलेगा। **(चौथे से)** केओ, ईमान से सच-सच बोलेगा।

चौथा हिन्दू बालक—ईमान से सच-सच बोलेंगे।

पाँचवाँ हिन्दू बालक—अब बटाओ, इस मुसलमान ने बैल का मैम साब का चोरी किया ठा या नेई और चोरी मारने का लिए किया ठा या डूढ का लिए ?

चौथा हिन्दू बालक—हजूर इसने गाय की चोरी नहीं की, उसे इसने खरीदा था और दूध के लिए, मारने के लिए नहीं।

पाँचवाँ हिन्दू बालक—पर ये हो नेई सकटा। इसने ज़रूर बैल का मैम साब का चोरी किया होगा और मारने का लिए।

तीसरा हिन्दू बालक—हाँ, हजूर, जरूर।

पाँचवाँ हिन्दू बालक—अच्चा, मारने का लिए चुराने पर बैल का मैम साब का चोर को फाँसी का सजा दिया जाता है और इस हिन्दू ने मुसलमान का पच्च किया इसलिए इसको बी फाँसी का सजा।

[नेपथ्य से कुछ लोगों की बातचीत की आवाज़ आती है। आवाज़ सुनकर पाँचवाँ हिन्दू बालक चकपकाकर खड़ा हो जाता है। और सब बालक भी चौकन्ने से होकर आवाज़ सुनने लगते हैं।]

पहली मुसलमान बालिका—(दूसरे हिन्दू बालक से)अरे! अब्बा ....अब्बा आ रहे हैं!

दूसरा हिन्दू बालक—हाँ, हाँ, आज तो तुम लोग इस गाँव को छोड़कर पंजाब जा रहे हो न ?

पहली मुसलमान बालिका—(आँखों में आँसू भरकर गिड़गिड़ाते हुए) मैं....मैं नहीं जाऊँगी, भइया, तुम सब को छोड़कर मैं कभी नहीं जाऊँगी। तभी....तभी तो यहाँ भाग कर आयी हूँ।

[आवाज़ निकट आती हुई जान पड़ती है।]

दूसरा मुसलमान बालक—मेरे....मेरे अब्बा की भी आवाज़ है। अब मेरे अब्बा मारेंगे मुझे तुम लोगों के साथ खेलने पर।

चौथा हिन्दू बालक—चलो, चलो, भाग चलो, दूर भाग चलो,.... इतनी दूर जहाँ पर ये खुर्राट पहुँच ही न सकें।

पहली मुसलमान बालिका—(दूसरे हिन्दू बालक के कन्धे को पकड़ते हुए) और देखो,....अगर....अगर मुझे अब्बा जबर्दस्ती ले जाने लगें तो तुम मुझे पकड़....पकड़ लेना, भइया, सुना,...जोर..... जोर से पकड़ लेना!

[सब बालक दाहनी ओर भाग जाते हैं। कुछ ही देर में बाईं तरफ़ से कई मुसलमानों का प्रवेश। वेष-भूषा से सब संयुक्तप्रान्त के देहाती जान पड़ते हैं।]

एक—मैं कहता हूँ अपने वतन, अपने बाप-दादों की मिलकियत छोड़कर इस तरह भागना बुजदिली है।

दूसरा—और यहाँ रहकर रोजमर्रा के नये-नये जुल्म बर्दाश्त करते जाना बहादुरी है?

तीसरा—अपने सब साथियों को छोड़कर जाने को क्या कहोगे?

दूसरा—मैं तो कहता हूँ, तुम सब भी चले चलो, पर तुम लोग मानते कहाँ हो?

चौथा भाई—वतन और पुश्तैनी जायदाद नहीं छूटती।

पाँचवाँ—और यहाँ के आपसी ताल्लुकात भी कैसे छोड़ दिये जायँ?

दूसरा—अफगानिस्तान, अरब वग़ैरह से भी तो हमारे बुजुर्ग वतन, जायदाद और आपसी ताल्लुकात ही छोड़कर आये थे।

पहला—कितनों के बुजुर्ग?

दूसरा—मेरे तो आये थे, दूसरों के मैं नहीं जानता।

पहला—जी हाँ, आपके खानदान का पुश्त-पर-पुश्त का लिखा हुआ शिजरा तो मौजूद ही होगा।

दूसरा—न सही, लेकिन मैं जानता हूँ कि मुझ में वहीं का खून है।

तीसरा—तभी शायद आप यहाँ से जा भी रहे हैं। पर मैं कहता हूँ संगी-साथियों को छोड़कर बिहिश्त में भी आराम नहीं मिलता। जाते तो हो, शायद वतन को भूल सको, शायद जायदाद भी नयी बना लो, लेकिन हमें न भूल सकोगे।

पाँचवाँ—नहीं, भाई, यह बड़े संगदिल हैं, सब को भूल जायँगे।

दूसरा—आप साथियों को न भूल सकूँगा, यह मानता हूँ, लेकिन यहाँ भी जो कुछ हो रहा है, वह बर्दाश्त के बाहर है। जमींदार हिन्दू, साहूकार हिन्दू, सरकार हिन्दुओं की। पटवारी हिन्दू, रेवन्यू निस्पेक्टर हिन्दू, पुलिस हिन्दू, मजिस्ट्रेट हिन्दू। जमींदार और साहूकार मुसलमान किसानों, मजदूरों पर कितना ही जुल्म करें, सब माफ। हिन्दू किसान की फसल सोलह आना आये तो भी पटवारी चार आना लिखने को तैयार और मुसलमान किसान की चार आना भी आये तो सोलह आना। हिन्दू साहूकार मुसलमान के नमाज पढ़ने का मुसल्ला भी कुड़क करा ले तो भी कोई सुनायी नहीं। दंगा-फसाद में मुसलमान पिट भी जाय और रपट लिखाने जाय तो उल्टा वही फँसे। कई हिन्दू, जिन्होंने मुसलमानों का खून किया, उन्हें भी हिन्दू मजिस्ट्रेटों ने छोड़ दिया और हिन्दू के सात क्या इक्कीस खून भी माफ हैं।

तीसरा—मुसलमानों पर बहुत जुल्म हो रहा है, इसमें तो शक नहीं, लेकिन....

दूसरा—**(बीच ही में)** और....और हम अपने मजहबी फर्ज तक पूरे-पूरे अदा नहीं कर सकते। गाय की कुर्बानी ही बन्द कर दी गयी है। मुसलमान न जाने किन-किन तरीकों से हिन्दू बनाये जा रहे हैं। और भी न जाने क्या-क्या हो रहा है।

पहला—एक बात कहूँ, माफ करना।

दूसरा—किसी बात कहने के लिए माफी माँगने की जरूरत है?

पहला—मुल्क के यह हिस्से किसने कराये?

दूसरा—हमने ।

पहला—और हमने कराये, बिना यह सोचे कि जो मुसलमान हिन्दू-राज में रहेंगे, उनका क्या होगा ?

दूसरा—अच्छा ।

पहला—एक बात और भी देखो—बंगाल, पंजाब, सिन्ध, सरहद्दी सूबा सब की खबरें तो आती ही हैं, वहाँ की सरकार हिन्दू और गैरमुस्लिम दूसरी क़ौमों के साथ कैसा बर्ताव कर रही है ।

दूसरा—तो अदला-बदला हो ही रहा है न ?

पहला—यह तो होगा ही ।

दूसरा—तो, भाई, मैं कहता हूँ, जितनी भी ताकत से एक दूसरे को कुचला जा सकता हो, दोनों कुचलें । मैं वहाँ जाकर रहना चाहता हूँ, जहाँ हिन्दू कुचले जा रहे हैं। **(चारों तरफ़ देखकर)** यहाँ....यहाँ भी नसीबा का पता नहीं । न जाने नसीब में यह कैसी लड़की लिखी थी, जब देखें तब उसी हिन्दू लौंडे मोहन के साथ खेलती है । **(साथियों से)** चलो, और जरा आगे चलकर देखें ।

[सब दाहनी तरफ़ जाते हैं ।]

लघु यवनिका

तीसरा दृश्य

स्थान—लाहौर का इस अंक के पहले दृश्य वाला हॉल

समय—सन्ध्या

[जो व्यक्ति उस दृश्य में थे, उनमें से अधिकांश; और उनके सिवा कुछ बंगाली, सिन्धी, सरहद्दी हिन्दू तथा अमरनाथ और महफ़ूजख़ाँ हैं ।

बातें चल रही हैं, अमरनाथ के हाथ में कुछ फ़ुलसकेप काग़ज़ हैं जो डोरे से नत्थी किये हुए हैं। इन काग़ज़ों में उर्दू अक्षरों में कुछ लिखा हुआ है।]

अमरनाथ—मेरा....मेरा आना नहीं, आना ख़ुसूसियत रखता है **(महफ़ूज़ख़ाँ की ओर इशाराकर)** इनका। मेरे साथ इनका पंजाब, फ़्रन्टियर, सिन्ध और बंगाल सब जगह घूमना, आपकी बतायी हुई बातों को निष्पक्षता....पूरी-पूरी निष्पक्षता से जाँचना....

महफ़ूज़ख़ाँ—**(बीच ही में)** जैसे आप में पक्षपात हो!

अमरनाथ—पर, भाई, फिर भी मैं हिन्दू हूँ। तुम चाहे अपने को मुसलमान न मानो, पर हो तो मुसलमान। मुसलमान होकर तुमने पाकिस्तान में ग़ैर-मुस्लिम क़ौमों पर सुनी जानेवाली ज़्यादतियों की जाँच की है। तुमने इतिहास बनाया है, महफ़ूज़, इतिहास।

एक सिक्ख—हम तो आप दोनों के ही अज़हद शुक्रगुज़ार हैं।

सब—**(एक साथ)** बेशक! बेशक!

अमरनाथ—**(मुस्कराकर)** परन्तु शुक्रिया अदा कर देने भर से काम न चलेगा। शिष्ट मण्डल का नेतृत्व तो मैं तभी करूँगा, जब आप सत्याग्रह की धमकी की बात **(हाथ के काग़ज़ों को दिलाते हुए)** इसमें से निकाल देंगे।

[कोई कुछ नहीं बोलता। सब लोग एक दूसरे की ओर देखने लगते हैं। कुछ देर निस्तब्धता।]

एक सिक्ख—आप लोगों ने हम पर जो मेहरबानी की है....

महफ़ूज़ख़ाँ—**(बीच ही में)** मेहरबानी की बात तो छोड़ दीजिए। हम लोगों ने अपना कर्त्तव्य पालन करने की कोशिश की है।

वही सिक्ख—यह सोचना आप लोगों की और भी बड़ी मेहरबानी है। ख़ैर, हम तो जो आप लोग हुक्म देंगे वही करेंगे, लेकिन हमारी गुज़ारिश यह है कि अगर सत्याग्रह की बात इस अर्ज़-दाश्त में से निकाल दी जाती है तो फिर इसमें रहता ही क्या है?

एक पंजाबी हिन्दू—हाँ, फिर रहता ही क्या है?

एक बंगाली—कुच्छ नेई, कुच्छ नेई।

एक सिन्धी—मिमोरिअल कमज़ोर....बहुत ही कमज़ोर हो जाता है।

एक सरहद्दी—एकदम कमज़ोर ! एकदम ही कमज़ोर !

बहुत से व्यक्ति—(एक साथ) बिल्कुल ! बिल्कुल !

अमरनाथ—परन्तु, भाइयो ! आप लोग ग़लती कर रहे हैं। पहली बात तो यह है कि यह अर्ज़ी है, चुनौती नहीं। दूसरे जो आप यह कहते हैं कि सत्याग्रह की बात निकाल देने पर, इसमें रहता ही क्या है, यह भी भूल है। इसमें वे सारी बातें तो रह ही जाती हैं न, जिनका पता आप लोगों ने इस जाँच में लगाया है।

वही सिक्ख—(मुस्कराकर) उनमें से भी तो बहुत-सी आपने निकलवा दीं।

वही बंगाली—भोतसा। भोतसा।

अमरनाथ—क्योंकि जब हम लोग आपके साथ घूमें, तब हमें मालूम हुआ कि आपकी जाँच की कई बातें तो ऐसी थीं जिनके प्रमाण ही नहीं और कई बातें बहुत बढ़ा-बढ़ाकर कही गयी थीं। दृष्टान्त के लिए सरहद्दी सूबे में एक हिन्दू को किसी मुस्लिम औरत के साथ देखकर वहाँ के किसी तहसीलदार ने अमेरिका के हबशी के समान लिंच कराया है, यह कहा गया था। वहाँ जाने पर पता लगा कि इस बात का कोई सिर-पैर ही न था। सिन्ध प्रान्त के किसी तालुक़े में हिन्दुओं से जज़िया टैक्स वसूल किया जाता है, यह लिखा गया था। पता लगाने पर मालूम हुआ कि यह बात भी बिल्कुल बेबुनियाद थी। बंगाल में एक जगह कुछ हिन्दू मूर्तियों के तोड़ने की बात थी। वह भी ग़लत साबित हुई। और यहाँ पंजाब में कुछ हिन्दुओं और सिक्खों के ख़ून करने पर भी मुसलमानों की पुलिस ने रिपोर्ट तक नहीं लिखी यह लिखा था, वह भी झूठ बात निकली। इसी प्रकार की कुछ दूसरी ग़लत बातों को भी निकाला गया है।

वही सिक्ख—लेकिन आपने जो-जो निकालने को कहा, हमने सब निकाल दिया, या नहीं ?

महफ़ूजख़ाँ—**(मुस्कराकर)** ग़लत बातों को भी हटाकर आपने हम लोगों पर मेहरबानी की, क्या आप यह कहना चाहते हैं ?

वही सिक्ख—**(जल्दी से)** नहीं, नहीं, मेरा यह मतलब नहीं था। मैं यह कहना चाहता था कि हम लोग तो हर तरह से आप लोगों के हुक्म की तामील करना चाहते हैं। लेकिन....लेकिन.... **(चुप हो जाता है।)**

अमरनाथ—मैं नहीं चाहता कि आप लोग हम लोगों के हुक्म की तामील करें। मैं तो यह चाहता हूँ कि आप स्वयं देखें और सोचें कि इस समय क्या लिखना और कहना उचित है। किसी भी हालत में सत्याग्रह के लिए न कहा जाय और सत्याग्रह न किया जाय, मेरा हरगिज़ यह कहना नहीं है। अंग्रेज़ सरकार के विरुद्ध गान्धी जी की आज्ञा पर मैंने कई बार सत्याग्रह किया है। पाकिस्तान की या हिन्दुस्तान की, किसी की सरकार के भी ख़िलाफ़ अगर सत्याग्रह की मैं ज़रूरत देखूँगा तो ज़रूर करूँगा। हाँ, इस दौरान में जिस तरह के हिंसात्मक दंगे-फ़साद करने की बातें आपने उठायीं वे तो मैं किसी भी दशा में करने वाला नहीं।

वही सिक्ख—वह तो हमने यों ही कह दिया था।

वही पंजाबी हिन्दू—शायद ग़ुस्से में।

अमरनाथ—ठीक है। आदमी बहुत-सी बुरी बातें ग़ुस्से में तो करता ही है, लेकिन इससे वह माफ़ तो नहीं किया जा सकता। गयी लड़ाई में हिंसा अपना बुरे से बुरा, विकराल से विकराल और पतित से पतित रूप दिखा चुकी है। हिंसा का उपासक योरप तक इस हिंसा से घबड़ा उठा था। आज के बड़े से बड़े विचारक कहते हैं कि मानव-समाज में हिंसा की कोई भी जगह नहीं है। **(कुछ रुककर)** ख़ैर, इस वक़्त छोड़िए इस बात को। **(फिर कुछ रुककर)** हाँ, तो मैं कह रहा था कि सत्याग्रह किसी भी हालत में नहीं किया जा सकता, यह मेरा कहना नहीं है, पर वह हमारा आख़िरी

हथियार है और उसे उठाने के पहले, कम से कम हमारी ही हुकूमत के खिलाफ़ उठाने के पहले, क्योंकि अब तो विदेशी सरकार का सवाल नहीं है, हमें एक बार नहीं, सौ, हज़ार, लाख, करोड़ और अगणित बार सोचना होगा। अगर मुझे इस शिष्ट मंडल का नेतृत्वकर पाकिस्तान के मिनिस्टरों के पास जाना है, तो मैं इस समय तो अर्ज़ी ही लेकर जा सकता हूँ, चुनौती नहीं, और अर्ज़-दाश्त में सत्याग्रह का ज़िक्र नहीं हो सकता; हाँ, आप लोग अगर सत्याग्रह की बात करना चाहते हैं, तो मुझे छोड़ दीजिए; आप जो उचित समझें, उसे कीजिए।

[फिर कोई कुछ नहीं बोलते सब एक दूसरे की ओर देखते हैं। कुछ देर निस्तब्धता।]

एक सिन्धी—बोलो, भाइओ ! बोलो। (**कुछ रुककर**) मेरी तो यह राय है कि हम (**अमरनाथ और महफ़ूज़ख़ाँ की ओर इशाराकर**) इन्हें नहीं छोड़ सकते।. .

बहुत से व्यक्ति—(**एक साथ**) हाँ, हाँ, कभी नहीं. . . .कभी नहीं।

पहला सिक्ख—अच्छा, निकाल दीजिए सत्याग्रह की बात।

पंजाबी हिन्दू—हाँ, हाँ, निकाल दो।

बंगाली—आच्चा ! आच्चा !

सरहद्दी—ठीक है ! ठीक है !

सब—(**एक स्वर से**) बिल्कुल।

अमरनाथ—(**सिक्ख से**) अच्छी बात है; तो पहले डेपुटेशन मिस जहाँनारा के पास चलेगा, उसके बाद हम सोचेंगे मौलाना पीरबख़्श साहब के पास चलने के लिए। आप मिस जहाँनारा से समय निश्चित कीजिए। (**महफ़ूज़ख़ाँ से**) तुम इस अर्ज़-दाश्त को ठीक कर लो। (**काग़ज़ महफ़ूज़ख़ाँ को देता है।**)

[अमरनाथ खड़ा होता है। बाक़ी सब लोग भी उठते हैं।]

लघु यवनिका

चौथा दृश्य

स्थान—लाहौर में जहाँनारा के बँगले का बरामदा

समय—प्रातःकाल

[बरामदे की बनावट वैसी ही है, जैसी दिल्ली के बँगले की थी, पर यह उससे बहुत बड़ा है। खम्भों और महराबों में भी अन्तर है। फ़र्नीचर उससे बहुत बढ़िया है। एक महराब से गंगाराम का पिंजरा लटक रहा है। जहाँनारा एक आरामकुर्सी पर बैठी हुई अख़बार पढ़ रही है। निकट की एक टेबिल पर कुछ अख़बार और रखे हुए हैं। गंगाराम बीच-बीच में कुछ बोलता है। पर जहाँनारा का ध्यान इस समय उसकी तरफ़ नहीं है।]

जहाँनारा—**(कुछ देर बाद अख़बार को ज़मीन पर ज़ोर से पटकते हुए)** उफ़ ! यहाँ तक....यहाँ तक हो रहा है मुसलमानों के ख़िलाफ़ हिन्दोस्तान में।

तोता—चित्रकूट के घाट पै भई सन्तन की भीर।

जहाँनारा—**(तोते की ओर देखकर, उसके पास जाते हुए, कुछ क्रोध से)** हिन्दू सन्त ! शायद किसी ज़माने में उनमें सन्त पैदा हुए हों, लेकिन इस....इस वक़्त तो सारे के सारे शैतानों से भी बदतर मालूम होते हैं।

तोता—तुलसिदास चन्दन घिसैं तिलक देत रघुबीर।

जहाँनारा—अरे ! कहाँ हैं तुलसीदास, और कहाँ हैं रघुबीर ? ....चन्दन की लकड़ी की जगह घिसी जा रही है अब....अब वहाँ मुसलमानों की हड्डियाँ और घिस रहा है उन्हें शान्तिप्रिय के मानिन्द आदमी। ....उसकी देवी दुर्गा है !...दुर्गा को तो जानवरों और आदमियों सब की क़ुर्बानियाँ चाहिए न ?...मुसलमानों की कुर्बानियाँ दी जा रही हैं और उनकी हड्डियों का चन्दन शान्तिप्रिय घिस रहा है। उससे दुर्गा तिलक कर रही है।

तोता—आवर लाइफ़ इज ए रेग्यूलर फ़ीस्ट।

जहाँनारा—हाँ, हाँ, उन दोनों की लाइफ़ रेग्यूलर फ़ीस्ट होगी। तभी....तभी तो यह हो रहा है। जब इन्सान को किसी न किसी तरफ़ से, किसी न किसी तरह का बड़े से बड़ा आराम मिलता है, तभी वह दूसरी तरफ़ बड़ी से बड़ी तकलीफ़ दे सकता है। इस तरह के आराम के नशे के बिना कम से कम शान्तिप्रिय के मानिन्द आदमी का यह सब करना, जो वह हिन्दू फ़ैडरेशन में मुसलमानों के साथ कर रहा है, मुमकिन ....मुमकिन ही नहीं। **(जो अख़बार ज़मीन पर पटक दिया था, उसको उठाते और देखते हुए)** पूरा का पूरा पेज भरा है, उन कार्रवाइयों से जो वहाँ की जा रही हैं, गंगाराम !

तोता—गंगाराम।

जहाँनारा—हाँ, मैं तो तुझे गंगाराम ही कहूँगी, चाहे हिन्दू वहाँ कुछ भी क्यों न करें। **(फिर अख़बार को देखते हुए)** और....और सुबूत दिये गये हैं उन सब ज़ुल्मों के, जो वहाँ किये जा रहे हैं।.... हालाँ....हालाँ कि इधर इन बातों के मुताल्लिक़ अख़बारों में रोज़मर्रा ही कुछ न कुछ आता है, लेकिन इतनी तफ़्सील में, इस तरह के सुबूतों के साथ इसके पहले कभी नहीं आया था। **(कुछ रुककर)** और हम.... हम पाकिस्तान में क्या कर रहे हैं ?....ज़्यादा से ज़्यादा इस बात का ख़्याल रखते हैं कि यहाँ की अकल्लीयतें को कोई तकलीफ़ न पहुँचे। जब कभी कोई शिकायत आती है, फ़ौरन उसकी तहक़ीक़ात करते हैं और अगर सुबूत हो जाता है कि किसी मुस्लिम ने हिन्दुओं, सिक्खों या किसी भी अकल्लीयत के किसी भी आदमी के साथ कोई भी ज़्यादती की है तो उसे सख़्त सज़ा देते हैं। **(कुछ रुककर)** और....और इतने पर भी कितना....कितना फ़ितूर मचा रक्खा है इन हिन्दुओं और सिक्खों ने यहाँ पर भी; अरे ! अमरनाथ को बुलाकर तमाम पाकिस्तान में घुमाया; एक बेवक़ूफ़ मुसलमान महफ़ूज़ख़ाँ भी अमरनाथ का साथ देने को मिल ही

गया। हमने....हमने घूमने दिया इन्हें उन सिक्खों, उन बंगाल, सिन्ध, सरहद्दी सूबे के हिन्दुओं के साथ, जिनके खिलाफ़ एक नहीं, बेशुमार शिकायतें हैं अकल्लीयतों को भड़काने की।

तोता—टर्र ! टर्र ! टर्र !

जहाँनारा—हाँ, यहाँ....यहाँ भी आज अमरनाथ और उसके डेपुटेशन की टर्र टर्र सुनने को मिलेंगी। **(कुछ रुककर)** और.... और इन सारी बर्दाश्तों का सबब जानता है, गंगाराम ?

तोता—गंगाराम !

जहाँनारा—वह सबब शायद तू है गंगाराम। **(कुछ रुककर)** तू मुझे उस ज़िन्दगी.....

तोता—आवर लाइफ़ इज़ ए रेग्यूलर फ़ीस्ट।

जहाँनारा—हाँ, उस रेग्यूलर फ़ीस्ट वाली ज़िन्दगी की हमेशा याद दिलाया करता है, जो मैंने शान्तिप्रिय के साथ गुज़ारी थी।....वह ....वह चाहे उसे भूल गया हो।

तोता—चित्रकूट के घाट पै भई सन्तन की भीर।

जहाँनारा—वह चाहे सन्त न रहकर शैतान हो गया हो, शान्तिप्रिय की जगह अशान्तिप्रिय हो गया हो, लेकिन मैं....मैं वैसी नहीं हो सकती। **(कुछ रुककर)** गंगाराम, शान्तिप्रिय के ऐसे....हाँ, ऐसे हो जाने पर भी देखती हूँ कि उस पर मेरी वैसी ही मुहब्बत है, जैसी.... जैसी पहले थी।....कुछ भी,....हाँ, कुछ भी हो, फ़र्क़ नहीं पड़ा मेरे दिल में। **(फिर कुछ रुककर)** यह....यह बहन की ही मुहब्बत तो है न ?....वैसी....वैसी मुहब्बत तो नहीं, जिसका ज़िक्र उस दिन पीरबख़्श ने किया था ? **(फिर कुछ रुककर)** पीरबख़्श की उस दिन की बात के बाद बार-बार....हाँ, बार-बार मेरे भी दिल में यह शक-सा क्यों पैदा होता है ?....शान्तिप्रिय के साथ वैसी मुहब्बत होने के सबब से ही मैं पीरबख़्श को उस तरह नहीं चाहती, सचमुच यही

बात तो नहीं है ?....फ़ायड ने तो लिखा है कि हर तरह की मुहब्बत में सैक्स का जुज़ रहता ही है। **(कुछ रुककर अख़बार को जोर से जमीन पर पटक कर, इधर-उधर घूमते हुए)** नहीं, नहीं, यह कभी....कभी नहीं हो सकता। फ़ायड का कहना ग़लत....बिल्कुल ग़लत.... एकदम ग़लत है।....मैंने उसे हमेशा छोटे भाई....बल्कि कभी-कभी तो बच्चे....हाँ, बच्चे के मानिन्द चाहा है। **(कुछ रुककर, फिर तोते के पिंजरे के सामने खड़े होकर)** लेकिन सैक्स....सैक्स भी तो इन्सान में क़ुदरती चीज़ है।....उस तरफ़ मेरा रुख़ ही क्यों नहीं होता ?....पीरबख़्श के मुझे इतना चाहने पर भी, उसे हमेशा यह कहने के सिवा—'ठहरिए,' 'थोड़ा और ठहरिए', मैं उसे और कुछ क्यों नहीं कह सकती ? **(फिर कुछ रुककर)** और....और पीरबख़्श न सही किसी की तरफ़ भी मेरा उस तरह से थोड़ा-सा भी खिंचाव क्यों नहीं होता ?....शान्तिप्रिय....हाँ, मेरे अनजाने शान्तिप्रिय ही इसका सबब तो नहीं है ? **(फिर कुछ रुककर इधर-उधर घूमते हुए)** नहीं—नहीं, कभी नहीं, यह कभी नहीं हो सकता।....इसका....इसका सबब है मुल्क और क़ौम की ख़िदमत के लिए शुरू से ही मेरा शादी न करने का अहद। **(कुछ रुककर)** और पीरबख़्श....पीरबख़्श तो यह बात इसलिए कहते हैं कि उनकी मुहब्बत को मैं उसी तरह की मुहब्बत के साथ लौटा नहीं रही हूँ।

तोता—गंगाराम।

जहाँनारा—**(फिर तोते के पिंजरे के सामने खड़े होकर)** हाँ, दिल के उस तरह के ख़्यालातों को कुचलकर मैं हमेशा के लिए गंगा में बहा चुकी हूँ। **(फिर कुछ रुककर)** लेकिन...लेकिन....हमेशा के लिए उन्हें क्या कुचला जा सकता है, बहाया जा....जा....जा...

[चपरासी का तश्तरी में कार्ड लिये हुए प्रवेश। वह हरे रंग की वरदी पहने हुए है। सिर पर चाँद का बैज है। कमर

में उसके कटार लगी है। सलामकर वह तश्तरी जहाँनारा के सामने करता है।]

जहाँनारा—(कार्ड उठाकर उसे देखते हुए) ओ! डेपुटेशन आ गया। (कुछ रुककर) अच्छा, उन्हें यहीं ले आओ।

[चपरासी का सलामकर प्रस्थान। जहाँनारा ज़मीन पर पड़े हुए अख़बार को उठाकर टेबिल पर रखती है और इधर-उधर घूमती है। चपरासी के साथ अमरनाथ, महफ़ूज़ख़ाँ, एक सिक्ख, एक पंजाबी, एक बंगाली, एक सिन्धी और एक सरहद्दी हिन्दू आते हैं। चपरासी आकर सलाम करता है और इन्हें पहुँचाकर, सलामकर फिर जाता है। जहाँनारा कुछ आगे बढ़कर इनका स्वागत करती है। अमरनाथ जहाँनारा से हाथ मिलाता है।]

अमरनाथ—(मुस्कराते हुए) कितनी मुद्दत के बाद आपके दर्शन हुए।

जहाँनारा—(मुस्कराते हुए) हाँ, हाँ, एक ज़माना....एक ज़माना गुज़र गया। कहिए मिजाज तो अच्छा है?

अमरनाथ—कृपा है, आपकी, आप तो अच्छी हैं?

जहाँनारा—ख़ुदा का फ़ज़ल है।

अमरनाथ—मैं अपने साथियों का परिचय तो करा दूं। (पंजाबी सिक्ख की ओर इशारा करते हुए) सर्दार गुरुबख़्शसिंह। (जहाँनारा और सिक्ख हाथ मिलाते हैं। पंजाबी हिन्दू की तरफ़ संकेतकर) मिस्टर राजनारायण वर्मा। (पंजाबी हिन्दू और जहाँनारा हाथ मिलाते हैं। बंगाली की ओर मुख़ातिब हो) बाबू शशिकुमार मुकुरजी। (जहाँनारा और बंगाली हाथ मिलाते हैं। सिन्धी की ओर घूमकर) सेठ जयरामदास गिडवानी। (सिन्धी और जहाँनारा हाथ मिलाते हैं। सरहद्दी की तरफ़ बढ़कर) लाला दुनीचन्द। (जहाँनारा और सरहद्दी हाथ मिलाते हैं। महफ़ूज़ख़ाँ की तरफ़ संकेतकर) और ये हैं मेरे मित्र महफ़ूज़ख़ाँ।

[महफ़ूज़ख़ाँ से हाथ मिलाते हुए जहाँनारा बड़े ध्यान से उसे देखती है।]

जहाँनारा—तशरीफ़ रखें सब हज़रात ।

[सब लोग कुर्सियों पर बैठते हैं । सब के बैठने के पश्चात् जहाँनारा भी एक कुर्सी पर बैठती है । महफ़ूज़ख़ाँ डोरे से नत्थी फुलिसकेप काग़ज़ जेब से निकालकर अमरनाथ को देता है ।]

जहाँनारा—बड़ी मेहरबानी की आप सब हज़रात ने ।

अमरनाथ—**(मुस्कराते हुए)** पर हम तो अपने काम से आये हैं ।

जहाँनारा—**(मुस्कराते हुए)** यह तो जानती हूँ, पर इतने पर भी मेहरबानी हुई यह तो कहूँगी ही । कहिए क्या हुक्म है ?

अमरनाथ—हुक्म नहीं प्रार्थना है और वह ब्योरेवार इस अर्ज़-दाश्त में लिखी गयी है । **(काग़ज़ जहाँनारा को देता है ।)**

[जहाँनारा अर्ज़ी को लेकर उसे सरसरी तौर पर उलट-पुलटकर देखने लगती है । अमरनाथ साधारण रूप से और शिष्ट-मण्डल के शेष व्यक्ति उत्कंठा से जहाँनारा की तरफ़ देखते हैं । कुछ ही देर में जहाँनारा का सरसरी तौर से देखना ध्यानपूर्वक देखने में परिणत हो जाता है और इसके बाद कुछ ही देर में वह अर्ज़ी को शीघ्रतापूर्वक पढ़ने लगती है । जहाँनारा के परिवर्तित भाव उसकी भिन्न-भिन्न मुद्राओं में जान पड़ते हैं और वह अर्ज़ी शीघ्रतापूर्वक पढ़ रही है यह उसकी आँखों की पुतलियों के एक पंक्ति के एक सिरे से दूसरे सिरे तक एक पंक्ति से दूसरी पंक्ति पर शीघ्रता से दौड़ने के कारण । पढ़ते-पढ़ते उसके मुख पर क्रोध के भाव झलकने लगते हैं । कुछ देर तक निस्तब्धता रहती है ।]

तोता—चित्रकूट के घाट पै भई सन्तन की भीर ।
तुलसिदास चन्दन घिसें तिलक देत रघुबीर ।

[सब का ध्यान तोते की तरफ़ खिंचता है, जो उनकी दृष्टियों से जान पड़ता है ।]

अमरनाथ—अच्छा, यह तोता तो ख़ूब बोलता है, और हिन्दी दोहा ।

जहाँनारा—(**काग़ज़ों को देखते-देखते ही**) जी हाँ, लंका में विभी-षण है।

अमरनाथ—लंका में विभीषण ! क्या कह रही हैं आप ! आपका बँगला लंका !

जहाँनारा—(**काग़ज़ों को देखते-देखते ही**) जी हाँ, लाहौर के एक हिन्दू अख़बार ने इसको यही नाम दिया था।

अमरनाथ—हिमाक़त थी उस पत्र की, और तो क्या कहूँ ?

जहाँनारा—(**कुछ देर चुप रहकर अर्ज़ी को उलट-पलटकर देखते-देखते एकाएक सिर उठाकर, अमरनाथ की ओर देख**) हिमाक़त थी उस अख़बार की, क्या फ़र्माया आपने ?

अमरनाथ—जी हाँ, मैंने यही अर्ज़ किया कि हिमाक़त थी उस पत्र की।

जहाँनारा—और इस मेमोरिअल में तो आपने मेरे घर को ही लंका नहीं बनाया है, लेकिन तमाम पाकिस्तान की हुकूमत को रावण का राज। अभी मैंने इसे सरसरी तौर पर ही देखा है, पर इतने से ही पता चलता है कि शायद दुनिया में कोई ऐसी ज्यादती नहीं हो सकती जो पाकिस्तान की गवर्नमेन्ट अकल्लीयातों पर न कर रही हो।

अमरनाथ—इस अर्ज़ी का यदि आपने यह मतलब निकाला है, तो मैं इतना ही कह सकता हूँ कि मुझे इसका बहुत दुःख है।

जहाँनारा—आपको दुख तो होना ही चाहिए, क्योंकि आज आप उन हज़रात के नुमाइन्दे बनकर तशरीफ़ लाये हैं, जिनके ख़िलाफ़ इस बात की एक, दो, चार नहीं, बेशुमार रिपोर्टें हैं कि वह हिन्दुओं सिक्खों वग़ैरह को झूठी-झूठी बातें कह, उन्हें लड़वाकर मुल्क के अमन-चैन में ख़लल डालना चाहते हैं। चूँकि पाकिस्तान की सरकार बाहरी नहीं पर मुल्क की गवर्नमेन्ट है और इस्तिबदादी न होकर हर दिलअज़ीज़, इसीलिए इन हज़रात के ख़िलाफ़ अब तक कोई कार्रवाई नहीं की गयी। यह हज़रात अपनी

रायें, चाहे उनमें कितना ही जहर क्यों न भरा हो, जाहिर करने के लिए आजाद रहें, वरना....वरना....(**चुप हो जाती है।**)

अमरनाथ—(**कुछ ठहरकर, बिना किसी भी तरह की उत्तेजना के, अपने स्वाभाविक स्वर में**) पहले की बातें मैं नहीं जानता, परन्तु जब से मैं पाकिस्तान का दौरा कर रहा हूँ, तब से मेरे किसी भी साथी ने, कहीं भी कोई ऐसी बात न कही, न की, जिसे क़ाबिले एतराज समझा जावे।

जहाँनारा—माफ़ कीजिए अगर मैं यह कहूँ कि आपके पाकिस्तान के साथियों की बात तो अलग ही है, लेकिन आपके हिन्दोस्तान के साथी महफ़ूज़ख़ाँ साहब और आपकी ख़ुद की तक़रीरों की भी जो रिपोर्टें आयी हैं, वह भी एतराज़ से खाली नहीं है।

महफ़ूज़ख़ाँ—(**कुछ उत्तेजना से**) तब तो गवर्नमेन्ट को हम लोगों के विरुद्ध कार्रवाई करनी चाहिए थी।

जहाँनारा—(**ताने से**) यह उसने इसलिए नहीं की कि वह आप लोगों को मेहमान समझती है।

महफ़ूज़ख़ाँ—(**ओठ को दाँतों से चाबते हुए**) ऐसा!

अमरनाथ—क्या मुझे महफ़ूज़ख़ाँ के और मेरे भाषणों की रिपोर्टें दिखाकर यह बताया जा सकता है कि उनमें कौन-सी बातें अनुचित समझी जाती हैं?

जहाँनारा—जी नहीं, वह तमाम पोशीदा कागज़ात हैं। (**अर्ज़ी को लपेटकर टेबिल पर रखती है।**)

तोता—गंगाराम।

[कुछ देर निस्तब्धता।]

अमरनाथ—आनरेबिल मिस जहाँनारा, शुरू में ही हम लोगों की बातों ने जो ढंग पकड़ा, उसकी मैं आशा नहीं करता था। यहाँ के हिन्दू और सिक्ख भाइयों ने जब मुझे यहाँ के हालात लिखकर यहाँ बुलाया और मैंने यहाँ आना स्वीकार किया तब मेरी नज़र के सामने केवल एक चीज़

थी—सब बातों को स्वयं देखकर यदि कोई वाजिब शिकायतें हों तो उन्हें आपकी गवर्नमेन्ट के सामने रख, दुरुस्त कराने का प्रयत्न करना। मैं देश के हिस्से करने के खिलाफ़ अवश्य था, आज भी मेरी राय है कि यह बटवारा उचित कार्रवाई नहीं हुई, किन्तु दोनों संघराज्यों की सरकारें इस मुल्क की सरकारें हैं। हर हिन्दी का कर्तव्य है कि आज़ाद हिन्द की चाहे एक हुकूमत हो, या दो, उसे सफल बनाने में हर तरह की सहायता करे। इसी चीज़ को मद्दनज़र रखते हुए मैं यहाँ आया। मेरा साथ दिया मेरे मित्र महफ़ूज़ख़ाँ ने। पंजाब, सरहद्दी सूबा, सिन्ध और बंगाल का हम लोगों ने इन सूबों के कई प्रतिष्ठित सज्जनों के साथ दौरा किया। इन प्रान्तों की जनता में राज्य-कर्मचारियों के खिलाफ़ कुछ ऐसी अफ़वाहें फैली हुई थीं, जिनका कोई सिर पैर ही न था। ऐसी बातें हम लोगों ने जनता के हृदय से निकाल डालने की कोशिशें कीं, लेकिन इसी दौरान में हमें कुछ ऐसी बातों के भी प्रमाण मिले, जो सचमुच ही ज़्यादतियाँ कही जा सकती हैं। उन्हीं को इस अर्ज़ी में लिखा गया है। इस अर्ज़-दाश्त के हर शब्द, और शब्द ही नहीं हर कामा और सैमीकोलन के लिए मैं ज़िम्मेदार हूँ। आप मुझसे परिचित न हों, यह बात नहीं, आप जानती हैं किसी बात को भी ग़ैरज़िम्मेदारी से न करने का ही मैं प्रयत्न करता हूँ, साथ ही यह बात भी आपसे छिपी नहीं है कि सच्चे और सीधे रास्ते को छोड़, झूठे और टेढ़े-मेढ़े रास्ते पर चलने की मुझमें हिम्मत नहीं है। **(अत्यन्त दृढ़ता से)** इस अर्ज़ी में लिखी हुई हर बात को सुबूत करने का मैं साहस रखता हूँ। मैं जानता हूँ कि आपकी सरकार मुल्क की सरकार है, साथ ही वह इस्तिबदादी न होकर, हरदिल अज़ीज़ परन्तु वह सरकार केवल मुसलमानों की न होकर यहाँ बसे हुए हर मनुष्य की है।

जहाँनारा—(उस अख़बार को उठाकर, जिसे वह पढ़ रही थी) और इस अख़बार में जिस हिन्दोस्तान की गवर्नमेन्ट की कार्रवाइयाँ छपी

हैं वह भी सिर्फ हिन्दुओं की सरकार न होकर वहाँ बसे हुए तमाम इन्सानों की है। **(अख़बार अमरनाथ को देने के लिए हाथ बढ़ाती है।)**

अमरनाथ—मैं आज इस पत्र को पढ़ चुका हूँ, इतना ही नहीं, हिन्दोस्तान में रहने वाले कई मुस्लिम भाइयों से मेरी खत-किताबत भी चल रही है। यहाँ का काम निपटाकर महफ़ूज़खाँ और मैं हिन्दोस्तान का भी दौरा करने वाले हैं। वहाँ यदि मुसलमानों पर कोई ज़्यादतियाँ हुई होंगी तो मुसलमानों को साथ लेकर उन्हें भी मैं वहाँ के मंत्रियों के सामने रखूँगा।

जहाँनारा—बहुत अच्छा होता अगर आप लोग पहले वहीं की जाँच कर लेते।

अमरनाथ—मुमकिन है वह अच्छा होता, परन्तु अब तो हम लोग यहाँ आ ही गये हैं और यहाँ का काम निपटाकर ही जाना हो सकता है।

[कुछ देर निस्तब्धता।]

तोता—आवर लाइफ़ इज़ ए रेग्युलर फ़ीस्ट।

[सब लोग तोते की ओर देखते हैं, जहाँनारा विशेष ध्यान से।]

जहाँनारा—**(अमरनाथ की तरफ़ दृष्टि घुमाकर)** देखिए, यहाँ हम लोग ज़्यादा घास पैरों के नीचे नहीं उगने देते। जैसे ही कोई शिकायत आती है, उसकी जाँच की जाती है और जाँच होते ही मुनासिब कार्रवाई। **(अर्ज़ी को टेबिल पर से उठाते हुए)** इसमें की हुई शिकायतों की तहक़ीक़ात की जायगी और तहक़ीक़ात के बाद मुनासिब कार्रवाई।

अमरनाथ—धन्यवाद। और इस तहक़ीक़ात के दौरान में यदि मेरी किसी प्रकार की मदद की ज़रूरत हो तो....

जहाँनारा—**(बीच ही में)** हाँ, हाँ, ज़रूरत होगी तो फ़ौरन आपको तकलीफ़ दी जायगी।

अमरनाथ—अनेक धन्यवाद। मुझे विश्वास है कि अगर ठीक ढंग से जाँच हुई तो महफ़ूज़खाँ की और मेरी ही नहीं, (**अपने दूसरे साथियों की ओर इशाराकर**) मेरे आज के सभी साथियों की, और इनके अलावा भी कई सज्जनों की आपको ज़रूरत पड़ेगी।

जहाँनारा—जिन-जिनकी ज़रूरत पड़ेगी हरेक को बुला लिया जायगा।

अमरनाथ—धन्यवाद।

[जहाँनारा फिर **अर्ज़ी के काग़ज़ उलटने लगती है। कुछ देर निस्तब्धता।**]

तोता—गंगाराम।

जहाँनारा—(**अर्ज़ी को उलटते-पुलटते गम्भीरता से**) पर देखिए; एक बात अभी से साफ़ कर देना चाहती हूँ।

अमरनाथ—फ़र्माइए।

जहाँनारा—इस अर्ज़-दाश्त में हिन्दू और सिक्खों के मज़हबी इदारों की मदद के मुताल्लिक़ जो माँगें की गयी हैं, वह पूरी नहीं की जा सकतीं।

अमरनाथ—यह क्यों ?

जहाँनारा—इसलिए कि इस्लाम हुकूमती मज़हब है। इस्लाम शरियत के ख़िलाफ़ जो मज़हब हैं उन्हें सल्तनत कैसे मदद कर सकती है ? मस्लन बुतपरस्ती जिन मन्दिरों में होती है, उन्हें हुकूमत से कैसे मदद मिल सकती है ?

महफ़ूज़ख़ाँ—मुआफ़ करें तो मैं इस सम्बन्ध में कुछ निवेदन करूँ।

जहाँनारा—ज़रूर, ज़रूर।

महफ़ूज़ख़ाँ—पहले तो यही ग़लत बात है कि इस्लाम हुकूमती मज़हब है।

जहाँनारा—यह आपने ख़ूब फ़र्माया !

महफ़ूज़ख़ाँ—मेरा कथन कितनी दूर तक सही है इसका मैं प्रमाण

देता हूँ। सल्तनत के खर्च के लिए जो टैक्स वसूल होते हैं वे केवल मुसलमानों से या दूसरे समुदायों से भी ?

जहाँनारा—टैक्स तो हर हुकूमत में सभी देते हैं।

महफ़ूजखाँ—ठीक है, इसीलिए हुकूमत का कोई मजहब हो ही नहीं सकता।

जहाँनारा—(**विचारते हुए**) लेकिन ब्रिटिश गवर्नमेन्ट के वक़्त टैक्स सब से वसूल होने पर भी प्राटेस्टेन्ट क्रिश्चियेनिटी की मदद के लिए मज़हबी महकमा था। सरकारी मालिया से उसे मदद मिलती थी, दूसरे मज़हबों को नहीं।

महफ़ूजखाँ—ब्रिटिश गवर्नमेन्ट की बात छोड़ दीजिए। उसने तो प्रायः सभी बातें इस देश में उलटी-पुलटी ही की थीं। जैसा मैंने अर्ज़ किया एक तो हुकूमत का कोई मजहब हो ही नहीं सकता, दूसरे या तो वह किसी भी मजहब की संस्थाओं को कोई मदद न दे और या फिर सभी धर्मों की संस्थाओं को। पठान और मुग़ल राज्य में सभी धर्मों की संस्थाओं को सहायताएँ दी जाती थीं। औरंगजेब तक ने कुछ हिन्दू-मन्दिरों को जागीरें दी थीं। अवध के बादशाहों का, हैदरअली और टीपू सुल्तान का इतिहास भी इस तरह की घटनाओं से भरा हुआ है। हिन्दू राज्य में तो हमेशा ही यह होता रहा है। आख़िरी हिन्दू सम्राट् हर्षवर्धन का तो आर्य और बौद्ध-धर्म का समानादर दुनिया की तारीख़ में एक खास स्थान रखता है।

जहाँनारा—(**गम्भीरता से सोचते हुए**) अच्छी बात है, इस पर भी हम लोग ग़ौर करेंगे।

अमरनाथ—बहुत-बहुत शुक्रिया।

[जहाँनारा अर्जी को फिर उलटने-पुलटने लगती है। कुछ देर सन्नाटा।]

तोता—टर्र ! टर्र ! टर्र !

अमरनाथ––(**उठते हुए**) तो आपका समय तो आजकल बहुत क़ीमती है, अब आज्ञा हो।

[सब लोग खड़े हो जाते हैं; जहाँनारा भी।]

जहाँनारा––इतनी जल्दी तशरीफ़ ले जायँगे ? अभी तो आपने काम की बातें की हैं, जाती बातें तो कुछ हुई ही नहीं। दिल्ली की हमेशा ही याद आती है। कहिए, आप सब लोग वहाँ अच्छी तरह तो रहते हैं ? लखनऊ आपका जाना हुआ था ? शान्तिप्रिय जी तो अच्छे हैं ?

अमरनाथ––दिल्ली में तो सभी बहुत अच्छी तरह हैं; धन्यवाद। लखनऊ गया नहीं, पर शान्तिप्रिय जी अच्छे हैं, यह अख़बारों से मालूम हो जाता है।

जहाँनारा––एक दिन चाह के लिए तशरीफ़ लाइए न ?

अमरनाथ––शुक्रिया; पर अभी तो एक बार घर लौट रहा हूँ। जाँच के सिलसिले में यदि आपने याद किया और यहाँ आया तो किसी दिन भी चाह के लिए क्या खाना खाने के लिए आ जाऊँगा।

जहाँनारा––हाँ, हाँ, आपका घर है।

[जहाँनारा एक-एक कर सबसे हाथ मिलाती है।]

तोता––गंगाराम !

[सबका प्रस्थान। इन लोगों के जाने पर जहाँनारा जल्दी से कुर्सी पर बैठ अर्ज़ी को उठाकर बड़े ध्यान से पढ़ने लगती है। पढ़ते-पढ़ते सामने की ओर देखती है, मानो किसी बहुत दूर की चीज़ को देख रही हो। वह पढ़ना रोककर कुछ देर चुपचाप इसी तरह देखती रहती है और फिर पढ़ना शुरू करती है। पढ़ते-पढ़ते अब एकाएक अर्ज़ी को टेबिल पर पटककर खड़ी हो जाती है। दोनों हाथों की मुट्ठियाँ बाँध नीचे की तरफ़ देखने लगती है। फिर दोनों हाथ मलने लगती है। हाथ मलते-मलते एकाएक घूमना शुरू करती है। घूमना एकदम से तेज़ हो जाता है। फिर सहसा खड़े हो टेबिल पर से अर्ज़ी को उठाकर खड़े-

खड़े ही पढ़ने लगती है। पढ़ते-पढ़ते फिर टहलना शुरू होता है। इस बार टहलते हुए भी अर्जी का पढ़ना जारी रहता है।]

तोता—आवर लाइफ़ इज़ ए रैग्यूलर फ़ीस्ट !

जहाँनारा—(खड़े हो, पढ़ना बन्दकर, तोते की तरफ़ देखते हुए) अरे ! कहाँ का फ़ीस्ट, गंगाराम ? इस....इस हालत में भी तुझे लाइफ़ फ़ीस्ट दिखती है ?....तू....तू अगर इस अर्जी को पढ़ सकता !....तू....तू अगर अमरनाथ के लफ़्ज़ों, अमरनाथ की नज़र, अमरनाथ की हरेक हरकत से जो सचाई टपक रही थी, उसे देख सकता....उसे समझ सकता....तो....तो कभी....हाँ, कभी....कभी भी न कहता कि—'लाइफ़ इज़ ए रैग्यूलर फ़ीस्ट !'

तोता—आवर लाइफ़ इज़ ए रैग्यूलर फ़ीस्ट !

जहाँनारा—हरगिज़....हरगिज़ वह लाइफ़ रैग्युलर फ़ीस्ट नहीं हो सकती, जिस लाइफ़ से इतने....इतने बेक़सूरों को इस....इस तरह की तकलीफ़ें पहुँच रही हों।

[पीरबख़्श का प्रवेश।]

पीरबख़्श—कहिए, मिस जहाँनारा, डेपुटेशन से बातें हो गयीं ?

जहाँनारा—हाँ, अभी-अभी वह लोग गये हैं।

पीरबख़्श—मुझे मालूम है। उनके आते ही मैं भी आ गया था और नज़दीक वाले कमरे में बैठा हुआ सारी बातें सुन रहा था। उनके जाने के बाद गुसलख़ाने में होकर आ रहा हूँ।

[दोनों कुर्सियों पर बैठ जाते हैं।]

जहाँनारा—तब तो आपको मालूम ही है कि क्या बातें हुईं ?

पीरबख़्श—हाँ, हाँ, सब मालूम है। शुरू-शुरू में आपकी बातचीत का रवैया भी बिल्कुल ठीक था, लेकिन....लेकिन बाद में.... **(चुप हो जाता है।)**

जहाँनारा—(उत्सुकता से) हाँ, बाद में ?

पीरबख्श—आखिर औरत का ही दिल ठहरा और फिर अमरनाथ पुराने दोस्तों में से एक।....बाद....बाद में आप ढेर हो गयी ! एक दम कुलैप्स !

जहाँनारा—**(आश्चर्य से)** ढेर ! कुलैप्स !

पीरबख्श—और क्या ? तफ़्तीश मंजूर कर लेना, ढेर होना तो था ही।....और....और काफ़िरों से भी बड़े काफ़िर महफ़ूज़ की बात पर भी आपका ग़ौर करने के लिए कहना....क्या कहूँ, हद हो गयी। इस्लाम में काफ़िरों से कैसा बर्ताव करना चाहिए, यह तो कहा है, पर कोई मुसल्मान अगर दिखावे के लिए ही सिर्फ़ ज़ाहिरा मुसल्मान रह जाय, मुसल्मान होते हुए इस्लाम की ही जड़ खोदे, तो उससे कैसा सलूक किया जाय यह शायद कहीं नहीं कहा।....उफ़ ! वह महफ़ूज़ ! उसे....उसे मैं काफ़िरों से भी बड़ा काफ़िर मानता हूँ। तोप के मुँह पर रखकर उड़ा देने के क़ाबिल। **(कुछ रुककर)** आपको कहना चाहिए था मिमोरिअल में लिखी हुई हर बात सफ़ेद झूठ ही नही बल्कि काली झूठ है। हमारी गवर्नमेन्ट जितनी अकल्लीयत-पसंद है, इसे देखकर हमें ख़ुद ही ताज्जुब होता है। सल्तनत के हरेक अफ़सर पर इस बात के लिए ज़्यादा से ज़्यादा दबाव रखा जाता है कि वह सब के साथ इन्साफ़ाना बर्ताव करे पर अकल्लीयतों का इन्साफ़ से भी आगे बढ़कर ख़्याल रखें और हमारी सरकार के तमाम अहलकार इस मामले में अपने फ़र्ज़ ठीक तरह से अदा कर रहे हैं। आप जानती हैं कि गवर्नमेन्ट बनाने के पहले ही नहीं, पर राइल-आम का नतीजा निकलने के पहले भी इस मामले के मुताल्लिक मैंने साफ़-साफ़ लफ़्ज़ों में आपको अपनी राय बतायी थी। गवर्नमेन्ट बनाने के बाद भी आप जानती हैं कि हम लोग इस तरफ़ कितना ख़्याल रखते हैं; यहाँ तक कि कई हिन्दू और सिक्ख गुण्डों की सुबूतों के साथ शिकायतें आने पर भी हमने उनके ख़िलाफ़ कोई कार्रवाई इसलिए नहीं की कि फ़िज़ूल की ग़लतफ़हमी न हो। अमरनाथ और उस बदज़ात

महफ़ूज़ का दौरा तक हमने हो जाने दिया। गवर्नमेन्ट के इतनी ईमानदारी के साथ अपना फ़र्ज अन्जाम देने पर भी तमाम पाकिस्तान में इन लोगों ने बावेला मचा रखा है। आपने....आपने बातचीत शुरू....शुरू तो ठीक तरह से की थी, लेकिन....लेकिन....

जहाँनारा—(**पीरबख़्श को अर्ज़ी देते हुए, बीच ही में**) लेकिन आप इस अर्ज़-दाश्त को भी तो पढ़िए, इसमें ऐसी....ऐसी शिकायतों का तस्किरा है, जो हम लोग ख़्याल में भी नहीं सोच सकते थे।

पीरबख़्श—(**अर्ज़ी को लेकर बिना पढ़े हुए ही, उसे लपेटकर टेबिल पर पटकते हुए**) सब झूठा मामला बनाया गया है।

जहाँनारा—उसमें हर बात के सुबूत दिये गये हैं।

पीरबख़्श—सुबूत बातों से भी ज़्यादा झूठे होंगे।

जहाँनारा—लेकिन....लेकिन, मौलाना, मैं अमरनाथ को अच्छी तरह जानती हूँ। वह कभी झूठ नहीं बोलता। आज भी उसके हर लफ़्ज़ और हर हरकत से सचाई टपकती थी।

पीरबख़्श—मैं भी उसे जानता हूँ, मिस जहाँनारा, उससे ज़्यादा बना हुआ आदमी मैंने ज़िन्दगी में देखा ही नहीं। जो इस तरह सचाई को दिखाते और उसकी मुनादी पीटते हैं, वह बड़े से बड़े झूठे और दग़ाबाज़ होते हैं।

तोते—चित्रकूट के घाट पै भई सन्तन की भीर।

पीरबख़्श—(**तोते की ओर देखकर**) उफ़!

[पीरबख़्श एकदम उठकर, जल्दी से तोते का पिंजरा उतार अन्दर जाता है। जहाँनारा भी जल्दी से उसके पीछे-पीछे जाती है। दोनों जल्दी ही वापस आ जाते हैं।]

पीरबख़्श—मैं तो आज उस गंगाराम की हड्डियाँ गंगा में बहाने के लिए भेजने ही वाला था।

जहाँनारा—किसी का ग़ुस्सा किसी पर निकालना तो ठीक नहीं है न?

[दोनों फिर कुर्सियों पर बैठते हैं। कुछ देर सन्नाटा।]

जहाँनारा—पाकिस्तान बन जाने पर भी हम क़ौमी-तामीर का कोई काम न कर सके। पाकिस्तान इतना ग़रीब है कि किसी बड़े काम के लिए उसके पास रुपया ही नहीं। ऊपर से हिन्दुओं और सिक्खों की इस तरह की शिकायतें। **(कुछ रुककर)** और आप तफ़्तीश भी नहीं करना चाहते ?

पीरबख़्श—हरगिज़ नहीं।

जहाँनारा—(कुछ ठहरकर) और इस्लाम के मज़हबी इदारों के सिवा दूसरे मज़हबों के इदारों को मदद देने के मुताल्लिक़ आपकी क्या राय है ?

पीरबख़्श—वह तो सोचने की भी बात नहीं है। मैं काफ़िर नहीं होना चाहता।

[कुछ देर फिर निस्तब्धता।]

जहाँनारा—आप मिमोरिअल पढ़िए तो।

पीरबख़्श—मैं अपना क़ीमती वक़्त फ़िज़ूल की चीज़ों में बर्बाद नहीं करना चाहता। वह या तो रद्दी की टोकरी में फेंक देने के लायक़ है, या जला देने के। **(कुछ रुककर)** देखिए, मिस जहाँनारा, आप जानती हैं, हमने इन अकल्लीयतों का कितना ख़्याल रखा और. . . .और वह कितनी ईमानदारी. . . .सच्ची ईमानदारी के साथ, लेकिन इनकी शैतानियाँ बढ़ती ही जा रही हैं। हमें अब लोहे के हाथों से हुकूमत करनी होगी। और ख़ासकर एक वजह से और भी।

जहाँनारा—किस वजह से ?

पीरबख़्श—आपने आज के सुबह के अख़बार पढ़े; उनमें हिन्दोस्तान की सरकार की कार्रवाइयाँ तफ़्सील में और बड़े से बड़े सुबूतों के साथ दी गयी हैं। हिन्दोस्तान में मुसलमान इस बुरी तरह से कुचले जायँ कि उन्हें वहाँ से भागना पड़े, और पाकिस्तान में भी हिन्दू, सिक्ख वग़ैरह इस तरह सिर उठायें, इसे हम बर्दाश्त नहीं कर सकते, हरगिज़, हरगिज़ नहीं।

कुछ दिनों से मैं हिन्दोस्तान की सरकार के इन रवैयों को देख रहा था, इसीलिए मैंने फ़ौज की भरती बढ़ा दी है।

जहाँनारा—(**आश्चर्य से**) तो क्या हिन्दोस्तान पर चढ़ाई होगी ?

पीरबख़्श—मुमकिन है, हमें यह करने के लिए लाचार होना पड़े।

जहाँनारा—लेकिन मैं तो समझती थी कि यह भरती पड़ोसी सल्तनतों से हिफ़ाज़त के लिए है।

पीरबख़्श—वह सल्तनतें ?....वह तो हमारी हम मज़हब हैं। हमने अगर हिन्दोस्तान पर धावा किया तो, उनसे तो हमें उल्टी मदद मिलेगी।

[जहाँनारा अत्यन्त आश्चर्य से मुँह खोलकर पीरबख़्श की तरफ़ देखती है।]

लघु यवनिका

पाँचवाँ दृश्य

स्थान—लखनऊ में शान्तिप्रिय के बँगले का दफ़्तर

समय—तीसरा पहर

[कमरा आधुनिक ढंग से सजा हुआ दफ़्तर दिखता है। लिखने-पढ़ने की मेज़ पर अन्य सामान के साथ टेलीफ़ोन भी रखा है। शान्तिप्रिय घूमने वाली कुर्सी पर बैठा हुआ है। उसकी कुतिया उसके पैरों के पास खड़ी हुई, सिर उठाए उसकी ओर देखती हुई दुम हिला रही है। शान्तिप्रिय उसकी तरफ़ देखता हुआ उससे बातें कर रहा है।]

शान्तिप्रिय—हाँ, हाँ, रुबी, मिस दुर्गा ने अब....अब तो रोज़ ही कहना शुरू किया है कि मैं अपने हृदय को टटोलूँ; उसकी गहराई.... पूरी गहराई तक उतरकर टटोलूँ;....और तब....तब मुझे पता

लगेगा कि जहाँनारा के लिए मेरी मुहब्बत किस....हाँ, किस तरह की है ?....लेकिन....लेकिन, रुबी, हृदय की गहराई का मतलब क्या है ?....हृदय वही....वही है न, जिसे डाक्टर लोग हार्ट कहते हैं।....हार्ट तो माँस का एक लौंदा है....छोटा सा टुकड़ा.... छोटी-छोटी आर्ट्रीज़ के बीच में गुथा सा।....फिर....फिर हृदय की गहराई कैसी ?....हाँ, ये आर्ट्रीज़ ज़रूर पोली हैं, परन्तु.... परन्तु इनकी पोल में गहराई कहाँ ?....गहरा होता है—कुआँ, तालाब, समन्दर।....और नदी ?....नदी गहरी भी होती है, उथली भी। ....और कुएँ, तालाब उथले नहीं होते ?....होते हैं, लेकिन.... लेकिन उनमें नदी वाला बहाव नहीं होता।....और....और नदी ? ....नदी चाहे गहरी हो या उथली, उसमें बहाव रहता ही है।.... तो....तो मिस दुर्गा ने हृदय की जिस गहराई में उतरकर उसे टटोलने की बात कही, वह दरअसल गहराई की नहीं, बहाव की बात होगी।.... और....और वह बहाव होगा हार्ट की आर्ट्रीज़ के ख़ून का।.... तो....तो हृदय जिन आर्ट्रीज़ में ख़ून को बहाता है....और.... और उस बहाव के साथ जिस तरह की भावनाएँ बहती हैं....उन्हें.... उन्हें टटोलूँ और देखूँ कि जहाँनारा के लिए मेरी मुहब्बत किस तरह की थी और आज भी किस तरह की है ?

[शान्तिप्रिय आँखें बन्द कर लेता है। कुछ देर निस्तब्धता।]

कुतिया—भों ! भों ! भों !

शान्तिप्रिय—**(आँखें खोलकर)** तो....तो न टटोलने दिया तू ने उन भावनाओं के बहाव को।....दुनिया में रहने वाले, दुनियादारी की चीज़ों से घिरे हुए, दुनिया की भों भों में कहाँ....कहाँ टटोल सकते हैं, इस अन्दरूनी बहाव को ?....इस प्रयत्न में भीतर....हाँ, भीतर घुसना पड़ता है और यहाँ तो हर सेकिन्ड बाहर देखना पड़ता है। **(कुछ रुककर)** लेकिन....लेकिन जहाँ तक भी मैं....मैं इस बहाव का

पता लगा पाया हूँ, मैंने उसे हमेशा बहन के बतौर....कई मर्तबा तो माँ के मानिन्द माना है।....फिर....फिर इस मुहब्बत में उस तरह की बात कैसे हो सकती है जिसका शक मिस दुर्गा करती हैं।

कुतिया—भों ! भों ! भों !

शान्तिप्रिय—सिर्फ़ भोंक रहा हूँ ?....क्यों ? **(कुछ रुककर)** तभी....तभी बहन के बतौर....माँ के मानिन्द लफ़्ज़ मुँह से निकलते हैं; बहन नहीं, माँ नहीं।....पर....पर, रुबी, जो बहन नहीं है, जो माँ नहीं है, वह....वह तो बहन के बतौर, माँ के मानिन्द ही मानी जा सकती है।....ग़लत....बिलकुल ग़लत विचार है मिस दुर्गा का।

कुतिया—भों ! भों ! भों !

शान्तिप्रिय—हाँ, हाँ, भोंकती है वह।....चूँकि मैं....मैं उसे उस नज़र से नहीं देखता, जिस नज़र से वह मुझे देखती है, इसीलिए वह ....वह मुझ पर इस तरह का कलंक लगाती है।....अरे ! रुबी, उस....उस तरह की मुहब्बत तो मैं मुल्क की ख़िदमत के लिए कुचल चुका था, मिस जहाँनारा के साथ रहते-रहते ही कुचल चुका था।.... वह और मैं साथ-साथ रहते तो भी भाई-बहन का रिश्ता पालते हुए ही देश की सेवा करते और दुर्गा और मैं साथ रहते हैं तो भी मैं तो उसे बहन के मानिन्द ही मानकर क़ौम की ख़िदमत करता हूँ,....करते रहना चाहता हूँ।....हाँ, इस क़ौम की खिदमत में कुछ अधूरापन.... अधूरापन हमेशा महसूस करता रहता हूँ।....मुझे हिन्दू-मुसलमानों में अभी भी कोई भेद नज़र नहीं आता।....हिन्दू मेरी क़ौम के हैं और मुसल्मान किसी ग़ैर-क़ौम के, यह मुझे महसूस ही नहीं होता।....मिस दुर्गा समझती हैं यह है मेरे दिल में जहाँनारा की उस तरह की मुहब्बत के कारण.....

कुतिया—भों ! भों ! भों !

शांतिप्रिय—हाँ, रुबी, भोंकती....भोंकती हैं वे।....अगर

मेरा यह हाल जहाँनारा की मुहब्बत की वजह से ही है, तो....तो क्या उनके लिए मेरे दिल में जो बहन की मुहब्बत है, उसके सबब से नहीं हो सकता ?....क्या दुनिया में जिन्सी मुहब्बत ही एक मुहब्बत है ?.... आदमी-औरत का दूसरा किसी तरह का प्रेम नहीं हो सकता ?

कुतिया—भों ! भों ! भों !

शान्तिप्रिय—**(कुछ रुककर)** हाँ, जब पाकिस्तान में हिन्दुओं पर होने वाले अत्याचारों का हाल सुनता हूँ, पढ़ता हूँ, अभी जब अमरनाथ द्वारा की गयी जाँच और उस पर बनाये गये मिमोरिअल का हाल पढ़ा ....हमेशा....हर वक़्त दिल को ठेस लगती है, ख़ासकर इसलिए कि जहाँनारा यह सब कर रही हैं। जहाँनारा पर क्रोध भी आता है, कभी-कभी काफ़ी क्रोध।....पर....पर इतना सब होने पर भी उनके लिए घृणा....हाँ, रुबी, घृणा पैदा नहीं होती।....क्रोध प्रेम को नहीं मार सकता,....वह....वह तो घृणा से ही मर सकता है। **(कुछ रुककर)** और हिन्दोस्तान में क्या हो रहा है ?

कुतिया—भों ! भों ! भों !

शान्तिप्रिय—हाँ, हम 'भो भो सहिष्णुता !' 'भो भो सहिष्णुता !' कहकर भोंके तो बहुत, लेकिन....लेकिन दरअसल कर क्या रहे हैं ? और हम मिनिस्टर कुछ भी नहीं कर रहे हैं, तो हमारे मातहत अहलकार क्या कर रहे हैं ?....दिखावे के लिए हम कभी-कभी कुछ मामलों की जाँच भी कर लेते हैं, किसी-किसी को छोटी-मोटी सज़ाएँ भी दे देते हैं, हिन्दू-मुस्लिम एकता के भाषण तो रोज़ ही दिया करते हैं, पर....पर ज्यादातर तो हम जान-बूझकर उस तरफ़ से आँखें ही बन्द रखने की कोशिश करते रहते हैं।....और....और यह सब, रुबी, हमें मालूम हुआ है अमरनाथ और महफ़ूज़खाँ के हिन्दोस्तान के इस दौरे से जो वे कुछ मुसल्मानों के साथ कर रहे हैं। ....तभी....तभी तो हिन्दोस्तान को छोड़-छोड़कर कई मुसल्मान जा रहे हैं।....बिना अजहद तकलीफ़ के कोई

अपना वतन और अपनी पुश्तैनी जायदाद छोड़कर कहीं जाता है ?

[मिस दुर्गा का एक हाथ में काग़ज़ लिये हुए जल्दी से प्रवेश। शान्तिप्रिय मिस दुर्गा को देखकर खड़े हो आगे बढ़ता है।]

शान्तिप्रिय—रूबी ! गो अवे, गो अवे, फ़ार सम टाइम।

[कुतिया जाती है।]

दुर्गा—(आगे बढ़कर अपने हाथ के काग़ज़ शान्तिप्रिय को देते हुए) लीजिए, यह हमारे लाहौर के प्रतिनिधि की गोपनीय रिपोर्ट।

[शान्तिप्रिय काग़ज़ लेकर सरसरी तौर पर उसे देखता है। दुर्गा शान्तिप्रिय की ओर देखती रहती है। कुछ देर निस्तब्धता।]

शान्तिप्रिय—(अत्यन्त आश्चर्य से) अच्छा, हिन्दोस्तान पर मुस्लिम हमले की तैयारी ! विदेशी मुस्लिम राज्यों की पाकिस्तान की सरकार को मदद !

दुर्गा—(एक कुर्सी पर बैठते हुए) और मुसल्मानों का पक्ष लीजिए।

[शान्तिप्रिय भी दुर्गा की नज़दीक की कुर्सी पर बैठ जाता है। उसका सिर झुक जाता है। कुछ देर निस्तब्धता।]

दुर्गा—(लम्बी साँस लेकर) अन्त में वही हुआ न, जिसका मुझे भय था। जिस दिन से प्रान्तों को पृथक होने का अधिकार रहे, यह आन्दोलन चला, उसी दिन से मुसलमानों के पैन इस्लामिज़्म की भावनाओं के कारण मुझे इस बात का डर था। हिन्दू संघ-राज्य की बागडोर सँभालने के पूर्व मैंने आपसे कहा था कि यदि अधिकार हमारे हाथ में आया तो हम हर प्रकार से सहिष्णु रहेंगे, मुसल्मानों को भी समृद्धिशाली बनाने का प्रयत्न करेंगे। हमारी सहिष्णुता में कोई कोर-कसर नहीं रही, पाकिस्तान में हिन्दू जनता पर नाना प्रकार के अत्याचार होने पर भी नहीं। हिन्दू-साम्राज्यों ने सब धर्मों को सम-दृष्टि से देखा है, उसी पुरानी परम्परा के अनुसार हमने मुसल्मानों की अनेक मस्जिदों और उनकी धार्मिक संस्थाओं को राज्य से सहायता भी दी, पाकिस्तान में यह न होने पर भी।

उन्हें समृद्धिशाली बनाने में भी हमारी सरकार जो सहायता दे सकती थी, वह देती रही। हिन्दुस्थान में मुसल्मानों को कष्ट दिये जा रहे हैं, यह मिथ्या दोषारोपण है, मिथ्या से मिथ्या, और इसलिए जिससे पाकिस्तान की सरकार को हम पर इस प्रकार का आक्रमण करने का अवसर मिल जाय। **(कुछ रुककर)** शान्तिप्रिय जी, मैं आक्रमण से डरती नहीं हूँ। भारत माता के सच्चे पुत्र अब जाग गये हैं। उनकी संख्या इतनी बड़ी है कि यदि अफ़ग़ानिस्तान, इराक़, ईरान और तुर्की सब मिलकर भी पाकिस्तान को सहायता दें तो भी इस युद्ध में हमारी हार सम्भव नहीं। अरे ! यह युद्ध तो समाप्त हो जायगा, पंजाब में ही। वहीं के सिक्ख और हिन्दू इन म्लेच्छों को समाप्त कर देंगे, मुझे दुख होता है कुछ हिन्दुओं की मनोवृत्ति पर। अमरनाथ आज भी उस महफ़ूज़ख़ाँ और कुछ मुसल्मानों के साथ अपने....हिन्दुओं के राज्य के विरुद्ध देश में घूम रहे हैं यह पता लगाने कि राज्य की ओर से मुसल्मानों पर क्या-क्या अत्याचार हो रहे हैं ? ओह !....ओह !....क्या....क्या कहूँ मैं ?....ऐसे.... ऐसे हिन्दुओं को कदाचित् नरक में भी स्थान न मिलेगा !

[कुछ देर सन्नाटा।]

शान्तिप्रिय—(धीरे-धीरे) पाकिस्तान वाले अगर हिन्दोस्तान पर हमला करेंगे तो मैं भी भारत माता के एक पुत्र की हैसियत से देश की रक्षा के लिए अपना ख़ून बहा दूँगा, लेकिन....लेकिन, मिस दुर्गा, आप ....आप जिस सहिष्णुता और मुसल्मानों की समृद्धि बढ़ाने की बात करती हैं, वह....वह तमाम काम हमने सिर्फ़ दिखावे के लिए किया है .....

दुर्गा—(उत्तेजित होकर ऊँचे स्वर से) दिखावे के लिए !

शान्तिप्रिय—जी हाँ, चाहे हमारी दिखावे की मंशा न रही हो, लेकिन हमें जो करना चाहिए था वह हम कर नहीं सके; बल्कि हमारे अहल्कारों ने हमारे कार्यक्रम के खिलाफ़....

दुर्गा—(**बीच ही में**) यह आप अमरनाथ के इस दौरे के संवादों से प्रभावित होकर कह रहे हैं। (**और अधिक उत्तेजना से**) ओह ! यह अमरनाथ....

शान्तिप्रिय—सिर्फ़ अमरनाथ के दौरे के संवादों की वजह से मैं यह नहीं कह रहा हूँ। (**हाथ के काग़ज़ों को दुर्गा को देते हुए**) लाहौर की यह रिपोर्ट भी मेरी इस राय का समर्थन करती है।

दुर्गा—(**आश्चर्य से**) यह रिपोर्ट इसका समर्थन !

शान्तिप्रिय—जी हाँ, अगर हमने यहाँ के मुसलमानों की सच्ची भलाई की होती तो इस हमले की चर्चा ही न उठ सकती थी। हम....हम भी इसके लिए कम ज़िम्मेदार नहीं.....

दुर्गा—(**बीच ही में अत्यन्त उत्तेजना से**) क्या....क्या कह रहे हैं आप !

[**टेलीफ़ोन की घंटी बजती है।**]

शान्तिप्रिय—(**घूमने वाली कुर्सी पर बैठकर, रिसीवर को उठा, कान में लगा**) हलो !....हलो !....ट्रंक काल ?....कहाँ....कहाँ का ?....लाहौर....लाहौर का ?....किसका....किसका ?....आनरेबिल मिस जहाँनारा का ?....जॉइन....जॉइन प्लीज़। (**उसका मुख खिल उठता है।**)

[**दुर्गा उस कुरसी से उठकर दूसरी कुरसी पर बैठती है, जिससे उसका मुख शान्तिप्रिय की ओर हो जाता है।**]

शान्तिप्रिय—(**मुस्कराते हुए**) हलो !....हलो ! दीदी !....जी, जी....हाँ, लखनऊ से शान्तिप्रिय ही बोल रहा है।....पहचान गयीं मेरी आवाज़ ?....इतने....इतने दिनों के बाद भी नहीं भूलीं ?....मैं....मैं भूल गया ?....क्या....क्या कहूँ ?....अच्छा....अच्छा....यह कहिए, दीदी, मिज़ाज कैसा है ?....ज़िन्दा हैं ?....अच्छा।....जी हाँ, जिस्मानी तौर पर तो बिलकुल अच्छा हूँ।

....कहिए,....कहिए कैसे याद फ़र्माया आज इतने ज़माने के बाद ? **(कुछ देर रुककर, और अब उसके मुख पर अत्यधिक आश्चर्य दिख पड़ता है।)** अच्छा !....अच्छा ! आप कैबिनिट से इस्तीफ़ा दे रही हैं ?....सबब....सबब ? **(कुछ देर चुप रहने के बाद)** ओह !....ऐसा....ऐसा ? **(कुछ देर बाद लम्बी साँस लेकर रिसीवर रख देता है।)**

दुर्गा—**(अत्यन्त उत्कंठा से)** जहाँनारा केबिनिट से इस्तीफ़ा दे रही हैं ?

शान्तिप्रिय—जी हाँ।

दुर्गा—कारण ?

शान्तिप्रिय—कारण ?....कारण ये ही हिन्दू-मुसलमानों के आपसी झगड़े। और फिर उन्होंने यह भी कहा कि वे पाकिस्तान की भी कोई बहबूदी न कर सकीं। वैसी ही ग़रीबी, वैसा ही सब कुछ पाकिस्तान में अभी भी मौजूद है जैसा आज़ादी के पहले था। पाकिस्तान में फ़र्स्ट क्लास क्राइसेज़ होगी।

[चपरासी का तश्तरी में कार्ड लिये हुए प्रवेश। वह लाल रंग की वर्दी पहने है। उसके साफ़े पर सूर्य का बिल्ला है। कमर में कटार लगाये है। अभिवादन कर वह तश्तरी शान्तिप्रिय के सामने करता है।]

शान्तिप्रिय—**(कार्ड उठाकर, उसे देखते हुए)** अच्छा ? कुछ मुसलमानों का डेपुटेशन और लीडर अमरनाथ जी ! **(कुछ रुककर दुर्गा से)** आप डेपुटेशन का स्वागत करें।

दुर्गा—**(कुछ रुककर)** मैं ?....डेपुटेशन तो आपके पास आया है।

शान्तिप्रिय—जी हाँ, लेकिन....लेकिन मैं तो अब डेपुटेशन वालों में से एक होऊँगा।

[कुछ देर एक विचित्र प्रकार की निस्तब्धता।]

दुर्गा—**(अत्यन्त क्रोध से)** अच्छा....अच्छा ! तो....तो आप हिन्दुस्थान में भी फ़र्स्ट क्लास क्राइसेज़ चाहते हैं।

शान्तिप्रिय—(नीची निगाह कर) क्राइसेज़....क्राइसेज़ नहीं, लेकिन....लेकिन, मिस दुर्गा, मैंने यह तस्फ़िया उन्हीं वजूहात के सबब से किया जिनसे जहाँनारा ने। हमने देश के हिस्से नहीं चाहे थे, पर बटवारे के बाद हमने भी हिन्दू-मुस्लिम एकता की कोई कोशिश नहीं की। हिन्दोस्तान हालाँ कि पाकिस्तान के सदृश ग़रीब नहीं है, फिर भी ग़रीबों की हम कोई ख़ास भलाई न कर सके। अहलकारों का भी वही हाल है। सारी बातें क़रीब-क़रीब वैसी ही हैं जैसी आज़ादी के पहले थीं।

[दुर्गा आँखों से आग-सी बरसाती हुई शान्तिप्रिय की ओर देखती है। शान्तिप्रिय दूसरी तरफ़ देखने लगता है। चपरासी हक्का-बक्का सा कभी दुर्गा और कभी शान्तिप्रिय की ओर देखता है।]

यवनिका

उपसंहार

स्थान—दिल्ली में शान्तिप्रिय के बँगले का कमरा

समय—प्रातःकाल

[कमरा यद्यपि बैठकखाना है, पर उसकी सजावट का ढंग बिलकुल बदल गया है, न कुर्सियाँ हैं, न टेबिलें, ज़मीन पर छपी हुई खादी की जाजम बिछी है, उस पर सफ़ेद खादी की चादर से ढकी हुई गद्दी है और गद्दी पर सफ़ेद खादी की खोलियों से ढके हुए मसनद। गद्दी के निकट ही लकड़ी की एक चौकी पर टेलीफ़ोन रखा है। दरवाज़े-खिड़कियों पर खादी के रंगीन परदे पड़े हैं। शान्तिप्रिय खादी का कुरता और धोती पहने कमरे में इधर से उधर और उधर से इधर घूम रहा है। इस घूमने में उसका साथ दे रही है उसकी कुतिया रुबी। शान्तिप्रिय के हाथ में एक तार है। वह बार-बार सामने के दरवाज़े की तरफ़ देखता है, जिससे जान पड़ता है कि वह उत्कंठा से किसी की प्रतीक्षा कर रहा है। बीच-बीच में वह हाथ के तार को देख लेता है।]

शान्तिप्रिय—रुबी....रुबी, तूने भी भोंककर न जगाया। क्या....क्या कहेंगी दीदी ?....वे तो लाहौर से दौड़ी हुई आ रही हैं, और मैं....मैं स्टेशन तक न गया। इस....इस तरह सोया कि सूरज की किरण के आँखों को गुदगुदाने तक किसी चीज़ की खबर ही नहीं।....जब....जब आदमी निश्चिन्त हो जाता है तब....तब शायद इसी....हाँ, इसी तरह की समाधि की नींद आती है, न सपना, न करवट, न हरकत।....फिर....फिर दिल्ली की इस नयी गृहस्थी को जमाने....जमाने में थक भी तो गया था, रुबी ! और इतना.... इतना थका कि दीदी का यह तार....तार **(तार को पढ़ते हुए)**

'रीचिंग टु मारो मारनिंग' भी न जगा सका।....ग़नीमत यही हुई, रुबी, कि ड्राइवर मोटर ले गया।....पर....पर फिर भी क्या कहेंगी दीदी ? **(कुछ रुककर)** कह दूँगा उनसे आपके आने की ख़बर के कारण ही तो इतनी नींद आयी। दोनों बातें उसीकी वजह से हुईं—निश्चिन्तता और थकावट;....निश्चिन्तता आपके निश्चित रूप से प्राप्त होने की ख़बर से, और थकावट आपके आने के पहले इस बँगले की सजावट पूरी करने से। **(फिर कुछ रुककर)** लेकिन....लेकिन, रुबी, दीदी के आने की ख़बर तो नींद को भगा देने का कारण होना चाहिए था।.... सुना और पढ़ा तो यही है कि ऐसे मौक़ों पर नींद और भूख, दोनों ही भाग जाती हैं। **(विचार में खड़े होकर, पर तुरन्त ही फिर घूमते हुए)** हाँ, वैसी....वैसी हालत शायद उनकी....उनकी प्रतीक्षा में होती है, जिनका प्रेम उस....उस ढंग का होता है, जैसा दुर्गा का मेरे लिए था। ....बहन, माँ के मानिन्द बहन की मुहब्बत तो....तो हर, हाँ, हर हालत में शान्ति....शान्ति ही देती है, अशान्ति नहीं। **(फिर कुछ रुककर)** कितने....कितने वक़्त के बाद दीदी के दर्शन होंगे ?.... कैसा....कैसा मिलन होगा यह ?....उनकी वह मुहब्बत।.... उनकी वे बातें एक भूले हुए सपने के बतौर आज फिर आँखों के आगे, कानों के भीतर घूम और गूँज रही हैं।....हार्ट की आर्ट्रीज़ के बहते हुए खून में वीणा के तारों की सी मधुर झंकार हो रही है। **(फिर कुछ रुककर)** अशान्ति....हाँ, अशान्ति नहीं है,....फिर....फिर क्या है यह ? **(फिर कुछ रुककर)** शायद शब्द इसका वर्णन नहीं कर सकते। **(फिर कुछ रुककर)** कितना....कितना वक़्त खोया हमने इन फ़िज़ूल के झगड़ों में।....और....और हमने तो वक़्त ही खोया, पर.... पर देश ने इस बीच क्या-क्या खो दिया ?....और....और हमारा तो पुराना वक़्त लौट आया, लेकिन....लेकिन मुल्क ने जो-जो खोया है वह.....

[नेपथ्य में मोटर का बिगुल सुनायी देता है ।]

शान्तिप्रिय—(बिगुल को ध्यान से सुनते हुए, कुछ देर चुप रह) हाँ....हाँ, यह....यह तो हमारी....हमारी ही मोटर का हार्न है । **(प्रसन्नता से)** रुबी, आ....आ गयीं दीदी !

[नेपथ्य में मोटर खड़े होने की आवाज़ आती है । शान्तिप्रिय शीघ्रता से सामने के दरवाज़े की ओर बढ़ता है । रुबी दरवाज़े से बाहर निकल जाती है । शान्तिप्रिय ज्योंही एक पैर बाहर रखता है, त्योंही जहाँनारा शीघ्रता से आती हुई दिखायी देती है । उसकी वेष-भूषा भी बदल गयी है । वह अब खादी की एक मोटी साड़ी और शलूका पहने है ।]

शान्तिप्रिय—(जहाँनारा के पैरों में गिरते हुए) तो....तो आखिर ....आखिर तुम आ गयीं, दीदी !

जहाँनारा—(शान्तिप्रिय को बीच ही में रोककर हृदय से लगाते हुए) भइया, इतने....इतने दिनों तक कैसे नहीं आयी, इसी का मुझे ताज्जुब है ।

शान्तिप्रिय—(गद्गद् स्वर से) तुमने मुझे माफ़ कर दिया न, दीदी ?

जहाँनारा—(उसी तरह के स्वर में) माफ़ तो मैं तब करती, जब मैंने क़ुसूर न किया होता । तुमसे ज्यादा तो मेरा क़ुसूर है, बड़ी मैं थी ।

[दोनों अलग-अलग होते हैं ।]

शान्तिप्रिय—लेकिन, दीदी, मैं तो अभी भी क़ुसूर करता ही जाता हूँ । देखो न, तुम तो लाहौर से दौड़ी-दौड़ी आयीं और मैं तुम्हें लेने स्टेशन तक न पहुँच सका ।

जहाँनारा—(आँखें पोंछते हुए, मुस्कराकर) नींद न खुली होगी ?

शान्तिप्रिय—(आँखें पोंछकर) क्या कहूँ ?

जहाँनारा—मैं जानती हूँ तुम्हारे मिजाज को । स्टेशन पर जब न देखा, तभी समझ लिया था कि सो रहे होंगे । ऐसे मौक़ों पर तुम्हें ग़जब की नींद आती है । ज़्यादातर लोगों को ख़ुशी की कोई बात हो

जाने पर बेफ़िक्री होती है, पर तुम्हें उसका भरोसा हो जाने पर ही हो जाती है।....अभी....अभी तक भी तुम्हारा कैसा बच्चों का सा दिल है। **(कुछ रुककर)** अच्छा, आओ तो ज़रा यहाँ। **(आगे बढ़कर टेलीफ़ोन को चौकी से नीचे रखकर)** बैठो तो इस चौकी पर।

शान्तिप्रिय—**(जहाँनारा के पीछे-पीछे आकर)** क्यों, क्या होने वाला है ?

जहाँनारा—बोलो मत, जो हुक्म देती जाऊँ, करते जाओ।

शान्तिप्रिय—**(चौकी पर बैठते हुए)** इसी तरह हुक्म देती रहतीं तो यह सब थोड़े ही होता जो हुआ।

जहाँनारा—**(शलूके की जेब से एक राखी और काग़ज़ की पुड़िया निकालकर, पुड़िया खोलते हुए)** जानते हो आज है रक्षा-बन्धन।

शान्तिप्रिय—ओह ! मैं तो भूल ही गया था।

जहाँनारा—**(पुड़िया में जो कुमकुम निकला है, उसे शान्तिप्रिय के मस्तक पर लगाते हुए)** इसीलिए तो एकाएक आज पहुँच गयी।

[जहाँनारा शान्तिप्रिय के हाथ में राखी बाँधती है। शान्तिप्रिय उसके पैरों में सिर रखता है। फिर दोनों गद्दी पर बैठते हैं।]

शान्तिप्रिय—दीदी, हमारे पुनर्मिलन के लिए तुमने अच्छे से अच्छा दिन चुना। इस पवित्र-बन्धन से हम तो फिर एक हो जायँगे, लेकिन हमारे ही गुनाहों से देश....देश के जो टुकड़े हुए हैं, इनका....इनका एकीकरण अब कैसे....कैसे होगा ? हमारे इस पाप का प्रायश्चित...

जहाँनारा—**(गम्भीरता से)** हाँ, यह बहुत बड़ा सवाल है। हमारे पाप का प्रायश्चित आसान नहीं है। जिन्होंने मुल्क के टुकड़े कराये हैं, वह....वह भी अब अगर उसे मिलाना चाहेंगे तो भी कामयाबी आसानी से न होगी,....मुश्किल....बड़ी मुश्किल पड़ेगी। सचमुच भइया, हमने गुनाह....बड़े से बड़ा गुनाह किया है। पीरबख्श की वज़ारत

तो अब नहीं टिक सकती। शायद उनका दिल भी बदला है और वह मुल्क के इस हिस्से होने के खिलाफ़ भी कुछ कहेंगे।

शान्तिप्रिय—(कुछ आश्चर्य से) अच्छा !

जहाँनारा—लेकिन इतने पर भी मुल्क को फिर से एक करने में कहाँ तक कामयाबी होगी, यह देखना है। भइया, ज़हर मुँह से नीचे उतर कर तमाम जिस्म में फैल गया है। जिन्होंने ज़हर दिया था, उनके लिए भी उसका इलाज करना आसान चीज़ नहीं।

शान्तिप्रिय—वज़ारत तो मिस दुर्गा की भी नहीं रहना है, पर इससे....इससे भी....

जहाँनारा—भइया, मुल्क के हिस्से करने की हलचल में हम पेशक़दमी वालों में से थे। उसे फिर से मिलाने की कोशिश में सिर्फ़ पेशक़दमी देने से काम न चलेगा, हमें अपनी क़ुर्बानियाँ करनी होंगी। पेशक़दमी करने में हमें सिर्फ़ अपना पसीना बहाना पड़ा था, अब बहाना बड़ेगा अपना खून। **(कुछ रुककर)** इस सारे मामले पर हमें अमरनाथ जी से बात कर एक पूरा प्रोग्राम तैयार करना होगा।

शान्तिप्रिय—उनसे और महफ़ूज़खाँ से आज शाम को हुमायूँ के मक़बरे पर मेरा मिलना तय हुआ है। इन दोनों ने मुल्क के भावी स्वरूप के मुताल्लिक़ गान्धीवाद और साम्यवाद दोनों का सम्मेलन कर एक नया स्कीम बनाया है, जिसके अन्दर मुल्क का फिर से एकीकरण भी आ जाता है।

जहाँनारा—(प्रसन्नता से) बड़ी खुशी की बात है। मैं भी आज शाम को वहाँ चलूँगी। **(कुछ रुककर)** भइया, याद है जिस दिन तुम पहले-पहल दिल्ली आये थे, उस दिन शाम को भी हम हुमायूँ के मक़बरे को ही गये थे।

शान्तिप्रिय—(विचारते हुए) लेकिन उस दिन मेरा आना ठीक मुहूर्त में नहीं हुआ था, दीदी; उसका क्या नतीजा निकला ?

जहाँनारा—**(मुस्कराकर)** पर....पर आज तो रक्षाबन्धन है, इसीलिए तो मैं ठीक मुहूर्त देखकर आयी हूँ।

[दो नौकरों के सिर पर जहाँनारा का सामान आता है। आगे-आगे चपरासी है। उसके हाथ में गंगाराम का पिंजरा है। सामान फ़र्श पर रखा जाता है और पिंजरा भी। चपरासी और नौकर जाते हैं।]

तोता—आवर लाइफ़ इज़ ए रैग्युलर फ़ीस्ट !

[जहाँनारा और शान्तिप्रिय पहले तोते की तरफ़ देखते हैं फिर एक दूसरे की ओर देखने लगते हैं।]

शान्तिप्रिय—आवर लाइफ़ इज़ ए रैग्युलर फ़ीस्ट !

जहाँनारा—**(आँखों में आँसू भरकर)** हाँ, बहुत....बहुत दिन के बाद वह....वह रैग्युलर फ़ीस्ट....

यवनिका

समाप्त